श्रीजैनसंस्कारविधि

समस्त जैनोंके हितार्थ

आचारदिनकर प्रकरण उपरसे

पंडित मनसुखलाल नेमचंदके पास

हिन्दी भाषानुवाद करायके

पंडित दयालचंद अमरचंदजीने

प्रकाशित किया ।

मुंबई.

निर्णयसागर प्रेस.

विक्रम सं १९६३ सन १९०७ वीर सं २४३३

प्रस्तावना.

अत्यंत आनंदकी वार्ता हे की ज्ञान दर्शन और चारित्र, वा देव गुरु और धर्म यह रत्नत्रयीके अवचक अवध्य साधनसे अनेकानेक जव्यगण स्वसिद्धी साध्यको प्राप्त हुवे होते हे और होंगे क्योंकी ज्ञानदर्शनचारित्राणि मोक्षमार्गः यह तत्वार्थका प्रथम और परम श्रेयस्कर सूत्र हे.

ज्ञान दर्शन और चारित्रकी साधनाके अनेकानेक ग्रंथ प्रकाशित होगए हे देव गुरु धर्म तत्व त्रयकी प्राप्तिके अनेकानेक ग्रंथ प्रकाशित हुवे और होते हें उनमें जैनसंस्कारविधि यहजी एक विशेष हे

सद्धर्मकी साधनतामें मिथ्यात्व क्रियाका सर्वथा त्याग होना चहिये जो यह ग्रंथका प्रयोजन हे. दिलगिरीका विषय है की जैनलोग जैन सोलाहि सस्कार मोजुद उतेजी जैनसस्कार करनेमें पश्चात् रहे हे मिथ्यात्वीय रीति बिलकुल लुप्त होके सर्वत्र जैन लोगोंमें जैनसस्कारविधि प्रमाण सस्कार हो यह प्रकाशित करनेका प्रकाशकका उद्देश हे. यह परिपूर्ण जैनसस्कार हमने आचारदिनकर ग्रथके उपरसे यथायोग्य जापातर लिखाया है जैसा कि "जैनतत्त्वप्रसाद" श्रीमन्मुनिमहाराज श्रीआत्मारामजीविरचित है उससेजी मि-
,। करके यथार्थ जापातर तयार करके प्रकाशित किया है
।थापि मतिविभ्रमके दोपसें जाणते अजाणते यथाकथचित्
एक रह गई होय तो सज्ञनोसं प्रार्थना हे की गुरु गमतासें
३ ारके याचे और सन्यतापूर्वक हमको दिग्दर्शन करावें जि-
३४ आयदे आवृत्तिमे उनकी सुधारण हो शके
३५
३६ प्रकाशकः-मुंबई.

जैनसंस्कारविधिकी अनुक्रमणिका.



॥ अथ जैनसंस्कार विधि ॥

॥ अथ षोडश संस्कार प्रारंभ ॥

तत्त्व ज्ञान मयो लोके, य आचारं प्रणीतवान् ॥
केनापि हेतुना तस्मै, नम आद्याययोगिने ॥
गर्भाधानं पुंसवनं जन्मचन्द्रार्कदर्शनम् ॥
क्षीराशनं चैव षष्ठी तथा च शुचि कर्म च ॥
तथा च नामकरणमन्नप्राशनमेव च ॥
कर्णवेधो मुण्डनं च तथोपनयनं परम् ॥
पाठारम्भो विवाहश्च व्रतारोपोन्तकर्म च ॥
अमी षोडशसंस्कारा गृहिणां परिकीर्त्तिताः ॥

भावार्थः–गर्भाधान १, पुंसवन २, जन्म ३, चंद्र सूर्यदर्शन ४, क्षीराशन ५, षष्ठी ६, शुचिकर्म ७, नामकरण ८, अन्नप्राशन ९, कर्णवेध १०, मुंडन ११, उपनयन १२, विद्यारंभ १३, विवाह १४, व्रतारोप १५, अंतकर्म १६ येह सोलां संस्कार गृहस्थीको करने चहिये व्रतारोपसंस्कारको वर्जके, शेष १५ पंदरां संस्कार, साधुउने नही करणे.

संस्कार कराने वाले गुरु विषे

अर्हन्मंत्रोपनीतश्च ब्राह्मणः परमार्हतः ॥
क्षुल्लको वाऽऽप्तगुर्वाज्ञो गृहिसंस्कारमाचरेत् ॥ १॥

अर्थ.–अर्हन्मंत्रोपनीत परमश्रावक, ब्राह्मण, और प्राप्त करी है गुरुकी आज्ञा जिसने ऐसा क्षुल्लक

(श्रावक विशेष) जिसका स्वरूप आगें लिखेंगे. इन दोनोंमेंसे कोइ एक गृहस्थोंको संस्कार करावे.

प्रथम गर्भाधान संस्कारका विधि.

जब गर्भधारण को पांच मास होवे, तव गर्भाधानविधि, गृहस्थगुरु जैन ब्राह्मणों ने कराना. गर्भाधान १, पुंसवन २, जन्म ३, नाम ४ और अंत ५, इन पांच संस्कारोंमें अवश्य कर्मके वास्ते मास दिनादिकोंकी शुद्धि न देखनी. । श्रवण, हस्त, पुनर्वसु, मूल, पुष्य, मृगशीर्ष, येह नक्षत्र और रवि, मंगल, बृहस्पति, येह वार पुंसवनादिकर्मोंमें कहे हैं. । ईसवास्ते पांचमे मासमें शुभ तिथि, वार, नक्षत्रके दिनमें पतिको बलवान् चंद्रादि देखकर, देशविरतिगुरु जिसने स्नान करा है, चोटी बांधी है, उपवीत और उत्तरासंग धारण करा है, श्वेतवस्त्र पहिना है, पंचकक्षा धारण करा है, मस्तकमें चंदनका तिलक करा है, सुवर्णमुद्रासहित दक्षिणकर सावित्रीक प्रकोष्ठबद्ध पंचपरमेष्ठि मंत्रोद्दिष्ट पांच ग्रंथियुक्त दर्भसहित कौसुंभ सूत्रका कंकण है जिसके, तथा जिसने रात्रिमें ब्रह्मचर्य पाला है, जिसने उपवास, आचाम्ल, निर्विकृति, एकाशनादि प्रत्याख्यान करा है, संप्राप्तकरी है आजन्मसें यतिगुरुकी आज्ञा जिसने, ऐसे पूर्वोक्त विशेषणयुक्त, जैनब्राह्म

ण, अथवा क्षुल्लक, गृहस्थोंके संस्कारकर्म करणेके योग्य होता है. ॥

उक्तं च ॥

शांतो जितेंद्रियो मौनी दृढसम्यक्त्ववासनः ॥

अर्हत्साधुकृतानुज्ञः कुप्रतिग्रहवर्जितः ॥

भाषार्थः—शांत, जितेंद्रिय, मौनी, दृढसम्यक्त्ववान्, अर्हन् और साधुकी आज्ञा करनेवाला, बुरा दान न लेवे, क्रोध मान माया लोभका जीपक, कुलीन, सर्व शास्त्रोंका जानकार, अविरोधी, दयावान्, राजा और रंकको समदृष्टिसें देखनेवाला, प्राणोंके नाश होते भी अपने आचारको न त्यागे सुंदर चेष्टावाला होवे, अंगहीन न होवे, सरल होवे, सदा सद्गुरुकी सेवा करने वाला होवे, विनीत, बुद्धिमान्, क्षांतिमान्, कृतज्ञ, दोप्रकारसें द्रव्यभावसे शुचि होवे; गृहस्थोके संस्कार करनेमे ऐसा गुरु चाहिये

सो पूर्वोक्त विशेषणविशिष्ट गुरु, गर्भाधान कर्ममें प्रथम गर्भवंतीके पतिकी आज्ञा लेवे । और सो गर्भवंतीका पति, नखसें लेके शिखा (चोटी) पर्यंत स्नान करके, शुचि वस्त्र पहिनके निज वर्णानुसार उपवीत उत्तरीय वस्त्र उत्तरासंग करके, प्रथम शास्त्रोक्त बृहत्स्नात्रविधिसें अर्हत्प्रतिमाका स्नात्र करे. और तिस स्नात्रके पाणीको शुभ भाजनमे स्थापन करे. । तिसपीछे शास्त्रोक्त विधिसें गंध, पुष्प, धूप,

दीप, नैवेद्य, गीत, वादित्रोंकरके जिनप्रतिमाकी पूजा करे. । पूजाके अंतमें गुरु, गर्नवंतीको, अविध वायोंके हाथोंकरी स्नात्रोदककरके सिंचनरूप अभिषेक करवावे. । पीछे सर्व जलाशयोंके जलोंके जलों कों एकत्र मिलाके, सहस्रमूलचूर्ण तिसमें प्रक्षेप करके, तिस जलको शांतिदेवीके मंत्रकरके, अथवा शांतिदेवीके मंत्रगर्भित स्तोत्रकरके मंत्रे. ॥

शांतिदेवीमंत्रो यथा ॥

"ॐ नमो निश्चितवचसे । नगवते । पूजामर्हते । जयवते । यशस्विने । यतिस्वामिने । सकलमहासंपत्तिसमन्विताय । त्रैलोक्यपूजिताय । सर्वासुरामरस्वामिपूजिताय । अजिताय । नुवनजनपालनोद्यताय । सर्वडुरितौघनाशनकराय । सर्वाशिवप्रशमनाय । डुष्टग्रहनूतपिशाचशाकिनीप्रमथनाय । यस्येतिनाममंत्रस्मरणतुष्टा । नगवती । तत्पदनक्ता । विजयादेवी ॐ ह्रीं नमस्ते । नगवति । विजये । जय २ । परे । परापरे । जये । अजिते । । अपराजिते । जयावहे । सर्वसंघस्य नद्रकल्याणमंगलप्रदे । साधूनां शिवतुष्टिपुष्टिप्रदे । जय २ नव्यानां कृतसिद्धे । सत्वानां निर्वृतिनिर्वाणजननि । अनयप्रदे । स्वस्तिप्रदे नक्तानां जंतूनां शुनप्रदानाय नित्योद्यते । सम्यग्दृष्टीनां धृतिरतिमतिबुद्धिप्रदे । जिनशासनरतानां शांतिप्रणतानां जनानां श्रीसंपत्कीर्त्तियशोव

र्द्धिनि । सलिलात् रक्ष २ । अनिलात् रक्ष २ । विषात् रक्ष २ । विषधरेभ्यो रक्ष २ । दुष्टग्रहेभ्यो रक्ष २ । राज भयेभ्यो रक्ष २ । रोग भयेभ्यो रक्ष २ । रण भयेभ्यो रक्ष २ । राक्षसेभ्यो रक्ष २ । रिपुगणेभ्यो रक्ष २ । मारिभ्यो रक्ष २ । चौरेभ्यो रक्ष २ । ईतिभ्यो रक्ष २ । श्वापदेभ्यो रक्ष २ । शिवं कुरु २ । शांतिं कुरु २ । तुष्टिं कुरु २ । पुष्टिं कुरु २ । स्वस्ति कुरु २ । भगवति । गुणवति । जनानां शिवशांतितुष्टिपुष्टि स्वस्तिं कुरु २ । ॐ नमो ॡु ह्रः यः क्षः ह्रीँ फुट् २। स्वाहा " ॥ इति ॥

शांतिदेवी स्तोत्र ॥

"ॐ नमो भगवतेऽर्हते । शांतिस्वामिने । सकलातिशेषकमहासंपत्समन्विताय । त्रैलोक्यपूजिताय । नमः शांतिदेवाय । सर्वामरसमूहस्वामिसंपूजिताय । भुवनपालनोद्यताय । सर्वदुरितविनाशनाय । सर्वाशिवप्रशमनाय सर्वदुष्टग्रहभूतपिशाचमारिडाकिनी प्रमथनाय । नमो भगवति । विजये । अजिते । अपराजिते । जयंति । जयावहे । सर्वसंघस्य । भद्रकल्याणमंगलप्रदे । साधूनां शिवशांतितुष्टिपुष्टिस्वस्तिदे । भव्यानां सिद्धिवृद्धिनिवृतिनिर्वाणजननि। सत्वानां अभयप्रदाननिरते । भक्तानां शुभावहे । सम्यग्दृष्टीनां धृतिरतिमतिबुद्धिप्रदानोद्यते । जिनशासननिरतानां श्रीसंपत्यशोवर्द्धिनि । रोगजलज्वलनविष

विषधरदुष्टज्वरव्यंतरज्वरराक्षसरिपुमारि चौरेतिश्वा पदोपसर्गादिन्नयेभ्यो रक्ष २। शिवं कुरु २। शांतिं कुरु २। तुष्टिं कुरु २। पुष्टिं कुरु २। स्वस्ति कुरु २। न्न गवतिश्रीशांतितुष्टिपुष्टिस्वस्ति करु २। ॐ नमो नमो ह्रुँ ह्रः यः क्षः ह्रीँ फट् २ स्वाहा" ॥ इति ॥

इस स्तोत्र करके अथवा पूर्वोक्त मंत्र करके सहस्र मूल चूर्ण सर्व जलाशयोंके जलको सातवार मंत्रके, पुत्रवाली सधवा स्त्रीयोंके हाथेंकरी मंगलगीतोंके गातेहुए गर्न्नवंतीको स्नानकरावे, सुगंधका अनुलेपन करी सदश वस्त्र (विवाह समय पहिरनेका वस्त्र) प हिराके, संपत्तिअनुसार आन्नरण धारण करवाके, पतिके साथ वस्त्रांचलका ग्रंथिबंधन करके, पतिके वामेपासे शुन्न आसनके ऊपर स्वस्तिक मंगलकरके, गर्न्नवंतीको बिठलावे ग्रंथियोजनमंत्रो यथा ॥

ॐ अर्हं। स्वस्ति संसारसंबंधबद्धयोः पतिन्नार्ययोः॥
युवयोरवियोगोस्तु न्नववासांतमाशिषा ॥ १ ॥

विवाहको वर्जके, सर्वत्र इसीमंत्रकरके दंपतीका (स्त्रीन्नर्त्ताका) ग्रंथिबंधन करना.। तदपीछे गुरु, तिस गर्न्नवंतीके आगे शुन्न पट्टे ऊपर पद्मासन लगाके बैठके, मणिस्वर्णरूप्यताम्रपत्रके पात्रोंमें जिनस्नात्रके जलसंयुक्त तीर्थोदकको स्थापन करके, आर्यवेदमंत्र पढके, कुशाग्र बिंदुयोंकरके, गर्न्नवंतीको सींचन करे.

आर्यवेदमंत्रो यथा ॥

"ॐ अर्हं । जीवोसि । जीवतत्त्वमसि । प्राणसि । प्राणोसि । जन्मासि । जन्मवानसि । संसार्यसि । संसरन्नसि । कर्मवानसि । कर्मबद्धोसि।नवभ्रांतोसि। नवविभ्रमिषुरसि । पूर्णाङ्गोसि । पूर्णपिण्डोसि । जातोपाङ्गोसि । जायमानोपांगोसि । स्थिरो नव नन्दिमान् नव । वृद्धिमान् नव । पुष्टिमान् नव । ध्यातजिनो नव । ध्यातसम्यक्त्वो नव । तत्कुर्या येन न पुनर्जन्मजरामरणसंकुलं संसारवासं गर्नवासं प्राप्नोषि । अर्हं ॐ ॥"

इस मंत्रकरके दक्षिणहाथमें धारण करे कुशाग्र तीर्थोदक बिंदुयोंकरके गर्नवंतीके शिर और शरीर ऊपर सातवार सींचन करे. । तदपीठे पंच परमेष्ठिमंत्र पठनपूर्वक दंपतीको आसनसें उठायकरके, जिनप्रतिमाके पास लेजाके शक्रस्तव पाठ करके जिनवंदन करवावे । यथाशक्ति फलमुद्रा वस्त्र स्वर्णादि जिनप्रतिमाके आगे ढोवे तदपीठे गर्नवंती स्वसंपत्तिके अनुसार वस्त्रानरण द्रव्य सुवर्णादिदान गुरुको देवे. । तदपीठे गुरु, पतिसहित गर्नवंतीको आशीर्वाद देवे यथा ॥

ज्ञानत्रयं गर्नगतोपि विंदन् संसारपारैकनिबद्धचित्त· ॥ गर्नस्य पुष्टिं युवयोश्च तुष्टिं युगादिदेवः प्रकरोतुनित्यम् ॥ १ ॥

तदपीछे आसनसें उठायके ग्रंथिवियोजन करे. ग्रंथिवियोजनमंत्रो यथा ॥

ॐ अर्हं। ग्रंथौ वियोज्यमानेऽस्मिन् स्नेहग्रंथिः स्थिरोस्तु वां॥ शिथिलोस्तु नवग्रंथिः कर्मग्रंथिदृढीकृतः॥१॥

इस मंत्रकरके ग्रंथि खोलके धर्मागारमें दंपतीको लेजाके गुरु को वंदना करवावे, और साधुयोंको निर्दोष भोजन वस्त्र पात्रादि दिलवावे. ॥

तदपीछे स्वकुलाचारयुक्तिकरके कुलदेवता, गृहदेता, पुरदेवतादि पूजन जानना.

॥ जैन वेद मंत्रोत्पत्ति ॥

यहां जो कहाहै कि,जैनवेदमंत्र;सो कथन करतेहैं. यथा आदिदेव (ऋषभदेव) का पुत्र,अवधिज्ञानवान्, आदिचक्री, भरत राजा,श्रीमदादिजिनरहस्योपदेशसें प्राप्त किया है सम्यक् श्रुतज्ञान जिसने—सो भरत राजा—सांसारिक व्यवहारसंस्कारकी स्थितिकेवास्ते, अर्हन्की आज्ञा पाकरके, धारे हैं ज्ञानदर्शनचारित्ररत्नत्रय, करणा करावणा अनुमतिसें त्रिगुणरूप तीनसूत्र—मुद्राकरके चिन्हितवक्षःस्थलवाले ब्राह्मणोंको (माहनोंको) पूज्यतरीके मानता हुआ, और तिस अवसरमें अपनी वैक्रियलब्धिसें चार मुखवाला होके, चार वेदोंको उच्चारण करता भया. तिनके नाम—संस्कारदर्शन १, संस्थापनपरामर्शन २, तत्त्वावबोध ३, विद्याप्रबोध ४, । सर्व नयवस्तु कथन

करनेवाले इन चारां वेदोंको, माहनोंको पठ न कराता हुआ. । तदपीछे वह माहन, सात तीर्थं करोंके तीर्थतक अर्थात् चंद्रप्रजतीर्थंकरके तीर्थतक सम्यक्त्वधारी रहें, और आर्हतश्रावकोंको व्यवहार दिखाते रहें, तथा धर्मोपदेशादि करते रहें । तदपीछे नवमे तीर्थकर श्रीसुविधिनाथपुष्पदंतके तीर्थके व्यवछेद हुए, तिस बीचमे तिन माहनोंने परिग्रहके लोजी होके, स्वच्छंदसे तिन आर्यवेदों कि जगे कुठकसुनी सुनाइ वातो लेके नवीन श्रुतियां रचीं, तिनमें हिंसक यज्ञादि और अनेक देवतायोंकी स्तुति (प्रार्थना) रची (क्रमसें ऋग्, यजुः साम, अथर्व,) नाम कल्पना करके, मिथ्यादृष्टिपणेको प्राप्तकरे तव व्यवहारपाठसे पराङ्मुख अर्थात् परमार्थरहित मनःकल्पित हिसक यज्ञप्रतिपादकशास्त्रोंसें पराङ्मुख, ऐसे श्रीशीतलनाथादिके साधुयोंने तिन हिंसक वेदोंको छोरुके, जिनप्रणीत आगमकोही प्रमाणजूत माने । तिन व्राह्मणोमेंसे जी, जिन माहनोंने (व्राह्मणोंने) सम्यक्त्व न त्यागन करा, अर्थात् जे माहन पुन: तीर्थंकरोंके उपदेशसे सम्यक्त्व पाके दृढ रहे,तिनोके संप्रदायमें आजजी जरत प्रणीत वेदका लेश कर्मांतरव्यवहार गत सुनते हैं; सोही यहां कहते हैं

यत उक्तमागमे ॥
सिरिभरहचक्कवट्टी आरियवेयाण विस्सुउ कत्ता ॥
माहणपढणच्छमिणं कहिअं सुहझाणववहारं ॥ १ ॥
जिणतित्थे वुच्छिन्ने मिछत्ते माहणेहिं ते ठविया ॥
असंजयाण पूया अप्पाणं कारिया तेहिं ॥ २ ॥

व्याख्या;—श्रीभरतचक्रवर्त्ती आर्यवेदोंका कर्त्ता प्रसिद्ध है. भरतने आर्यवेद किसवास्ते करे, माहनोंके पढनेके वास्ते, शुभ ध्यानकेवास्ते, और जगत्व्यवहार केवास्ते. । जिन तीर्थंकरके तीर्थके व्यवछेद हुए वह आर्यवेद तिन माहनोंने मिथ्यामार्गमें स्थापन करे, और असंयतिह्नोके तिनोंने अपनी पूजा जगत्में करवाइ इन वेदोंका विशेष निर्णय जैनतत्त्वादर्शग्रंथसे जानना ॥

इस गर्भाधानसंस्कारमें इतनी वस्तु चाहिये ॥ पंचामृत स्नात्र १, सर्वतीर्थोदक २, सहस्रमूलचूर्ण ३, दर्भ ४, कौसुंभसुत्र ५, द्रव्य ६, फल ७, नैवेद्य ८, सदशवस्त्र दो (चुनडी) ९, शुभआसन १०, शुभपट्ट ११, स्वर्णताम्रादिभाजन १२, वादित्र १३, पतिवाली स्त्रीयां १४ और गर्भवंतीका पति १५,

इति गर्भाधान संस्कार विधि.

॥ अथ पुंसवन संस्कार वर्णन ॥

गर्भसें आठ मास व्यतीत हुए, सर्व दोहदोंके

पूर्ण हुए, सांगोपांग गर्भके उत्पन्न हुए, तिसके श रीरमें पूर्णीजाव प्रमोदरूप स्तनोंमें दूधकी उत्पत्तिका सूचक, पुंसवन संस्कार करना । मूल, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, मृगशिर, श्रवण, येह नक्षत्र; और मंगल, गुरु आदित्य, येह वार, पुंसवन कर्ममें संमत है । रिक्ता दग्धा, क्रूरा, तीन दिनको स्पर्शनेवाली, अवम् (टूटी तिथी) षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी, अमावास्या, ये तिथि यां वर्जके, गंमांत और अशुज नक्षत्रवर्जित, पूर्वोक्त वारनक्षत्रसहित दिनमे पतिको चन्द्रमाके बल हुए, पुंसवनका आरंज करे, सो ऐसें है । पूर्वोक्त वेष,और स्वरूपवाला गुरु पतिके समीप हुए, अथवा न हुए.ग र्जाधान कर्मके अनंतर, जो वस्त्रवेष औरकेशवेष धा रण करे हैं, तिसही वस्त्रवेष और केशवेषवाली गर्जवं तीको, रात्रिके चौथे प्रहरमे तारेसहित आकाशहोवे तब मंगलगीतगानपूर्वक आजरणसहित अविधवा स्त्रीयोंकरके,अन्यग उद्धर्त्तन जलाजिषेकोंकरके स्नान करावे. । तदपीछे प्रजात हुए नवीन वस्त्र गंधमा ल्यनूषित गर्जवंतीको साक्षिणी करके, घरदेहरामें अर्हत्प्रतिमाको तिसका पति, वा तिसका देवर, वा तिसके कुलका पुरुष, वा गुरु, आप पंचामृतकरके बृहत्स्नात्रविधिसें स्नात्र करावे. । तदपीछे सहस्रमू लीस्नात्र प्रतिमाको करे. । पीछे तीर्थोदक स्नात्रकरे पीछे सर्वस्नात्रोदकोको सुवर्णरूप्यताम्रादि जाजनमें

स्थापन करके, शुभासन ऊपर बैठी हुई साक्षीभू त करे हैं पतिदेवरादि कुलज जिसने, ऐसी गर्भवं तीको, दक्षिणहस्तमें कुशा धारण करके, कुशाग्रविं दुयोंकरके स्नात्रोदकसें गर्भवंतीके शिरस्तनउदरको सिंचन करता हुआ, इस वेदमंत्रको पढे. ॥

"॥ ॐ अर्हं । नमस्तीर्थंकरनामकर्मप्रतिबंधसंप्रा प्तसुरासुरेंद्रपूजायार्हते । आत्मन् त्वमात्मायुः कर्मबं धप्राप्यं मनुष्यजन्मगर्भावासमवाप्नोषि तद्भव जन्म जरामरणगर्भवासविच्छित्तये प्राप्तार्हद्धर्मः अर्हद्भक्तः सम्यक्त्वनिश्चलः कुलभूषणः सुखेन तव जन्मास्तु । भवतु तव त्वन्मातापित्रोः कुलस्याभ्युदयः । ततः शां तिः पुष्टिः तुष्टिर्वृद्धिर्ऋद्धिः कांतिः सनातनी अर्हंॐ॥

इस वेदमंत्रको आठवार पढता हुआ, गर्भवंती को अभिषेचन करे. । तदपीछे गर्भवंती आसनसें ऊठकें सर्वजातिके आठ २ फल, स्वर्णरूप्यमयी मु द्रा आठ, प्रणाम (नमस्कार) पूर्वक जिनप्रतिमाकें आगे ढोवे. । तदपीछे गुरुकें चरणोंको नमस्कार क रके, दो वस्त्र, सोनेरूपेकी आठ मुद्रा, और तंबो लसहित आठ सुपारी गुरुको देवे. । तदपीछे धर्मा गार (पोषधशाला) में जाकर साधुयोंको वंदना नमस्कार करे, और साधुयोंको यथाशक्तिसें शुद्ध अन्न वस्त्र पात्र देवे. । कुलवृद्धोंको नमस्कार करे. ॥ तदपीछे स्वकुलाचारकरकें कुलदेवतादिपूजन जानना.

पंचामृत १, स्नात्रवस्तु २, स्त्रीके नवीन वस्त्र ३, नवीन वस्त्रयुगल ४, स्वर्णकी आठ मुद्रा ५ रूपेकी आठ मुद्रा ६, सोनेकी ७, और रूपेकी ७ एवं षोडश (१६) मुद्रा और ७, फलकी जाति ७, मूलसहित दर्भए, तांबूल १०, सुगंध पदार्थ ११, पुष्प १२, नैवेद्य १३, सधवा स्त्रीयां १४, गीत मंगल १५, इतनी वस्तु पुंसवनसंस्कारमें चाहिये. ॥

इति द्वितीय पुंसवन संस्कार विधि

अथ तृतीयं जन्मनामा संस्कार वर्णनं ॥

जन्मसमय हुए, ज्योतिषि सहितगुरु,सूतिकागृह के निकट गृहमें एकांतस्थानमें जहां रौला न सुनाइ देवे, स्त्री, बाल, पशु, जहां न आवे, तहां घटियन्त्र (घडी–कलाक) सहित उपयोगसहित चित्तवाला होकर, परमेष्टिजापमें तत्पर हुआ थका रहे । यहां पहिलां तिथि वार नक्षत्रादि देखना न चाहिये क्यों कि, यह जीव कर्म और कालके अधीन है. ॥

बालकके जन्म हुए समीप रहा हुआ गुरु, ज्यो तिषिको जन्मक्षण जाननेके वास्ते आज्ञा करे तिसने भी सम्यक् जन्मकाल, करगोचर करके धारण करना तदपीछे बालकके पिता, पितृव्य (चाचा-काका) पितामहोनें, नाल विना छेद्यां गुरुका, और ज्योति षिका बहुत वस्त्र आभूषणवित्तादिसें पूजन करना. क्योंकि, नाल छेद्यांपीछे सूतक हो जाता है. । गुरु

बालके पिता, पितामह (दादा) आदिकको आशी र्वाद देवे. ॥

यथा ॥

'ॐ अर्हं कुलं वो वर्द्धतां । संतु शतशः पुत्रप्रपौ त्राः । अक्षीणमस्त्वायुर्द्धनं यशः च अर्हं ॐ ॥' इति वेदाशीः ॥

यो मेरुशृंगे त्रिदशाधिनाथैर्दैत्याधिनाथैस्सपरिच्छ दैश्च ॥ कुंभामृतैः संस्नपितस्सदेव आद्यो विदध्यात् कुलवर्द्धनंच ॥ १ ॥

ज्योतिषिकाशीर्वादो यथा शार्दूलविक्रीडितवृत्तम् ॥

आदित्यो रजनीपतिः क्षितिसुतः सौम्यस्तथा वाक्पतिः शुक्रः सूर्यसतो विधुंतुदशिखिश्रेष्टा ग्रहाः पांतुवः ॥ अश्विन्यादिभमण्डलं तदपरो मेषादिराशिक्रमः कल्याणं पृथुकस्य वृद्धिमधिकां संतानसप्यस्य च ॥१

तदपीठे लग्न धारण करके, ज्योतिषिके स्वघर गये हुए, गुरु सूतिकर्मकेवास्ते कुलवृद्धा स्त्रीयोको, और दाईयोंको निर्देश करे । अन्य घरमें रहाही बालकको स्नान करानेवास्ते जलको मंत्रके देवे ॥

जलाभिमंत्रणमंत्रो यथा ॥

॥ॐ अर्हं । नमोर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः॥ क्षीरोदनीरैः किल जन्मकाले, यैर्मेरुशृङ्गे स्नपितो जिनेन्द्रः॥ स्नानोदकं तस्य भवत्विदं च,शिशोर्महामङ्गलपुण्यवृद्धै ॥ १ ॥

इस मंत्रकरके सात वार जलको मंत्रें, तिस जल करके कुलवृद्धा स्त्रीयों बालकको स्नान करावे । और अपनेश्कुलाचारके अनुसार नालछेद करे. तदपीछे गुरु स्वस्थानमें वैठाही चंदन, रक्तचदन, विल्वकाष्ठादि दग्ध करके तिनकी जस्म श्वेतसर्षप और लवण मिश्रित करके पोट्टलिका बांधे

रक्षाभिमंत्रणमंत्रो यथा ॥

" ॐ ह्रीं श्रीअंवे जगदंवे शुभे शुभंकरे अमुं बालं भूतेभ्यो रक्ष २ । ग्रहेभ्यो रक्ष २ । पिशाचेभ्यो रक्ष २ । वेतालेभ्यो २। शाकिनीभ्यो रक्ष २। गगनदेवीभ्यो रक्ष २ । डुष्टेभ्यो रक्ष २ । शत्रुभ्यो रक्ष २ । कार्मणेभ्यो रक्ष २ । दृष्टिदोषेभ्यो रक्ष । २ जयं कुरु विजयं कुरु । तुष्टिं कुरु । पुष्टिं कुरु । कुलवृद्धिं कुरु । श्रीं ह्रीं ॐ जगवति श्रीअंबिके नम. ॥

इस मंत्रकरके सातवार मंत्रित रक्षापोट्टलीको काले सूत्रसें बांधके, लोहेका टुकमा, वरुणमूलका टुकडा, रक्तचंदनका टुकमा और कोडी, इनोसहित रक्षापोट्टलिको कुलवृद्धा स्त्रीयोके पास बालकके हाथ ऊपर बंधावे ॥

सांवत्सर(पंचांग)घटीपात्र, चदन, रक्तचंदन, समीपमें एकांत गृह,सरसव,लवण कौशेय कृष्णसूत्र,कौमीगीतमंगल, लोहा,रक्षा,वस्त्र,दक्षिणावास्ते धन, सूतिका, कुलवृद्धा, सर्व जलाशयका जल, जन्मसंस्कारमे

इतनी वस्तु चाहिये. ॥ इतिजन्म सं० विधिः ॥ अथ कदाचित् अश्लेषामें,ज्येष्टामें,मूलमें,गंमांतमें त्रङ्गामें बालकका जन्म होवे तो बालकको,बालकके मातापिताको, बालकके कुलको, दुःख, दारिद्र, शोक, मरणादि कष्ट होवे, इसवास्ते बालकका पिता और कुल ज्येष्ट (कुलका बमा) शांतिकविधिमें कहे विधानके करेविना बालकका मुख न देखे. ॥

इति जन्मसंस्कार विधिः

अथ चतुर्थ सूर्यचंद्रदर्शन संस्कार वर्णन

तीसरे दिन गुरु समीपके घरमें अर्हत् पूजन पूर्वक जिनप्रतिमाके आगे स्वर्णताम्रमयी वा रक्त चंदनमयी सूर्यकी प्रतिमा स्थापन करे.तदपीछे स्नान करके अलंकृत बालककी माताको जिसने दोनों हाथोंमें बालकको धारण किया है ऐसी माताको प्रत्यक्ष सूर्यके सन्मुख लेजाके, वेदमंत्रको उच्चारण करता हुआ, गुरु पुत्रको सूर्यका दर्शन करावे. ॥

सूर्यवेदमंत्रो यथा ॥

"॥ ॐ अर्हं । सूर्योऽसि । दिनकरोऽसि । सहस्रकिरणोऽसि । विभावसुरसि । तमोपहोऽसि । प्रियंकरोऽसि । शिवंकरोऽसि । जगच्चक्षुरसि । सुरवेष्टितोऽसि । विततविमानोऽसि । तेजोमयोऽसि । अरुणसारथिरसि । मार्त्तंमोऽसि । द्वादशात्माऽसि । चक्रबांध

वोऽसि । नमस्ते जगवन् प्रसीदास्य कुलस्य तुष्टिं पुष्टिं प्रमोदं कुरु २ सन्निहितो जव अर्हं ॥"

ऐसें गुरुके पठन करे हुए, सूर्यको देखके, माता पुत्रसहित, गुरुको नमस्कार करे. गुरु पुत्रसहित माताको आशीर्वाद देवे. ।

यथा । आर्या ॥

सर्वसुरासुरवंद्यः कारयिता सर्वधर्मकार्याणाम् ॥
जूयान्त्रिजगच्चक्षुर्मंगलदस्ते सपुत्रायाः ॥ १ ॥

सूतकमें दक्षिणा नही है. । तदपीछे गुरु स्वस्थानमें आयकर जिन प्रतिमाको और स्थापित सूर्यको विसर्जन करे. माता और पुत्रको सूतकके जयसें तहां जिनप्रतिमाके पास न लावे. तिस दिनमें ही संध्याकालमें गुरु जिनपूजापूर्वक जिनप्रतिमाके आगे स्फटिकरूप्यचंदनमयी चंद्रमाकी मूर्ति स्थापन करे, तिस चंद्रमाकी मूर्तिका शांतिकादिक प्रक्रमोक्त विधिकरके पूजन करे तदपीछे तैसेंही सूर्यदर्शनरीतिसें चंद्रमाके उदय हुए प्रत्यक्ष चंद्रसन्मुख माता और पुत्रको ले जाके, वेदमंत्र उच्चार करता हुआ, मातापुत्र दोनोंको चंद्रका दर्शन करावे ॥

चंद्रस्य वेदमंत्रो यथा ॥

"॥ ॐ अर्हं । चंद्रोऽसि । निशाकरोऽसि । सुधाकरोऽसि । चंद्रमा असि । ग्रहपतिरसि । नक्षत्रपतिरसि । कौमुदीपतिरसि । निशापतिरसि । मदनमि

त्रमसि । जगज्जीवनमसि । जैवातृकोऽसि । क्षीरसागरोद्भवोऽसि । श्वेतवाहनोऽसि । राजाऽसि । राजराजोऽसि । औषधीगर्न्नोऽसि । वंद्योऽसि । पूज्योऽसि । नमस्ते न्नगवन् अस्य कुलस्य ऋद्धिं कुरु । वृद्धिं कुरु । तुष्टिं कुरु । पुष्टिं कुरु जयं विजयं कुरु । न्नद्रं कुरु । प्रमोदं कुरु । श्रीशशांकाय नमः । अर्हं ॥"

ऐसें पढता हुआ, माता पुत्रको चंद्र दिखलाके खमा रहे. । माता पुत्र सहित गुरुको नमस्कार करे. । गुरु आशीर्वाद देवे. ॥

यथा । वृत्तम् ॥

सर्वौषधीमिश्रमरीचिजालः सर्वापदां संहरणप्रवीणः॥
करोतु वृद्धिं सकलेपि वंशे युष्माकमिन्दुःसततं प्रसन्नः

तदपीछे गुरु जिनप्रतिमा, और चंद्रप्रतिमा दोनोंको विसर्जन करे. । इसमें इतना विशेष है. । कदाचित् तिस रात्रिके विषे चतुर्दशी अमावास्याके वशसें वा वादलसहित आकाशके होनेसें चंद्रमा न दिखलाइ देवे तो न्नी पूजन तो तिस रात्रिकीही संध्यामें करना; और दर्शन तो और रात्रिमें न्नी चंद्रमाके उदय हुए हो सक्ता है. ॥ सूर्य और चंद्रमाकी मूर्ति, तिसकी पूजाकी वस्तु, सूर्यचंद्रदर्शनसंस्कारमें चाहिये. ॥

इति चंद्रसूर्यदर्शनसंस्कारविधिः ॥

॥ अथक्षीराशननामा पांचमा संस्कार ॥

तिसही जन्मसें तीसरेदिन, चंद्रसूर्यके दर्शनके दिन मेंही, बालकको क्षीराशनसंस्कार करना। तद्यथा। पूर्वोक्त वेपधारी गुरु, अमृतमंत्रकरके एकसो आठ वार मंत्रित तीर्थोदकसें बालकको, और बालककी माताके स्तनोको अभिषेक करके, माताकी गोदी (अंक) में स्थित बालकको दूध पावे. पूर्णागना शिकासंबंधि स्तन्य पहिलां चुंघावे, स्तन्य (दूध) पीते हुए बालकको गुरु आशीर्वाद देवे ॥

यथा वेदमंत्र ॥

"॥ ॐ अर्हं जीवोऽसि। आत्माऽसि। पुरुषोऽसि। शब्दज्ञोऽसि। रूपज्ञोऽसि। रसज्ञोऽसि। गंधज्ञोऽसि। स्पर्शज्ञोऽसि। सदाहारोऽसि। कृताहारोऽसि। अभ्यस्ताहारोऽसि। कावलिकाहारोऽसि। लोमाहारोऽसि। औदारिकशरीरोऽसि। अनेनाहारेण तवांगं वर्द्धतां। बलं वर्द्धतां। तेजोवर्द्धतां। पाटवं वर्द्धतां। सौष्टवं वर्द्धतां पूर्णायुर्भव। अर्हं ॐ ॥"

इस मंत्रकरके तीन वार आशीर्वाद देवे ॥

अमृतमंत्रो यथा ॥

"ॐ ॥ अमृते अमृतोद्भवे अमृतवर्षिणि अमृतं श्रावय २ स्वाहा ॥"

इति क्षीराशनसंस्कार विधि. ॥

अथ षष्टमं षष्टीसंस्कारस्वरूपं ॥

छठे दिनमें संध्याके समयमें गुरु प्रसूतिघरमें आकरके षष्ठीपूजन विधिका आरंभ करे, षष्टीपूजनमें सूतक नही गिणना. यत उक्तम् ।

स्वकुले तीर्थमध्ये च तथावश्ये बलादपि ॥
षष्ठीपूजनकाले च गणयेन्नैव सूतकम् ॥ १ ॥

इसवचनसें ॥ सूतिकागृहकी भींत और भूमि दोनोंको सधवायोंके हाथसें गोबरसें लेपन करावे, । तदपीछे दृश्य शुक्रबृहस्पतिके वर्त्तनेवाली दिशाके भींतभागको खडी आदिसें धवल (श्वेत) करावे, और भूमिभागको चौंकमंडित करावे. । तदपीछे श्वेत भींतभागके ऊपर सधवाके हाथेंकरी कुंकुम हिंगुलादिवर्णोंसें आठमाताओंको उर्द्धा, (खमीयां) आठ बेठी, और आठ सुती, लिखवावे. कुलक्रमांतरमें गुरुकर्मांतरमें षट् (६) षट् (६) लिखनीया. । तदपीछे सधवा स्त्रीयोंके गीतमंगल गाते हुए चौंकमें शुभासनके ऊपर बेठा हुआ गुरु, अनंतरोक्त पूजा क्रम करके मातायोंको पूजे. यथा ॥

"॥ ॐ ह्रीं नमो भगवति । ब्रह्माणि । वीणापुस्तकपद्माक्षसूत्रकरे । हंसवाहने श्वेतवर्णे । इह षष्ठी पूजने आगछ २ स्वाहा ॥"

तीनवार पढके पुष्पकरके आह्वान करे॥तदपीछे॥

"॥ ॐ ह्रीं नमो भगवति । ब्रह्माणि । वीणापुस्त

कपद्माक्षसूत्रकरे। हंसवाहने। श्वेततवर्णे। मम सन्नि. हिता भव २ स्वाहा ॥"

तीनवार पढके सन्निहित करे ॥ पीछे ॥

"॥ ॐ ह्रीं नमो भगवति । ब्रह्माणि । वीणा पुस्तकपद्माक्षसूत्रकरे । हंसवाहने । श्वेतवर्णे । इह तिष्ठ २ स्वाहा ॥"

इति । तीनवार पढके स्थापन करे ॥ पीछे ॥

"॥ ॐ ह्रीं नमो भगवति । ब्रह्माणि । वीणा पुस्तकपद्माक्षसूत्रकरे । हंसवाहने । श्वेतवर्णे । गंधं गृह्ण २ स्वाहा ॥"

चंदनादि गंध चढावे ॥

"ॐ ह्रीं नमो भगवति । ब्रह्माणि । वीणापुस्त कपद्माक्षसूत्रकरे । हंसवाहने । श्वेतवर्णे । पुष्पं गृह्ण २ स्वाहा ॥"

इसीतरें मंत्रपूर्वक ।

"धूपं गृह्ण २ ।' दीप गृह्ण २ ।' 'अक्षतान् गृह्ण २ ।' 'नैवेद्यं गृह्ण २ स्वाहा ॥"

ऐसें एकएकवार मंत्रपाठपूर्वक इन पूर्वोक्त गंधा दिवस्तुयोंकरके भगवतीको पूजे. ॥ ऐसेंही अन्य सात मातायोंकी पूजा करणी. ।

विशेष मंत्रोंमें हे, सो लिखते हैं. ॥

"ॐ ह्रीं नमो भगवति । माहेश्वरि । शूलपि नाककपालखट्वांगकरे। चंद्रार्द्धललाटे। गजचर्मावृते।

शेषाहिबद्धकांचीकलापे । त्रिनयने । वृषन्नवाहने । श्वेतवर्णे। इह षष्ठीपूजने आगच्छ २॥" शेषंपूर्ववत्२

"॥ ॐ ह्रीं नमो न्नगवति । कौमारि । षण्मुखि । शूलशक्तिधरे । वरदान्नयकरे । मयूरवाहने गौरवर्णे । इह षष्ठीपूजने आगच्छ २॥"शेषंपूर्ववत्३

"ॐ ह्रींनमो न्नगवति।वैष्णवि । शंखचक्रगदा। सारंगखड्गकरे । गरुमवाहने । कृष्णवर्णे । इह षष्ठी पूजने आगच्छ २ ॥" शेषं पूर्ववत् ॥ ४ ॥

"॥ ॐ ह्रीं नमो न्नगवति । वाराहि । वराहमुहि । चक्रखड्गहस्ते । शेषवाहने श्यामवर्णे । इह षष्ठीपूजने आगच्छ २ ॥" शेषं पूर्ववत् ॥ ५ ॥

"॥ ॐ ह्रीं नमो न्नगवति । इंद्राणि । सहस्त्र नयने । वज्रहस्ते । सर्वान्नरणन्नूषिते । गजवाहने । सुरांगनाकोटिवेष्टिते । कांचनवर्णे इह षष्टीपूजने आगच्छ २ ॥" शेषं पूर्वत् ॥ ६ ॥

"॥ ॐ ह्रीं नमो न्नगवति । चामुंडे । शिराजालकरालशरीरे । प्रकटितदशने । ज्वालाकुंतले । रक्तत्रिनेत्रे । शूलकपालखड्गप्रेतकेशकरे । प्रेतवाहने । धूसरवर्णे । इह षष्टीपूजने आगच्छ २ ॥" शेषं पूर्ववत् ॥ ७ ॥

"॥ ॐ ह्रीं नमो न्नगवति । त्रिपुरे । पद्मपुस्तक वरदान्नयकरे । सिंहवाहने । श्वेतवर्णे । इह षष्ठी पूजने आगच्छ २ ॥" शेषं पूर्ववत् ॥ ८ ॥

एवं जैसें ऊर्ध्व (खमी) मातृका पूजन करे, तैसेंही बेठी ओर सुप्त मातृयांका भी पूर्वोक्त मंत्रों सेंही तीनवार पूजन करे; । कितनेक चामुंडा, त्रिपुरा, दोनोंको वर्जके पट्मातृकाही पूजन करते हैं. ॥

मातृका पूजन करके ऐसें पढे. ॥

ब्राह्माद्यामातरोप्यष्टौ स्वस्वास्त्रबलवाहनाः ॥
षष्टीसंपूजनात्पूर्वं कल्याणं ददता शिशोः ॥ १ ॥

तदपीछे मातृस्थापनाकी अग्रभूमिमें चंदनलेप स्थापना करके, अंबारूप षष्टीको स्थापन करे. । ओर तिस स्थापनाको दधि, चंदन, अक्षत, दूर्वादिकरके पूजे. ।

तदपीछे गुरु हस्तमें पुष्प लेके ॥

"॥ ॐ ऐं ह्रीं षष्टि । आम्रवनासीने । कदंबवन विहारे। पुत्रभूययुते । नरवाहने । श्यामाङ्गि । इह आगछ २ स्वाहा ॥"

मातृवत् इसकी भी पूजा करणी. । तदपीछे बाल कमातासहित अविधवा कुलवृद्धा स्त्रीयां मंगलगीतगानमें तत्पर वाजत्रोंके वाजते हुए षष्टीरात्रिको जागरणा करे. । तदपीछे प्रातःकालमें ॥

"॥ ॐ भगवति माहेश्वरि पुनरागमनाय स्वाहा ॥"

ऐसें प्रत्येक नामपूर्वक गुरु, मातृको ओर षष्टीको विसर्जन करे । तदपीछे गुरु, बालकको पंचपरमेष्टि

मंत्रपवित्रित जलकरके अभिषेक करता हुआ, वेद मंत्रकरके आशीर्वाद देवे. ॥ यथा ॥

"॥ ॐ अर्हं जीवोऽसि । अनादिरसि । अनादि कर्मभागसि । यत्त्वया पूर्वं प्रकृतिस्थितिरसप्रदेशैरा श्रवबृत्त्या कर्मबद्धं तद्बन्धोदयोदीरणासत्ताभिः प्रति भुङ्क्ष्व । माशुभकर्मोदयफलभुक्तेरुद्वेकं दध्याः । नचा शुभकर्मफलभुक्त्या विषादमाचरेः । तवास्तु संवर वृत्त्या कर्मनिर्ज्जरा अर्हं ॐ ॥"

सूतकमें दक्षिणा नही है. ॥ चंदन, दधि, दूर्वा, अक्षत, कुंकुम, लेखिनी, हिंगुलादिवर्ण, पूजाके उप करण, नैवेद्य, सधवा स्त्रीयां, दर्भ, भूमिलेपन, इत नी वस्तु षष्ठीजागरणसंस्कारमें चाहिये. ॥

इति षष्ठी संस्कारविधिः समाप्तः ॥

॥ अथ शुचिकर्मसंस्कार ॥

यहां शुचिकर्म स्वस्ववर्णानुसार करके दिनोंके व्यतीत हुए करणा, तद्यथा ॥

शुध्येद्विप्रो दशाहेन द्वादशाहेन बाहुजः ॥
वैश्यस्तु षोडशाहेन शूद्रो मासेन शुध्यति ॥१॥
कारूणां सूतकं नास्ति तेषां शुद्धिर्न चापिहि ॥
ततो गुरुकुलाचारस्तेषु प्रामाण्यमिच्छति ॥ २ ॥

तिस कारणसें स्वस्ववर्णकुलानुसार करके दिनोंके व्यतीत हुए, गुरु सर्वेही, सोलां पुरुषयुगसें उपरे,

तिस कुलवर्गको बुलवावे. क्योंकि, सूतक सोलां पुरुषयुगसें उरे ग्रहण करिये है. ॥ यडुक्तं ॥

नृषोडशकपर्यन्त गणयेत् सूतकं सुधीः ॥
विवाहं नानुजानीयान्नोत्रे लक्षनृणां युगे ॥ १ ॥

भावार्थः–सोलां पुरुषपर्यंत (बुद्धीवत) पुरुष सूतक गिणे, । परंतु एकगोत्रमें लक्ष पुरुषयुग व्यतीत हुए भी, विवाह नही करे; । तिसवास्ते अपने गोत्रजको बुलवायके तिन सर्वको सांगोपांग स्नान और वस्त्रक्षालन करनेको कहे. । स्नान करके शुचि वस्त्र पहिनके गुरुको साक्षी करके, वे सर्व गोत्रज विविध प्रकारकी पूजासें जिन प्रतिमाका पूजन करे. । तदपीछे बालकके माता पिता पंचगव्यकरके अंतस्नान करे । पुत्रसहित नखछेदनकरके गांठ जोमी दंपती जिनप्रतिमाको नमस्कार करे, सधवा स्त्रीयांके मंगलगीत गाते वाजंत्रोके वाजते हुए. । और सर्व चेत्योंमें पूजा नैवेद्य ढौकन करे. । साधुयोंको यथाशक्ति चतुर्विध आहार वस्त्र पात्र देवे, । और संस्कार करनेवाले गुरुको वस्त्र तांबूल भूषण द्रव्यादिदान देवे. तथा । जन्म,चंद्रसूर्यदर्शन, क्षीराशन, षष्ठी, इनसंबंधिनी दक्षिणा तिस दिनमें संस्कारगुरुकेतांइ देणी. । और सर्व गोत्रज स्वजन मित्र वर्गोंको यथाशक्ति भोजन तांबूल देनां । तथा गुरु तिस कुलके आचारानुसारकरके पंचगव्य, जिनस्ना

र्थोदक, सर्वौषधिजल और तीर्थजल, इनोंकरके स्नान कराये हुए बालकको वस्त्राभरणादि पहिनावे. ॥ तथा स्त्रीयोंको सूतकदिनोंके पूर्ण हुएभी, आर्द्र नक्षत्रोंमें, और सिंह गजयोनि नक्षत्रोंमें सूतकस्नान नही करावणा. । आर्द्र नक्षत्र दश है. । कृत्तिका १, भरणी २, मूल ३, आर्द्रा ४, पुष्य ५, पुनर्वसु ६, मघा ७, चित्रा ८, विशाखा ९, श्रवण १०, ये दश आर्द्र नक्षत्र हैं; इनमें स्त्रीको सूतकस्नान न करावे. यदि स्नान करे तो, फिर प्रसूति न होवे. ॥ धनिष्ठा १, पूर्वाभाद्रपदा २, ये दो सिंहयोनि नक्षत्र जाणने; और भरणी १, रेवती २, ये दो नक्षत्र गजयोनि जाणने. ॥ कदाचित् सूतक पूर्ण हुए दिनमें इन पूर्वोक्त नक्षत्रोंमेंसें कोइ नक्षत्र आवे, तब एक एक दिनके अंतरे शुचिकर्म करणा. ॥ पूजावस्तु, पंचगव्य, स्वगोत्रज जन, तीर्थोदक, शुचिकर्मसंस्कारमें चाहिये. ॥

इति सप्तमशुचिकर्मसंस्कार विधि

अथ नामकरणसंस्कार विधि ॥

मृदु, ध्रुव, क्षिप्र और चर, इन नक्षत्रोंमें पुत्रका जातकर्म करना. अथवा गुरु वा शुक्र, चतुर्थ स्थित होवे, तब नाम करना, सज्जन पुरुषोंको सम्मत है. ॥ शुचिकर्मदिनमें अथवा तिसके दूसरे वा तीसरे

शुभ दिनमें बालकको चंद्रमाके बल हुए, ज्योतिषि कसहित गुरु तिसके घरमें शुभस्थानमे शुभासनके ऊपर बैठा हुआ, पंचपरमेष्ठिमंत्रको स्मरण करता हुआ रहे । तिस अवसरमे बालकके पिता, पिता महादि, पुष्प फलकरके हाथ परिपूर्ण करके ज्योति षिकसहित गुरुको साष्टांग नमस्कार करके ऐसें कहे. हे भगवन्! पुत्रका नामकरण करो । तब गुरु तिन पिता, पितामहादिको, तिसके कुलके पुरुषोंको, और कुलवृद्धा स्त्रीयोंको, आगे बैठाके, ज्योतिषिको जन्म लग्न कहनेकेवास्ते आदेश करे । तब ज्योतिषिक शुभपट्टेऊपर खट्टिका (खमी) करके तिस बालक के जन्मलग्नको लिखे, स्थान २ में ग्रहोंको स्थापन करे. तब बालकके पितापितामहादि जन्मलग्नकी पूजा करे. । तिसमें स्वर्णमुद्रा १२. रूप्यमुद्रा १२, ताम्रमुद्रा १२, क्रमुक (सुपारी) १२, अन्य फल जाति १२, नालिकेर १२, नागवल्लीदल (पान) १२. इनोंकरके द्वादश लग्नका पूजन करे। इनही नव नव वस्तुयोंकरी नव ग्रहोंका पूजन करे. ऐसें लग्न के पूजे हुए, तिनोंके आगे ज्योतिषिक लग्न विचार कहे. वेभी उपयोगसहित सुणे. । तदपीछे भ्याव र्णनसहित लग्नको ज्योतिषिक कुंकुमाक्षरोंकरके पत्रे में लिखके, कुलज्येष्टको सोंप देवे. । बालकके पिता दिकोंने ज्योतिषिका अपनी संपदानुसार वस्त्र

स्वर्णदान करके सन्मान करणा. और ज्योतिषिक जी तिनोंके आगे जन्मनक्षत्रानुसारे, नामाक्षरको प्रकाश करके, स्वघरको जावे. तदपीछे गुरु, सर्व कुलपुरुषोंको और कुलवृद्धा स्त्रीयोंको आगे स्थापन करके (विठलाके) तिनोंकी सम्मतिसें हाथमें दूर्वा लेके परमेष्टिमंत्रपठनपूर्वक (कुलवृद्धाके) कानमें जातिगुणोचित नाम सुणावे. । तिसपीछे कुलवृद्धा नारीयां गुरुकेसाथ पुत्र गोदीमें लीया तिसकी माता शिविकादि नरवाहनमें बैठी हुई, वा पादचारिणी अविधवायोंके गीत गाते हुए, जिनमंदिरमें जावे. । तहां मातापुत्र दोनों जिनको नमस्कार करे, माता चौवीस २ सुवर्णमुद्रा, रूप्यमुद्रा, फलनालिकेरादि करके जिनप्रतिमाके आगे ढौकनिका करे. । तदपीछे देवके आगे कुलवृद्धा स्त्रीयां बालकका नाम प्रकाश करें. चैत्य न होवे तो, घरदेरासरकी प्रतिमाके आगे यह विधि करना. तदपीछे तिसही रीतिसें पौषधशालामें आवे, तहां प्रवेश करके जोजनमंडली स्थानमें मंडलीपट्ट स्थापन करके तिसकी पूजा करे. मंडलीपूजाका विधि यह है. पुत्रकी माता "श्रीगौतमाय नमः" ऐसा उच्चार करती हुई, गंध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य करके मंडलीपट्टकी पूजा करे. मंडलीपट्टोपरि स्वर्णमुद्रा १०, रूप्यमुद्रा १०, क्रमुक १०८, नालिकेर २९, वस्त्रहस्त २९, स्थापन

करे. । तदपीछे पुत्रसहित माता तीन प्रदक्षीणा करके यतिगुरुको नमस्कार करे. । नव सोनेरूपेकी मुद्रा करके गुरुके नवांगकी पूजा करे. । निरुंछना और आरात्रिका (आरती) करके क्षमाश्रमणपूर्वक हाथ जोडके, "वासक्खेवंकरेह" ऐसा पुत्रकी माता कहे. तब यतिगुरु वासक्षेपको, ॐकार ह्रीं कार श्रींकार सन्निवेशकरके कामधेनुमुद्राकरके, वर्द्धमा न विद्याकरके जपके, मातापुत्र दोनोंके शिरपर क्षेप करे. तहां जी तिनके शिरमे ॐ ह्रीं श्रीं अक्ष रोंका सन्निवेश करे. । तदपीछे बालकको अक्षतस हित चंदनकरके तिलक करके, कुलवृद्धाके अनुवाद करके, नाम स्थापन करे. । तदपीछे तिसही युक्ति करके सर्व अपने घरको आवे. । यतिगुरुयोंको शुद्ध आहार वस्त्र पात्रका दान देवे । गृहस्थगुरुको वस्त्र अलंकार स्वर्णदान देवे. ॥ नांदी, मंगलगीत, ज्योतिषिकसहित गुरु, प्रभूत फल, और मुद्रा, विविधप्रकारके वस्त्र, वास, चंदन, दूर्वा, नालिकेर, धन, इतनी वस्तु नामसंस्कार कार्यमें चाहिये.॥

इति अष्टम नामकरणसंस्कार विधिः

॥ अथ नवमं अन्नप्राशनविधि ॥

रेवती, श्रवण, हस्त, मृगशीर्ष, पुनर्वसु, अनुराधा, अश्विनी, चित्रा, रोहिणी, उत्तरात्रय, धनिष्टा, पुष्य, इन निर्दोष नक्षत्रांमें और रवि, चंद्र, बुध, शुक्र, गुरु

वारोंमें पुरुषोंको नवीन अन्नप्राशन (खाना) श्रेष्ट हैं. और बालकोंको अन्नभोजनरिक्तादि कुतिथीयां और कुयोगोंको वर्जके श्रेष्ट है. । पुत्रको छठे मासमें, और कन्याको पांचमे मासमें अन्नप्राशन, सत्पुरुषों ने कहा है. । जे नक्षत्र कहे तिनमें और पूर्वोक्त वारमें सद्ग्रहोंके विद्यमान हुए अमावासी और रिक्ता, तिथीको वर्जके शुभ तिथीमें करणा. क्यों कि, लग्नमें रवि होवे तो, कुष्टी होवे; मंगल होवे तो, पित्तरोगी होवे; शनि होवे तो, वातव्याधि होवे; क्षीणचंद्र होवे तो, भीख मांगनेमें रत होवे; बुध होवे तो, ज्ञानी होवे; शुक्र होवे तो, भोगी होवे; बृहस्पति होवे तो, चिरायु होवे; और पूर्ण चंद्रमा होवे तो, पूजा करनेवाला और दान देनेवा ला होवे. कंटक ४ । ७ । १० । अंत्य १२ । निधन ८ । त्रिकोण ५ । ९ । इन घरोंमें पूर्वोक्त ग्रह होवे तो, शरीरमें शुभफल देते हैं. । छठे और आठमे घरमें चंद्रमा अशुभ होता है, । केंद्र १ । ४ । ७ । १० । त्रिकोण ५ । ९ । इन घरोंमें सूर्य होवे तो, अन्ननाश होवे. ॥ तिसवास्ते छठे मासमें बालकको, और पांचमे मासमें कन्याको पूर्वोक्त तिथी वार नक्षत्र योगोंमें बालकको चंद्रबलके हुए अन्नप्राश नका आरंभ करे. । तद्यथा । पूर्वोक्त वेषधारी गुरु, तिसके घरमें जाके सर्वदेशोत्पन्न अन्नोंको एकत्र

करे; देशोत्पन्न और अन्य नगरोंमेंसें जे प्राप्त होवे, तिन सर्व फलोको, और पट्टविकृयोंको ग्रहण करे.। तदपीठे सर्व अन्नोंको, सर्व शाकोंको, सर्व विकृती योंको, घृत, तेल, इक्षुरस, गोरस, जल, इत्यादिकों सें पकाये हुए वहुतप्रकारके पदार्थोंको पृथक् न्यारे २ करे. । तदपीठे अर्हत्प्रतिमाका बृहत्स्नात्रविधि सें (प्रतिष्टा विधिमे लिखेंगे) पंचामृतस्नात्र करके पृथक् पात्रोंमें तिन अन्न शाक विकृति पाकादिकोंको जिनप्रतिमाके आगे अर्हत्कल्पोक्त विंशोपचारी नैवेद्यमंत्रकरके ढोवे सर्वजातके फलभी ढोवे.। तदपीठे वालकको अर्हत्स्नात्रोदक पिलावे. । फिर जिनप्रतिमाके नैवेद्यसें उद्धरित वची (हुइ) तिन सर्ववस्तुयोंको सूरिमंत्रके मध्यगत अमृता श्रवमंत्रकरके श्रीगौतमप्रतिमाके आगे ढोवे, । तिससें उद्धरित वस्तुयोंको कुलदेवताके मंत्रकरके गोत्रदेवीकी प्रतिमाके आगे चढावे, । तदपीठे कुल देवीके नैवेद्यमेंसें योग्य आहार मंगलगीत गाते हुए माता पुत्रके मुकमें देवे. । और गुरु यह वेद मंत्र पढे ॥ यथा ॥

"॥ ॐ अर्हं भगवानर्हन् त्रिलोकनाथस्त्रिलोक पूजितः सुधाधारधारितशरीरोपि कावलिकाहारमा हारितवान् । तपस्यन्नपि पारणाविधाविक्षुरसपरमान्न भोजनात् परमानंदादापकेवलं तद्देहिन्नौदारिकशरी

रमासस्त्वमप्याहारय आहारं तत्ते दीर्घमायुरारोग्यमस्तु अर्हँ ॐ ॥ "

यह मंत्र तीनवार पढे. । तदपीछे साधुयोंको षट्र विकृतियांकरके षट्रससंयुक्त आहार देवे, यतिगुरुके मंडलीपट्टोपरि परमान्नपूरित सुवर्णपात्र चढावे, गृहस्थगुरुको द्रोण द्रोण प्रमाण सर्वजातका अन्न दान करे, । तुला २ प्रमाण सर्व घृत, तैल, गुड लवणादि दान करे, । सर्वजातके एक सौ आठ २ फल देवे, । तांबेकाचरु, कांसेका थाल, और वस्त्रयुगल देवे. । सर्वजातिके अन्न, सर्वजातिके फल, सर्व विकृतियां, स्वर्ण, रूप्य, ताम्र, कांश्य, इनोंके पात्र (भाजन) इतनी वस्तुयां इस संस्कारमें चाहिये. ॥

इति नवमान्नप्राशनसंस्कार विधिः

अथ दशमं कर्णवेधसंस्कारविधि ॥

उत्तरात्रय, हस्त, रोहिणी, रेवती, श्रवण, पुनर्वसू मृगशीर्ष, पुष्य, इन नक्षत्रोंमें । रेवती श्रवण, हस्त, अश्विनी, चित्रा, पुष्य, धनिष्ठा, पुनर्वसू, अनुराधा, चंद्रसहित इन नक्षत्रोंमें कर्णवेध करना, । लाभ ११, तृतीय ३, घरमें शुभ ग्रहोंकरके संयुक्त होवे, शुभ राशि लग्नमें क्रूर ग्रहोंकरकेरहित बृहस्पतिके लग्नाधिप, वा लग्नमें हुए कर्णवेध करणा. जिसमें चंद्र नक्षत्र, पुष्य, चित्रा, श्रवण, रेवती, जानने. । मंग

शुक्र, सूर्य, बृहस्पति, इन वारमें शुन्न तिथीमें शुन्न योगमें कर्णवेध करणा. ॥ इन निर्दोष तिथि वार नक्षत्रमें बालकको चंद्रबलके हुए कर्णवेध आरंन करे. । उक्तं च । "गर्नाधान, पुंसवन, जन्म, सूर्यदर्शन, क्षीराशन, षष्ठी, शुचि, नामकरण, अन्नप्राशन, मृत्यु, इन संस्कारोंमें अवश्य कार्य होनेसें पंक्ति पुरुषोंने वर्षमासादिकी शुद्धि न देखणी.। कर्णवेधादिक अन्य संस्कारोंमें विवाहकीतरें वर्ष मास दिन नक्षत्रादिकोंकी शुद्धि अवश्यमेव विलोकन करणी। यथा । तीसरे पांचमे सातमे निर्दोष वर्षमें बालकको और बालककी माताको अमृतामंत्र अजिमंत्रित जलकरके मंगलगानपूर्वक अविधवायोंके हाथेकरी स्नान करावे । और तयां कुलाचारसंपदा अतिशय विशेषकरके तैलनिषेकसहित तीन पांच सात नव इग्यारह दिनांतक स्नानका विधि जाणना, । तिसके घरमे पौष्टिकको करणा, षष्ठीको वर्जके मातृष्टकपूजन पूर्ववत् करणा, । तदपीछे स्व २ कुलानुसार अन्य ग्राममें कुलदेवताके स्थानमें पर्वतऊपर नदीतीरे वा घरमें कर्णवेधका आरंन करे । तहां मोदक नैवेद्य करण गीतगान मंगलाचारादि स्व २ कुलागत रीति करके करणा. तदपीछे बालकको पूर्वाजिमुख आसनऊपर बिठलाके तिसके कर्णवेध करे तहां गुरु यह वेदमंत्र पढे. । यथा ॥

"॥ ॐ अर्हं श्रुतेनाङ्गोपाङ्गैः कालिकैरुत्कालिकैः पूर्वगतैश्चूलिकाभिः परिकर्मभिः सूत्रैः पूर्वानुयोगैः छन्दोभिर्लक्षणैर्निरुक्तैर्धर्मशास्त्रैर्विद्धकर्णो भूयात्अर्हं ॐ ॥"

शुद्रादिकोंको ॥ '॥ ॐ अर्हं तव श्रुतिद्वयं हृदयं धर्म? विद्धमस्तु ॥' ऐसें कहना. ॥

तदपीछे बालकको यानमें बैठाके, वा नर नारी उत्संगमें लेके धर्मागारमें लेइ जावे; तहां पूर्वोक्त विधिसें मंडलीपूजा करके बालकको गुरुके चरणां आगे लोटावे. तब यतिगुरु विधिसें वासक्षेप करे. । तदपीछे बालकको घरमें ल्याके गृहस्थगुरु कर्णाभरण पहिनावे. । यतिगुरुयोंको शुद्ध चार प्रकारका आहार वस्त्र पात्र देवे. । गृहस्थगुरुको वस्त्र स्वर्णदान देवे. ।

इति दशमंकर्णवेधसंस्कारवर्णनं

अथ क्षौर करणसंस्कारविधि

हस्त, चित्रा, स्वाति, मृगशीर्ष, ज्येष्ठा, रेवती, पुनर्वसू, श्रवण, धनिष्टा, इन नक्षत्रोंमें ।१।२।३।५।७। १३।१०।११। इन तिथियोंमें । शुक्र, सोम, बुध, इन वारोंमें चंद्र वा तारेके बल हुए, क्षौरकर्म करणा. । क्षौरनक्षत्रोंमें स्वकुलविधिकरके चूडाकरण करना मुनींद्र कहते हैं; परं गुरु, शुक्र और बुध यह तीन

ग्रह केंद्रमें ११४।७ । १० होने चाहिये. । यदि केंद्रमें सूर्य होवे तो ज्वर होवे. मंगल होवे तो शस्त्रसें नाश होवे. । षष्टी (६), अष्टमी (८), चतुर्थी (४), सिनीवाली (चतुर्दशीयुक्तअमावास्या) चतुर्दशी (१४), नवमी (९), इन तिथीयोंमे और रवि, शनि, मंगल, इन वारोमें क्षौरकर्म न करा वणा. । धन २, व्यय १२, त्रिकोण ५ । ९, इन ग्रहोमें असद्गृह होवे तो, मृत्यु हुए नी क्षुरक्रिया सुंदर नही होवे; और इनही घरोमे शुज ग्रह होवे तो क्षुरक्रिया पुष्टिकी करणहार जाणनी । तिसवा स्ते बालकको सूर्यबलयुक्त मासके हुए, चंद्रताराब लयुक्त दिनमें, पूर्वोक्त तिथिवार नक्षत्रमे कुलाचारा नुसार कुलदेवताकी प्रतिमाके पास अन्य ग्राममें, वनमें, पर्वतके ऊपर, वा घरमें शास्त्रोक्त रीतिसें प्रथम पोष्टिक करे । तदपीछे षष्टीपूजावर्जित मात्र ष्टपूजा पूर्ववत्. । तदपीछे कुलाचारानुसार नैवेद्य देवपक्वान्नादि करणा । तदपीछे सुस्नात गृहस्थगुरु बालकको आसनऊपर वैठाके बृहत्स्नात्रविधिकृत जिनस्नात्रोदकसें शांतिदेवीके मंत्रकरके सिंचन करे. तदपीछे कुलक्रमागत नापित (नाइ) के हाथसें मुंमन करावे. । तीन वर्णके शिरके मध्यजागमें शिखा स्थापन करे और शूद्रको सर्वमुंमन. । चूडा करण करते हुए यह वेदमंत्र पढे. ॥ यथा ॥

वा आयाइंति वा, आयाइस्संति वा, एवं खलु, अरहंता वा, चक्कबलवासुदेवा वा उग्गकुलेसु वा, जोगकुलेसु वा, राइन्नकुलेसु वा, खत्तियकुलेसु वा, इरकागकुलेसु वा, हरिवंशकुलेसु वा, अन्नयरेसु वा, तहप्पगारेसु विसुद्ध जाइकुलवंसेसु आयाइंसु वा, आयाइंति वा, आयाइस्संति वा, अत्थि पुण एसेवि जावे, लोगछेय जूए, अणंताहिं उसप्पिणि उसप्पिणीहिं वइक्कंताहिं समुपज्जइ, नागगुत्तस्स, वा, कम्मस्स, अरकीणस्स, अवेइयस्स, अणिज्जिणस्स, उदएणं, जन्नं, अरहंता वा, चक्कबलवासुदेवा वा, अंतकुलेसु वा, पंतकिविण तुच्छदरिद्द जिरकागमाहणकुलेसु वा, आयाइंसुं वा, आयाइंति वा, आयाइस्संति वा, नो चेवणं, जोणी जम्मणनिरकमिंसु वा, निरकमंति वा, निरकमिस्संति वा, तं जीअमेअं, तीअपच्चुप्पन्नमणागयाणं सक्काणं, देविंदाणं, देवराईणं, अरहंते जगवंते, तहप्पगारे हिंतो, अंतकुलेहिंतो, पंतकुलेहिंतो, तुच्छदरिद्दकिविण जिरकागमाहणकुलहिंतो; तहप्पगारेसु उग्गजोगराय न्नखत्तियइरकागहरिवंसकुलेसु वा, अन्नयरेसु वा, तह प्पगारेसु विसुद्धजाइकुलवंसेसु साहराविंत्तए. ॥"*

तिसवास्ते कार्तिकशेठ कामदेवादिवैश्योंको जी उप

---

* इस पाठका जावार्थ यह है कि पुर्वोक्त अंतादिकुलमें अरिहंतादि नही उत्पन्न होते हैं, किंतु उग्रादि उपनयनादिसंयुक्त कुलमें उत्पन्न होते हैं, शुद्ध होनेसें. ॥

नयन जिनोपवीत धारण करणा. । आनंदादि शुद्रो को भी उत्तरीय धारण करणा. । शेष वणिगादिकों को उत्तरासंगकी अनुज्ञा है. जिनोपवीत जो है सो भगवान् जिनकी गृहस्थपणेकी मुद्रा है. । सर्व बाह्य अभ्यंतर कर्मविमुक्त निर्ग्रंथ यतियोंको तो, नव ब्रह्मगुप्तिगुप्तज्ञानदर्शनचारित्ररत्नत्रयी, हृदयमेंही है क्योंकि, ॥ मुनिजन सर्वदा तद्भावनाभावितही होते है. इसवास्ते नवब्रह्मगुप्तियुक्तरत्नत्रयी सूत्ररूप बाह्य मुद्राको नही धारण करते है, तन्मय होनेसें. नही समुद्र, जलपात्रको हस्तमे करता है. । नही सूर्य दीपकको धारण करता है. यदुक्तं ॥

अग्नौ देवोस्ति विप्राणां हृदि देवोस्ति योगिनाम् ॥
प्रतिमास्वल्पबुद्धीनां सर्वत्र विदितात्मनाम् ॥ १ ॥

अर्थः—अग्निहोत्रि ब्राह्मणोंका तो अग्निही देव है, अर्थात् अग्निविषेही देवबुद्धि है; और योगिजनोंके हृदयमेंही देव है, क्योंकि, योगाभ्यासी मुनिजन तो, अपने पिंडस्थ, पदस्थ, रूपस्थ, रूपातीत, ध्यानके बलसें अपने हृदयमेंही देवका स्वरूप ध्याय सकते है; और जो अल्पबुद्धि अर्थात् गृहस्थधर्मी श्रावकादि हैं, तिनोंको भगवान्की प्रतिमाही देव है; और तिसकेही पूजन, ध्यान, प्रभावना, उत्सव, रथयात्रा, करनेसें कल्याण है. और जिनोंने आत्म स्वरूप जाना है, ऐसें यति, ऋषि, मुनियोंको तो

सर्वजगें देव मालुम होता है, अर्थात् ध्याता, ध्येय, ध्यान, ज्ञाता, ज्ञेय, ज्ञान रूपकरके सर्व देवस्वरूपही है. ॥ इसवास्ते शिखासूत्रविवर्जित ब्रह्मगुप्तिरत्नत्रय करण कारण अनुमतिमें सदैव आदरवाले यतिजन हैं. । और गृहस्थी, ब्रह्मगुप्तिरत्नत्रयलेशश्रवणस्मरण मात्रसें ब्रह्मगुप्तिरत्नत्रयकोसूत्रमुद्राकरके हृदयमें धारण करते है. । 'प्रतिमा स्वल्पबुद्धीनां इसवचनसें' ॥

तदात्मकत्वके न हुए मुद्राका धारण है. । जैसें छद्मस्थको बाह्य अभ्यंतर तपःका करणा है. । तथा नवतंतुगर्भितसूत्रमय एक अग्र ऐसें तीन अग्र ब्राह्मणको, दो अग्र क्षत्रियको, एक अग्र वैश्यको, शूद्रको उत्तरीमक, और अपरको उत्तरासंगकी अनुज्ञा है. । ऐसा विशेष क्यों है ? सोही कहते हैं. ब्राह्मणोंने नवब्रह्मगुप्तियुक्त ज्ञान दर्शनचारित्ररूप रत्नत्रय आप पालन करणे, अन्योंसें करावणे, अन्य करतांको अनुमति देणी. ॥ ब्रह्मगुप्तिगुप्ताइति । ब्राह्मण आप रत्नत्रयीको ध्ययन सम्यकदर्शन चारित्र क्रियायोकरके आचरते है, अन्योसें अध्यापन सम्यक्त्वोपदेश आचार प्ररूपणा करके रत्नत्रयीका आचरण करवाते हैं, और ज्ञानोपाशन सम्यगदर्शन धर्मोपाशनादिकों करकें श्रद्धा करनेवाले और अनुज्ञा मांगनेवासे अन्योको अनुज्ञा देते है, इसवास्ते नवब्रह्मगुप्तिगर्भि रत्नत्रय करण कारण

अनुमतिवाले ब्राह्मणोंको जिनोपवीतमें तीन अग्र। और क्षत्रियोंको आप रत्नत्रयका आचरण करणा और निजशक्तिसें न्यायप्रवृत्तिकरके अन्योसे आचरण करावणा योग्य है. परंतु तिन क्षत्रियोंको अन्य जनोंको अनुज्ञा देनी योग्य नही है. क्योंकि. वे ठकुराइवाले प्रभुहोंनेसें अन्योंविषे नियमादिकी अनुज्ञा नही देतेहै इसवास्ते क्षत्रियोंको जिनोपवीतमे दो अग्र.। वैश्योंने ज्ञानभक्तिकरके सम्यक्त्व धृतिकरके उपासकाचारशक्तिकरके स्वयमेव रत्नत्रय आचरणा। तिन वैश्योंको असामर्थ्य होंनेसे अनुपदेशक होनेसें रत्नत्रयका करावणा और अनुमतिका देणा योग्य नही है, इसवास्ते वैश्योंको जिनोपवीतमे एक अग्र.। शूद्रोंको तो ज्ञानदर्शनचारित्ररूप रत्नत्रयके करणेमे आपही अशक्त है तो करावणा और अनुमतिका देणा तो दूरही रहा. तिनोंको अधमजाति होनेसें, निःसत्व होनेसें, अज्ञान होनसे, तिनोको जिनाज्ञानरूप उत्तरीयका धारण है। तिनसें अपर वणिगादिकोको देवगुरुधर्मकी उपासनाके अवसरमें मात्र जिनाज्ञानरूप उत्तरासंग मुद्राहै ॥ जिनोपवीतका स्वरूप यह है ॥ स्तनांतर मात्रको चौराशी गुणा करिये तब एकसूत्र होवे तिसको त्रिगुणा करणा, तिसको भी त्रिगुणा करके वर्त्तन करणां (वटना) ऐसें एक तंतु हुआ

इसी रीतिसें दो तंतु और योजन करिये, तबतीनो तंतु मिलाके एक अग्र होवे है. । तहां ब्राह्मणको तीन अग्र, क्षत्रियोको दो और वैश्योंको एक. । परम तमें तो ऐसा कथन है ॥

॥ कृते स्वर्णमयं सूत्रं त्रेतायां रौप्यमेव च ॥
द्वापरे ताम्रसूत्रं च कलौ कर्पासमिष्यति ॥ १ ॥

कृतयुगमें स्वर्णमयसूत्र, त्रेतायुगमें रूपेका, द्वापरयुगमें तांबेका और कलियुगमें कर्पासका यज्ञोपवीत करना ॥ " परंतु जिनमतमें तो, सर्वदा ब्राह्मणोंको सौवर्णसूत्र, और क्षत्रियवैश्योंको सर्वदा कार्पाससूत्र हीहै. ॥ इतिजिनोपवीतयुक्तिः ॥

अथ उपयनविधि कहते हैं:—उपनीयते वर्णक्रमारोहयुक्तिकरके प्राणीको पुष्टिको प्राप्त करिये; इत्युपनयनं. । श्रवण, धनिष्ठा, हस्त, मृगशिर, अश्विनी, रेवती, स्वाति, चित्रा, पुनर्वसू. । तथा च । मृगशिर, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, हस्त, स्वाति, चित्रा, पुष्य, अश्विनी, इन नक्षत्रोंमें मेखलाबंध, और मोक्ष करणा, आचार्यवर्य्य कहतें हैं. । गर्भाधानसें वा जन्मसें आठमे वर्षमें ब्राह्मणोंको मौंजीबंध उपनयनका प्रारंभ कथन करते हैं, क्षत्रियोंको इग्यारह (११) वर्षमें, और वैश्योंको बारमे वर्षमें. । वर्णाधिपके बलवान हुए उपनीतिक्रिया हितकारिणी होती है, अथवा सर्व वर्णोंको गुरु चंद्र सूर्य बल

वान् हुए, हित है । बृहस्पतिवार होवे, बृहस्पति बलमान् होवे, वा केंद्रगत होवे, तो, द्विजोंको उपनयन श्रेष्ठ है. और बृहस्पति तथा शुक्र नीच घरमे होवे, शत्रुके घरमें होवे, वा पराजित होवे तो श्रवणविधीमे स्मृतिकर्म हीन होवे । लग्नमें बृहस्पति होवे, त्रिकोणमें शुक्र होवे, और शुक्रांशमे चंद्रमा होवे तो जैनवेदवित् होवे, शुक्रसहित सूर्य लग्नमे शनिके अंशमे स्थित होवे, तदा सीखी हुइ विद्या भूल जावे ऐसा कुलग्न होवे । केंद्रमे बृहस्पति होवे तो, स्वअनुष्ठानमें रक्त होवे, प्रवरपतियुत होवे शुक्र होवे तो, विद्या सौख्य अर्थ युक्त होवे, बुध होवे तो, अध्यापक होवे, सूर्य होवे तो, राजाका सेवक होवे, मंगल होवे, तो, शूरवीर होवे चंद्रमा होवे तो, व्यापारी होवे शनि होवे तो, नीच जातीका सेवक होवे. । शनिके अंशमे मूर्खता उदय होवें, सूर्यकेभागमे क्रूरपणा होवे, मंगलके अंशमें पाप बुद्धिहोवे, चंद्रांशमें अति जडपणा होवे, बुधांशमे अति पटुपणा होवे, गुरु शुक्रके भागमे सुज्ञपणा होवे, सुर्य सहित बृहस्पति होवे तो निर्गुण होवे, अर्थ हीन होवे, मंगल सहित सूर्य होवे, तो क्रूर होवे, बुध सहित होवे तो पटु होवे, शनि सहित होवे तो आलसु और निर्गुण होवे, चंद्र सहित शुक्र होवे तो अर्थहीन जाणना, पूर्वोक्त निर्दोष नक्षत्रो

में मंगलविना अन्य वारोमे दिनशुध्धीमे, शुभग्रह युक्त लग्नमे, विवाह वत् त्याज नक्षत्रदिन मासा दिकको वर्जके, ग्रह निर्मुक्त पांचमें व्रत आचरे.

प्रथम यथा संपत्ति करके उपनेय (जिनोपवीत लेनेवाले) पुरुषकों सात, नव, पांच, वा तीन दिनतक सतैल निषेक स्नान (पीठी मर्दन) करावे. तदपीछे लग्नदिनमें गृहस्थ गुरु तिसके घरसें ब्राह्य मूहुर्तमें पौ ष्टिक करे. तद नंतर उपनेयके शिरपर शिखा वर्जके मुं डन करावे,पीछे वेदी स्थापन करे. तिसके मध्यमे चोकी (बाजोट) स्थापन करे, वेदी प्रतिष्ठा विवाहा धिकारसें जाणनां. बाजोटके उपर समव सरणकी रीति मुज ब चोमुख (चारजिन बिंब) स्थापन करना, तिन की पूजा करके गृहस्थ गुरु, जिसने श्वेतवस्त्र पहि नाहे, वस्त्रका उत्तरासंग करा हे, अक्षत श्रीफल सुपारी हाथमे लिएहें, एसे उपनेयकों समवसरण कों तीन प्रदक्षणा करावे, तदपीछे गुरु उपनेयकों वामे पासे स्थापके पश्चिमदिशाके सन्मुख जिसका मुखहे तिस जिन बिंबके सन्मुख बेठके प्रथम ऋष भ देवके स्तोत्र सहित शक्रस्तव (नमुथ्थुणं) पढे फेर तीन प्रदक्षिणा करके उत्तराभिमुख जिनबिंबके सन्मुख तेसेंहिं शक्रस्तव पढे. एसेंहि त्रिप्रदक्षिणां तरित पूर्वाभिमुख, दक्षिणा भिमुख जिन बिंबोके आगेभी शक्रस्तव पढे. मंगल गीत वाजित्रादिकों

का तिसवखत विस्तार रखणा. उन वखत आचार्य उपाध्याय साधु साध्वी, श्रावक, श्राविका रूप श्री सकल संघकों एकत्र करना। पीछे प्रदक्षिणा शक्र स्तव पाठके अनंतर गृहस्थ गुरु उपनयनके प्रारंभ वास्ते जैन वेद मंत्रका उच्चार करे उपनेय (जिनोप वीतलेनेवाला) अपने हाथमें दुर्वा फलादीकसे पूर्ण हस्त अंजलिकरके खमाखमासुने

उपनयारंभ जैनवेद मंत्रोयथा

ॐ अर्हं अर्हद्भ्योनमः, सिद्धेभ्योनमः, आचार्येभ्योनमः, उपाध्यायेभ्योनम., साधुभ्योनमः, ज्ञानायनम., दर्शनायनमः, चारित्रायनमः, संयमायनम., सत्यायनमः, शौचायनमः, ब्रह्मचर्यायनम., आकिंचन्यायनमः, तपसेनमः, शमायनमः, मार्दवायनमः, आर्जवायनमः, मुक्तयेनमः, धर्मायनम., संघायनमः, सैध्धांतिकेभ्योनमः, धर्मोपदेशकेभ्योनमः, वादिलब्धिभ्योनमः, पमांग निमित्तेभ्योनमः, तपस्वीभ्योनमः, विद्याधरेभ्योनमः, इहलोकसिद्धेभ्योनम , कविभ्योनमः, लब्धिभ्योनम., ब्रह्मचारीभ्योनम', निष्परिग्रहेभ्यो नम.। दयालुभ्यो नमः,। सत्यवादिभ्यो नमः। नि.स्पृहेभ्यो नमः। एतेभ्यो। नमस्कृत्यायं प्राणी प्राप्तमनुष्यजन्मा प्रविशति वर्णक्रमं अर्हं ॐ ॥,,

ऐसें वेदमंत्रका उच्चार करके फिर भी पूर्ववत् तीन तीन प्रदक्षिणा करके चारो दिशामें युगादिदेव

स्तवसंयुक्त शक्रस्तव पाठ करे । तिस दिनमें, जल जवान्न भोजन करके आचाम्लका प्रत्याख्यान उपनेयको करावे । तदपीछे उपनेयको वामे पासे स्थापके सर्वतीर्थोदकोंकरके अमृताजलमंत्रकरके कुशाग्रोंसें सिंचन करे. ।

तदनंतर परमेष्टिमंत्र पढके.

" नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः "

ऐसा कहके, जिन प्रतिमाके आगे उपनेयको पूर्वाभिमुख बैठावे; तदपीछे गृहीगुरु, चंदनमंत्रकरके अभिमंत्रण करे. ॥ चंदनमंत्रो यथा ॥

" ॥ ॐ नमो भगवते. चंद्रप्रभजिनेंद्राय, शशांक हारगोक्षीरधवलाय, अनंतगुणाय, निर्म्मलगुणाय, भव्यजनप्रबोधनाय, अष्टकर्म्ममूलप्रकृतिसंशोधनाय, केवलालोकावलोकितसकललोकाय, जन्मजरामरण विनाशनाय सुमंगलाय, कृतमंगलाय, प्रसीद भग वन् इह चंदनेनामृताश्रवणं कुरु २ स्वाहा ॥ "

इस मंत्रकरके चंदनको मंत्रके हृदयमें जिनो पवीतरूप, कटिमें मेखलारूप और ललाटमें तिल करूप, रेखाकरे, तदपीछे उपनेय " नमोस्तु २ ऐसें कहता हुआ, गुरुके चरणोंमें पडके खडा होके हाथ जोडके ऐसें कहे. ।

" ॥ भगवन् वर्णरहितोऽस्मि । आचाररहितोऽस्मि । मंत्ररहितोऽस्मि । गुणरहितोऽस्मि । धर्म्मरहितोऽस्मि ।

शौचरहितोऽस्मि । ब्रह्मरहितोऽस्मि । देवर्षिपितृतिथिकर्म्मसु नियोजय मां ॥"

ऐसें कहकर फिर "नमोस्तु २" ऐसें कहता हुआ, गुरुके चरणोंमे पडे; गुरु जी. इस मंत्रको पढके उपनेयको चोटीसें पकडके खडा करे। मंत्रो यथा ॥

"ॐ अर्हं देहिन् निमग्नोऽसि भवार्णवे तत्कर्षति त्वांभगवतोऽर्हतः प्रवचनैकदेशरज्जुना गुरुस्तदुत्तिष्ट प्रवचनादानाय श्रद्धाधाहि अर्हं ॐ ॥"

ऐसें पढके उपनेयको खडा करके अर्हत्प्रतिमाके आगे पूर्वाभिमुख खडा करे तदपीछे गृहीगुरु, त्रितंतुवर्त्तित–तीन तंतुकी बुणी, एकाशीति (८१) हाथ प्रमाण, मुंजकी मेखलाको अपने दोनो हाथोंमें लेके, इस वेदमंत्रको पढे

"॥ ॐ अर्हं आत्मन् देहिन् ज्ञानावरणेन बद्धोऽसि। दर्शनावरणेन बद्धोऽसि। वेदनीयेन बद्धोऽसि। मोहनीयेन बद्धोऽसि। आयुषा बद्धोऽसि। नाम्ना बद्धोऽसि। गोत्रेण बद्धोऽसि। अंतरायेण बद्धोऽसि कर्माष्टकेन प्रकृतिस्थितिरसप्रदेशैश्च बद्धोऽसि । तन्मोचयति त्वां भगवतोर्हतः प्रवचनचेतना तद्बुध्यस्व मामुह'मुच्यतां तव कर्म्मबंधनमनेन मेखलाबंधेन अर्हं ॐ ॥'

ऐसा पढके उपनेयकी कटिमें नवगुणी मेखला को बांधे । तदपीछे उपनेय 'नमोस्तु २' कहता

हुआ, गृहीगुरुके पगोंमें पडे । मेखलाको एकाशी (८१) हाथपणा विप्रको एकाशीतंतुगर्ने जिनोपवीत सूचनकेवास्ते, क्षत्रियको चोपन (५४) हाथ तावत्प्रमाणतंतुगर्ने जिनोपवीत सूचनकेवास्ते, और वैश्यको सत्ताइस (२७) हाथ तद्गर्भसूत्रसूचनके वास्ते है । ब्राह्मणको नवगुणी क्षत्रियको ठगुणी और वैश्यको त्रिगुणी, मेखला बांधनी । तथा मौंजी, कौपीन, जिनोपवीत, इनोंका पूजन, गीतादिमंगल, निशाजागरण, तिसके पूर्वदिनकी रात्रिमें करणा । मेखलाबंधनके पीछे फेर गृहस्थगुरु, उपनेयके विलस्त (वेंत) प्रमाण पृथुल (चौडा) और तीन विलस्त प्रमाण दीर्घ (लंबा) कौपिन दोनों हाथोंमें लेके ॥

" ॥ ॐ अर्हं आत्मन् देहिन् मतिज्ञानावरणेन श्रुतज्ञानावरणेन अवधिज्ञानावरणेन मनःपर्यायावरणेन केवलज्ञानावरणेन इंद्रियावरणेन चित्तावरणेन आवृतोऽसि तन्मुच्यतां तवावरणमनेनावरणेन अर्हं ॐ ॥ "

इस वेदमंत्रको पढता हुआ, उपनेयके अंतःकक्षकों कौपीन पहरावे । तदपीछे उपनेय 'नमोस्तु २' कहता हुआ, फिर जी गुरुके पगोंमें पडे । फिर तीन २ प्रदक्षिणा करके चारों दिशामें शक्रस्तव पाठ करे. ॥

तदनंतर लग्नवेलाके हुए गुरु, पूर्वोक्त जिनोपवीतको अपने हाथमें लेवे पीछे उपनेय फेर खमा होकर हाथ जोमके ऐसें कहे ॥

"॥ जगवन् वर्णोचितोऽस्मि । ज्ञानोचितोस्मि । क्रियोञ्चितो । तज्जिनोपवीतदानेन मां वर्णज्ञानक्रियासु समारोपय ॥ "

ऐसें कहके 'नमोस्तु २, कहता हुआ गुरुके पगों में पडे गुरु फिर पूर्वोक्त उत्थापनमंत्रकरके तिसको उठाके खमा करे । तदपीछे गुरु दक्षिण हाथमें जिनोपवीत रखके ॥

"॥ ॐ अर्हं नवब्रह्मगुप्तीः स्वकरणकारणानुमतीस्थारयेः तदक्षयमस्तु ते व्रतं स्वपरतरणतारणसमर्थो जव अर्हं ॐ ॥ " क्षत्रियको

"॥ करणकारणाज्यां धारयेः स्वस्य तरणसमर्थो जव ॥ " वैश्यको

"॥ करणेन धारयेः स्वस्य तरणसमर्थो जव ॥"

शेषं पूर्ववत् ॥

इस वेदमंत्रकरके पंच परमेष्ठिमंत्र पढता हुआ उपनेयके कंठमे जिनोपवीत स्थापन करे । पीछे उपनेय तीन प्रदक्षिणा करके 'नमोस्तु २' कहता हुआ, गुरुको नमस्कार करे गुरु जी "निस्तारगपारगो जव" ऐसा आशीर्वाद कहे । तदपीछे गुरु पूर्वाजिमुख होके, जिनप्रतिमाके आगे शिष्यको

वामेपासे वैठाके, सर्व जगत्में सार, महा आगम रूप क्षीरोदधिका माखण, सर्ववांछितदायक, कल्प द्रुम कामधेनु चिंतामणिके तिरस्कारका हेतु, निमे षमात्र स्मरण करनेसें मोक्षका दाता, ऐसें पंचपरमे ष्ठिमंत्रको गंधपुष्पपूजित शिष्यके दक्षिणकानमें तीनवार सुणावे पीछे तीनवार तिसके मुखसें उच्चा रण करावे ॥ यथा ॥

"॥ नमो अरिहंताणं । नमो सिद्धाणं । नमो आयरियाणं । नमो उवज्झायाणं । नमो लोए सव्व साहूणं ॥" पीछे उपनेयको मंत्रका प्रभाव सुणावे. ॥ तद्यथा ॥

सोलससु अरकरेसु, इक्किकं अरकरं जगुज्जोअं ॥
नवसयसहस्स महणो, जम्मि छिअं पंच नवकारो ॥१॥
थंभेइ जलं जलणं चिंतियमत्तो इ पंच नवकारो ॥
अरिमारिचोरराउलघोरुवसग्गं पणासेइ ॥ २ ॥

एकत्र पंचगुरुमंत्रपदाक्षराणि । विश्वत्रयं पुनरनं तगुणं परत्र ॥ यो धारयेत्किल तुलानुगतं ततोऽपि । वंदे महागुरुतरं परमेष्ठिमंत्रम् ॥ ३ ॥ ये केचनापि सुखमाघरका अनंता । सत्सर्पिणीप्रभृतयः प्रययुर्वि वर्त्ताः ॥ तेष्वप्ययं परतरः प्रथितः पुराऽपि । लब्ध्वै नमेव हि गताः शिवमत्र लोकाः ॥ ४ ॥ जग्मुर्जि नास्तदपवर्गपदं यदैव । विश्वं वराकमिदमत्र कथं विनास्मान् ॥ एतद्विलोक्य भुवनोद्धरणाय धीरैः ।

मंत्रात्मकं निजवपुर्निहितं तदाऽत्र ॥ ५ ॥ इंदुर्दिवा करतया रविरिंदुरूपः । पातालमंबरमिलासुरलोक एव ॥ किंजल्पितेन बहुना भुवनत्रयेऽपि तन्नास्ति यन्न विषमं च समं च तस्मात् ॥ ६ ॥ सिद्धांतोदधि निर्म्मथान्नवनीतमिवोद्धृतम् ॥ परमेष्टिमहामंत्रं धारयेत् हृदि सर्वदा ॥ ७ ॥ सर्वपातकहर्त्तारं सर्ववांछितदायकम् ॥ मोक्षारोहणसोपाने मंत्रे प्राप्नोति पुण्यवान् ॥ ८ ॥ धार्योयं भवता यत्नात् न देयो यस्य कस्यचित् ॥ अज्ञानेषु श्राविंतोयं शपत्येव न संशय ॥ ९ ॥ * न स्मर्त्तव्योऽपवित्रेण न जने नाऽन्यसंश्रये ॥ नाऽविनीतेन नो दीर्घशब्देनाऽपि कदाचन ॥ १० ॥ न बालानां नाऽशुचीनां नाऽधर्म्माणां नदुर्हृशाम् * नष्प्लुतानां न दुष्टानां दुर्ज्जातीनां न कुत्रचित् ॥ ११ ॥ अनेन मंत्रराजेन भूयास्त्वं विश्वपूजितः ॥ प्राणांतेऽपि परित्यागमस्य कुर्यान्न कुत्रचित् ॥ १२ गुरुत्यागे भवेद्दुःखं मंत्रत्यागे दरिद्रता ॥ गुरुमंत्रपरित्यागे सिद्धोऽपि नरकं व्रजेत् ॥ १३ ॥ इति

---

* न स्मर्त्तव्योपचित्तेन न शब्देनान्यसंश्रये इति पुस्तकांतरे ॥ तथा अन्येषु श्राद्धदिनकृतश्राद्धविधिकौमुदीपचाशकादिषु शास्त्रेष्वेवमुक्त यथा सा काप्यवस्था नास्ति यस्या नमस्कारो न स्मर्त्तव्य इति ॥

* नाऽपूताना न दुष्टाना दुर्जीनाना न कुत्रचित् । इति पुस्तकांतरे ॥

ज्ञात्वा सुगृहीतं कुर्या मंत्रममुं सदा ॥ सेत्स्यंति सर्वकार्याणि तवास्मान्मंत्रतो ध्रुवम् ॥ १४ ॥

गुरुने ऐसे शिक्षा दिया हुआ उपनेय तीन प्रदक्षिणा करके "नमोस्तु २" ऐसें कहता हुआ, गुरुको नमस्कार करे. पीछे गुरुको स्वर्णका जिनोपवीत, सुवर्णमौंजी, श्वेत वस्त्र रेशमी स्वसंपदानुसारें देवे. और सर्वसंघको भी तांबूल वस्त्रादि देवे. ॥ इत्युप नयने व्रतबंधविधिः ॥

अथ व्रतादेशविधि लिख्यते हैं. ॥ तिसही अवसरमें, तिसही संघके संगममें, तिसही गीतवाजंत्रादि उत्सवमें, तिसही वेदचतुष्किकामें प्रतिमास्थापन संयोगमें, व्रतादेशका आरंभ करे. तिसका यह क्रम है. । गृहस्थगुरु, उपनीत पुरुषके कार्पास रेशमी अंतरीय(उत्तरीय)वस्त्र दूर करके मौंजी, जिनोपवीत कौपीन, येह वस्तुयों तिसकी देहमें तैसेंही स्थापके, तिसके ऊपर कृष्णसाराजिन (कालामृगचर्म) वा, वृक्षके वल्कलका वस्त्र पहिरावे. । हाथमें पलाशका दंम देवे. और इस मंत्रको पढे.

"॥ ॐ अर्हं ब्रह्मचार्यसि । ब्रह्मचारिवेषोऽसि अवधिब्रह्मचर्योसि । धृतब्रह्मचर्योसि । धृताजिनदंमोसि । बुद्धोऽसि । प्रबुद्धोऽसि । धृतसम्यक्त्वोऽसि दृढसम्यक्त्वोसि । पुमानसि । सर्वपूज्योऽसि । तदवधिब्रह्मव्रतं आगुरुनिदेशं धारयेः अर्हं ॐ ॥"

ऐसें पढके व्याघ्रचर्ममय आसनके ऊपर, वा कल्पित काष्टमय आसनके ऊपर उपनीतकों बिठलावे तिसके दक्षिण हाथकी प्रदेशिनी अंगुलीमें दर्भसहित कांचनमयी षोडश १६ मासे प्रमाण (पांच गुंजाका एक मासा जाणना) पवित्रिका मुद्रा पहरावे । पवित्रिका परिधापनमंत्रो यथा ॥

"पवित्रं दुर्लभं लोके सुरासुरनृवल्लभम् ॥
सुवर्णं हंति पापानि, मालिन्यं च न संशयः॥ १ ॥

तदपीछे उपनीत, मुखसें पंचपरमेष्टिमंत्र पढता हुआ, गंध पुष्प अक्षत धूप दीप नैवेद्यकरके चारों दिशामें जिनप्रतिमाको पूजे । तदपीछे जिनप्रतिमाको प्रदक्षिणाकरके और गुरुको प्रदक्षणा करके 'नमोस्तु २' कहता हुआ, हाथ जोडके ऐसें कहे ॥ "भगवन् उपनीतोहं" गुरु कहे "सुष्टूपनीतो भव।" फेर उपनीत 'नमोस्तु, कहता हुआ नमस्कार करके कहे । "कृतो मे व्रतबंधः ।" गुरु कहे । "सुकृतोऽस्तु ।" फेर 'नमोस्तु' कहके नमस्कार करके शिष्य कहे । "भगवन् जातो मे व्रतबंधः ।" गुरु कहे । "सुजातोऽस्तु ।" फेर नमस्कार करके शिष्य कहे । "जातोऽहं ब्राह्मणः । क्षत्रियो वा । वैश्यो वा ।" गुरु कहे । "दृढव्रतो भव । दृढसम्यक्त्वो भव ।" फेर शिष्य नमस्कार करके कहे। "भगवन् यदि त्वया कृतो ब्राह्मणोऽहं तदादिश

कृत्यं।" गुरु कहे अर्हंज्जिरा दिशामि। " फेर नमस्कार करके शिष्य कहे। "जगवन् नवब्रह्मगुप्तिगर्ज्ञं रत्नत्रयंममादिष्टं।" गुरु कहे। "आदिष्टं। फेर नमस्कार करके शिष्य। "जगवन् नवब्रह्मगुप्तिगर्ज्ञं रत्नत्रयं मम समादिश।" गुरु कहे। "समादिशामि।" फेर नमस्कार करके शिष्य जगवन् नवब्रह्मगुप्तिगर्ज्ञं रत्नत्रयं मम समादिष्टं।" गुरु कहे। "समादिष्टं।" फेर नमस्कार करके शिष्य कहे। "जगवन् नवब्रह्मगुप्तिगर्ज्ञं रत्नत्रयं ममानुजानीहि"। गुरु कहे। "अनुजानामि" फेर नमस्कार करके शिष्य कहे। "जगवन् नवब्रह्मगुप्तिगर्ज्ञं रत्नत्रयं ममानुज्ञातं।" गुरु कहे। "अनुज्ञातं"। फेर नमस्कार करके शिष्य कहे। "जगवन् नवब्रह्मगुप्तिगर्ज्ञं रत्नत्रयं मया स्वयं करणीयं।" गुरु कहे। "करणीयं।" फेर नामस्कार करके शिष्य कहे। "जगवन् नवब्रह्मगुप्तिगर्ज्ञं रत्नत्रयं मया अन्यैः कारयितव्यं।" गुरुकहे"कारयितव्यं" फेरनमस्कार करके शिष्यकहे। "जगवन् नवब्रह्मगुप्तिगर्ज्ञं रत्नत्रयं कुर्वतोऽन्ये मया अनुज्ञातव्याः" गुरु कहे। "अनुज्ञातव्याः" क्षत्रियको यह विशेष है 'जगवन् अहं क्षत्रियो जातः' आदेश समादेश दोनों कहने, अनुज्ञा न कहनी. करणकारणमें 'कर्त्तव्यं' 'कारयितव्यं' ऐसें कहना, 'अनुज्ञातव्यं' ऐसे न कहना। और वैश्यको

आदेश ही कहना, समादेश अनुज्ञा यह दोनों न कहने.। 'कर्त्तव्यं' कहना, 'कारायितव्यं' अनुज्ञातव्यं यह न कहने.। तदपीछे उपनीत हाथ जोरुके कहे.। 'हे भगवन्! आदिश्यतां व्रतादेशः।' तब गुरु आदेश करे अर्थात् व्रतादेश कथन करे। तहां प्रथम ब्राह्मणप्रति व्रतादेश कहते हैं. यथा॥

॥ मूलम् ॥

परमेष्ठिमहामंत्रो विधेयो हृदये सदा॥
निर्ग्रंथानां मुनीन्द्राणां कार्यं नित्यमुपासनम्॥ १॥
त्रिकालमर्हत्पूजा च सामायिकमपि त्रिधा॥
शक्रस्तवैस्सप्तवेलं वंदनीया जिनोत्तमाः॥ २॥
त्रिकालमेककालं वा स्नानं पूतजलैरपि॥
मद्यं मांसं तथा क्षौद्रं तथोडुंबरपंचकम्॥ ३॥
आमगोरससंपृक्तं द्विदलं पुष्पितौदनम्॥
संधानमपि संसक्तं तथा वै निशि भोजनम्॥ ४॥
शूद्रान्नं चैव नैवेद्यं नाश्नीयान्मरणेऽपि हि॥
प्रजार्थं गृहवासेऽपि संभोगो न तु कामतः॥ ५॥
आर्यवेदचतुष्कं च पठनीयं यथाविधि॥
कर्पणं पाशुपाल्यं च सेवावृत्तिं विवर्जयेः॥ ६॥
सत्यं वचः प्राणिरक्षामन्यस्त्रीधनवर्जनम्॥
कषायविषयत्यागं विदध्याः शौचभागपि॥ ७॥
प्राय. क्षत्रियवैश्यानां न भोक्तव्यं गृहे त्वया॥
ब्राह्मणानामार्हतानां भोजनं युज्यते गृहे॥ ८॥

स्वज्ञातेरपि मिथ्यात्ववासितस्य पलाशिनः ॥
न ज्ञोक्तव्यं गृहे प्रायः स्वयंपाकेन ज्ञोजनम् ॥ ए ॥
आमान्नमपि नीचानां न ग्राह्यं दानमंजसा ॥
भ्रमता नगरे प्रायः कार्यः स्पर्शों न केनचित् ॥१०॥
उपवीतं स्वर्णमुद्रां नांतरीयमपि त्यजेः ॥
कारणांतरमुत्सृज्य नोष्णीषं शिरसि व्यधाः ॥ ११ ॥
धर्मोपदेशः प्रायेण दातव्यः सर्वदेहिनाम् ॥
व्रतारोपं परित्यज्य संस्कारान् गृहमेधिनाम् ॥ १२ ॥
निर्ग्रंथगुर्वनुज्ञातः कुर्याः पंचदशापि हि ॥
शांतिकं पौष्टिकं चैव प्रतिष्टामर्हदादिषु ॥ १३ ॥
निर्ग्रंथानुज्ञया कुर्याः प्रत्याख्यानं च कारयेः ॥
धार्यं च दृढसम्यक्त्वं मिथ्याशास्त्रं विवर्जयेः ॥१४॥
नानार्यदेशे गंतव्यं त्रिशुद्ध्याशौचमाचरेः ॥
पालनीयस्त्वया वत्स व्रतादेशो ज्ञवावधिः ॥ १५ ॥

॥ इतिब्राह्मणव्रतादेशः ॥

(ज्ञाषार्थः) परमेष्टिमहामंत्र सदा हृदयमें धारण करना, निर्ग्रंथ मुनींद्रोंकी नित्य उपासना करनी। तीन कालमें अरिहंतकी पूजा करनी, तीनवार सामायिक करनी, शक्रस्तवमें सातवार चैत्यवंदना करनी. ढाने हुए शुद्ध जलसें त्रिकालमें वा, एककालमें स्नान करना, मदिरा, मांस, मधु, माखण पांच जातिके उडुंबरफल, आमगोरससंयुक्त अर्थात्

कच्चे विना गरम करे गोरस दूध दही छाछके साथ द्विदल अन्न, जिसपर नीली फूली आजावे सो अन्न, जीवोत्पत्तिसंयुक्त संधान अर्थात् तीन दिन उपरांतका आचार, रात्रिभोजन, शूद्रका अन्न, देवके आगे चढा नैवेद्य इन पूर्वोक्त वस्तुयोंको मरणांतमें भी न खाना। संतानोत्पत्तिकेवास्ते गृहवासमें स्त्रीसें संभोग करना न तु कामासक्त होके। चारों आर्य जैन वेद विधिसें पढने खेती, पशुपालपणा और सेवा वृत्ति (नौकरी) येह नही करने। शुचिमान् होके सत्य वचन बोलना, प्राणिकी रक्षा करनी, अन्य स्त्री और अन्य धन येह वर्जने, कषाय विषयको त्यागने, प्राय. क्षत्रिय और वैश्योंके घरमें तेरे भोजन न करना, आर्हत् ब्राह्मणोके घरमें भोजन करना तुझको योग्य है। अपनी ज्ञातिका जो मिथ्या त्ववासित होवे, और मांसाहारी होवे तिसके घरमें भी भोजन नही करणा। प्राय. आपही पकाके भोजन करना। कच्चे अन्नका भी दान नीचोंकेहाथका न ग्रहण करणा, नगरमें भ्रमण करतां किसीका भीप्राय. स्पर्श न करना। उपवीत, स्वर्णमुद्रा और अंतरीय, इनको त्याग न करने कारणांतरको वर्जके शिरके ऊपर उष्णीष (पगडी) धारण न करना। प्राय सर्व मनुष्योंका धर्मोपदेश देना, व्रतारोपको वर्जके निर्ग्रंथ गुरुकी आज्ञासें पंचदश १५ संस्कार

गृहस्थांको करने तथा शांतिक, पौष्टिक, जिनप्रति माकी प्रतिष्ठादि करावने । निर्ग्रंथकी आज्ञासें प्रत्याख्यान करना, और अन्यको करावना; सम्यक्त्वको दृढ धारण करना, मिथ्याशास्त्रकी श्रद्धा वर्जनी। अनार्य देशमें जाना नही, तीनों शुद्धियां गरके शौच आचरण करना; हे वत्स ! तैनें पूर्वोक्त व्रतादेश जवतग संसारमें रहे तवतक पालना ॥ १५ ॥

इतिब्राह्मणव्रतादेशः ॥ अथक्षत्रियव्रतादेशः ॥

॥ मूलम् ॥

परमेष्टिमहामंत्रः स्मरणीयो निरंतरम् ॥
शक्रस्तवैस्त्रिकालं च वंदनीया जिनेश्वराः ॥ १ ॥
मद्यं मांसं मधु तथा संधानोडुंवरादि च ॥
निशि भोजनमेतानि वर्जयेदतियत्नतः ॥ २ ॥
दुष्टनिग्रहयुद्धादिवर्जयित्वा वधोंगिनाम् ॥
न विधेयः स्थूलमृषावादस्त्यक्तव्य एव च ॥ ३ ॥
परनारीं परधनं त्यजेदन्यविकत्थनम् ॥
युक्त्यासाधूपासनं च द्वादशव्रतपालनम् ॥ ४ ॥
विक्रमस्याविरोधेन विधेयं जिनपूजनम् ॥
धारणं चित्तयत्नेन स्वोपवीतांतरीययोः ॥ ५ ॥
लिंगिनामन्यविप्राणामन्यदेवालयेष्वपि ॥
प्रणामदानपूजादि विधेयं व्यवहारतः ॥ ६ ॥
पाच जातिके सर्वकर्म्मं धर्मकर्म्मापि कारयेत् ॥
...र्हदृढसम्यक्त्ववासितः ॥ ७ ॥

रणे शत्रुसमाकीर्णे धार्यो वीररसो हृदि ॥
युद्धे मृत्युभय नैव विधेयं सर्वथापि हि ॥ ८ ॥
गोब्राह्मणार्थे देवार्थे गुरुमित्रार्थ एव च ॥
स्वदेशभंगे युद्धेत्र सोढव्यो मृत्युरप्यलम् ॥ ९ ॥
ब्राह्मणक्षत्रियोर्नैव क्रियाभेदोस्ति कश्चन ॥
विहायान्यव्रतानुज्ञाविद्यावृत्तिप्रतिग्रहान् ॥ १० ॥
दुष्टनिग्रहणं युक्तं लोभं भूमिप्रतापयोः ॥
ब्राह्मणव्यतिरिक्तं च क्षत्रियोदानमाचरेत् ॥ ११ ॥

॥ इतिक्षत्रियव्रतादेशः ॥

अथ क्षत्रियव्रतादेश कहते हैं ॥ परमेष्ठिमहा मंत्र निरंतर स्मरण करना शक्रस्तवोंकरके त्रिकाल जिनेश्वरको वंदन करना । मद्य, मांस, मधु, संधान, पांच उंबरादि, (आदिशब्दसें अमगोरससंयुक्त द्विदल, पुष्पितौदन,) और रात्रिभोजन, इनको यत्नसें वर्जे । दुष्टका निग्रह करना, और युद्धादि वर्जके प्राणियोका वध न करना, स्थूलमृषावाद न बोलना, परस्त्रीका और परधनका त्याग करना, परकी निंदाका त्याग करे, युक्तिसें साधुयोंकी उपासना करे, और बारां व्रत पालन करे । अपनी शक्ति अनुसार जिनपूजन करना चित्तयत्नसें अर्थात् उपयोगसें स्वउपवीत, और अंतरीयको धारण करना । लिंगियोको, अन्य ब्राह्मणोंको, और अन्यदेवालयो मे भी, प्रणाम दान पूजादि काम पडे तो, लोक

स्वसत्त्वस्यापरित्यागो दानं वित्तानुसारतः ॥
आयोचितो व्ययश्चैव काले काले च मोचनम् ॥ ३ ॥
न वासोऽल्पजले देशे नदीगुरुविवर्जिते ॥
न विश्वासो नरेन्द्राणां नागरीयनियोगिनाम् ॥ ४ ॥
नारीणां च नदीनां च लोभिनां पूर्ववैरिणाम् ॥
कार्यं विना स्थावराणामहिंसा देहिनामपि ॥ ५ ॥
नासत्याहितवाक् चैव विवादो गुरुभिर्न च ॥
मातापित्रोर्गुरोश्चैव माननं परतत्त्ववत् ॥ ६ ॥
शुभशास्त्राकर्णनं च तथा नाऽभक्ष्यभक्षणम् ॥
अत्याज्यानां न च त्यागोप्यऽघात्यानामघातनम् ॥ ७ ॥
अतिथौ च तथा पात्रे दीने दानं यथाविधि ॥
दरिद्राणां तथांधानामापन्नारभृतामपि ॥ ८ ॥
हीनाङ्गानां विकलानां नोपहासः कदाचन ॥
समुत्पन्नक्षुत्पिपासाघृणाक्रोधादिगोपनम् ॥ ९ ॥
अरिषड्वर्गविजयः पक्षपातो गुणेषु च ॥
देशाचाराऽऽचरणं च भयं पापापवादयोः ॥ १० ॥
उद्वाहः सदृशाचारैः समजात्यन्यगोत्रजैः ॥
त्रिवर्गसाधनं नित्यमन्योन्याप्रतिबंधतः ॥ ११ ॥
परिज्ञानं स्वपरयोर्देशकालादिचिंतनम् ॥
सौजन्यं दीर्घदर्शित्वं कृतज्ञत्वं सलज्जता ॥ १२ ॥
परोपकारकरणं परपीडनवर्जनम् ॥
पराक्रमः परिभवे सर्वत्र क्षांतिरन्यदा ॥ १३ ॥
जलाशयश्मशानानां तथा दैवतसद्मनाम् ॥

निद्राहाररतादीनां संध्यासु परिवर्जनम् ॥ १४ ॥
प्रवेशोल्लंघनं चैव तटे शयनमेव च ॥
कूपस्य वर्जनं नद्यालंघनं तरणी विना ॥ १५ ॥
गुर्वासनादिशय्यासु तालवृंदे कुभूमिषु ॥
दुर्गोष्ठिषु कुकार्येषु सदैवासनवर्जनम् ॥ १६ ॥
न लंघनं च गर्त्तादेर्नदुष्टस्वामिसेवनम् ॥
न चतुर्थीदुनभस्त्रीशक्रचापविलोकनम् ॥ १७ ॥
हस्त्यश्वनखिनां चापवादिनां दूरवर्जनम् ॥
दिवासंभोगकरणं वृक्षस्योपासनं निशि ॥ १८ ॥
कलहं तत्समीपं च वर्जनीयं निरंतरम् ॥
देशकालविरुद्धं च भोज्यं कृत्यं गमागमौ ॥ १९ ॥
भाषितं व्यय आयश्च कर्त्तव्यानि न कर्हिचित् ॥
चातुर्वर्ण्यस्य सर्वस्य व्रतादेशोयमुत्तमः ॥ २० ॥
॥ इतिचातुर्वर्ण्यस्यसमानोव्रतादेशः ॥

अथ चारों वर्णोका समान व्रतादेश कहते हैं ॥ अपने पूज्य गुरुके कहे देवधर्मादिकापालना, देव पूजा करनी, साधुकी यथायोग्य पूजा करनी, ब्राह्मण और लिंगधारीको प्रणाम करना. । न्यायसें धन उपार्जन करना परकी निंदा वर्जनी, किसीका भी अवर्णवाद न बोलना, राजादिविषयक तो विशेषसें अवर्णवाद न बोलना. । अपने सत्वको छोडना नही, धनके अनुसार दान देना, लाभानुसार खरच करना, भोजनके कालमें भोजन करना. । थोडे जल

करावे. फिर पूर्वाभिमुख होके शक्रस्तव पढे. । उस पीछे गृहस्थगुरु, आसन ऊपर बेठ जावे, और शिष्य 'नमोस्तु' कहता हुआ गुरुके पगोंमें पडके ऐसें कहे, "भगवन् भवद्भिर्मम व्रतादेशो दत्तः" तब गुरु कहे, "दत्तःसुगृहीतोस्तु सुरक्षितोस्तु स्वयं तर परं तारय संसारसागरात्" ऐसें कहके नमस्कार पढता हुवा ऊठके दोनों (गुरु शिष्य) चैत्यवंदन करें. उसपीछे ब्राह्मणने, विप्र क्षत्रिय वैश्यके घरमें भिक्षाटन करना; क्षत्रियने शस्त्र ग्रहण करना; और वैश्यने अन्नदान करना. ॥

इत्युपनयने व्रतादेशः ॥

अथ व्रतविसर्गःकथ्यतेः—अथ व्रतविसर्ग कहते हैं. ॥ ब्राह्मणने आठ वर्षसें लेके सोलां वर्षपर्यंत, दंड और अजिन धारण करके, भिक्षावृत्ति करके भोजन करना, यह उत्तम पक्ष है. क्षत्रियने दंड अजिन धारण करके दश वर्षसें लेके सोलां वर्ष पर्यंत आपहिं पाक करके, देवगुरुकी सेवामें तत्पर होके, भोजन करना; और वैश्यने दंड अजिन धारण करके स्वकृत भोजन करके बारां वर्षसें लेके सोलां वर्ष पर्यंत भोजन करना; यह उत्तम पक्ष है. । यदि कार्यव्यग्रतासें तितने दिन न रह सके तो, छ (६) मास पर्यंत रहना. तदभावे एक मास पर्यंत, तदभावे पक्ष पर्यंत, तदभावे तीन दिन रहना. यदि तीन दिन भी न

रह सके तो, तिसही उपनयनव्रतादेशके दिनमेंही विसर्ग करिये, सोही कहने हैं. । उपनीत, तीन २ प्रदक्षिणा करके चारो दिशायोंमें जिनप्रतिमाके आगे पूर्ववत् युगादिजिनस्तोत्र सहित शक्रस्तव पढे. तदपीछे आसनपर बैठे गुरुके आगे नमस्कार करके हाथ जोडके ऐसें कहे ॥ " भगवन् देशका लाद्यपेक्षया व्रतविसर्गमादिश " ॥ गुरु कहे ॥ " आदिशामि ॥ " फिर नमस्कार करके शिष्य कहे ॥ " भगवन्ममव्रतविसर्गे आदिष्टः ॥ गुरु कहे ॥ " आदिष्ट. ॥ " फिर नमस्कार करके शिष्य कहे ॥ " भगवन् व्रतबंधो विसृष्ट ॥ " गुरु कहे ॥ "जिनोपवीतधारणेन अविसृष्टोस्तु स्वजन्मतः षोडशाब्दी ब्रह्मचारी पाठधर्मेनिरतस्तिष्ठेः ॥ उसपीछे पंचपरमेष्ठिमंत्र पढता हुआ शिष्य, मौंजी, कौपीन, वल्कल, दंड, इनको दूर करके, गुरुके आगे स्थापन करे; और आप जिनोपवीतधारी श्वेतवस्त्र उत्तरीय होके गुरुके आगे नमस्कार करके बैठे, तब गुरु तिस वारां तिलकधारी उपनीतके आगे उपनयनका व्याख्यान करे. ।

तद्यथा ॥ आठ वर्षके ब्राह्मणको दश वर्षके क्षत्रियको, और बारां वर्षके वैश्यको, उपनयन करना तिसमे गर्भमास भी बीचमेंही गणने । तथाच ॥ "जिनोपवीतमिति जिनस्य उपवीतं मुद्रासूत्रमित्यर्थः"

जिनका उपवीत अर्थात् मुद्रासूत्र सो कहावे जिनोपवीत. । नवब्रह्मगुप्ति गर्भरत्नत्रय, येह पुरा, श्रीयुगादिदेवने गृहस्थीवर्णत्रयको अपनी मुद्राका धारण करना यावत् जीवतां२ कहा था. । तदपीछे तीर्थके व्यवछेद हुए, मिथ्यात्वको प्राप्त ब्राह्मणोंनें हिंसा प्ररूपणेसें चारों वेदको मिथ्या पथमें प्राप्त करे हुए, पर्वत और वसुराजासें प्रायः हिंसक यज्ञके प्रवृत्त हुए, 'यज्ञोपवीत' ऐसा नाम धारण करा. मिथ्या दृष्टि यथेछासें प्रलाप करो ! परंतु जिनमतमें तो, जिनोपवीतही नाम है, नतु यज्ञोपवीत. तिसवास्ते तैनें इस जिनोपवीतको अछीतरें धारण करना मासमासपीछे नवीन धारण कराना, प्रमादसें जिनो, पवीत जाता रहे, वा टुट जावे तो, तीन उपवास करके नवीन धारण करना. प्रेतक्रियामें दक्षिण स्कंधके ऊपर, और वाम कक्षाके हेठें, ऐसें विपरीत धारण करना. क्योंकि, सो विपरीत कर्म है. । मुनि जी, मृत मुनिके त्यागनेमें तथाविध विपरीतही वस्त्र पहेनते हैं, जिसवास्ते, तूं जन्मकरके शूद्र आजतक था सांप्रत संस्कारविशेषकरके ब्रह्मगुप्तिके धारणेसें ब्राह्मण, वा क्षतात्राणेन-रक्षणकरनेसें क्षत्रिय, वा न्यायधर्ममें प्रवेश करनेसें वैश्य हुआ है; तिसवास्ते, क्रियासहित इस जिनोपवीतको अछीतरें ग्रहण करना अछीतरें रखना. तेरेको सत्कर्मवासना उपन

यनविधि क्षयरहित हो एसे व्याख्यान करके पर मेष्ठिमंत्र पढकर दोनों गुरु शिष्य खडे होवे पीछे चैत्यवंदन, और साधुवंदन करे. ॥ इत्युपनयने व्रत विसर्गविधिः ॥ अथ गोदानविधिर्यथा ॥

अथ गोदानविधि लिखते हें ॥ तदा व्रतविसर्गके अनंतर शिष्यसहित गुरु, जिनको तीन २ प्रदक्षिणा करके पूर्ववत् चारों दिशामें शक्रस्तवका पाठ करे पीछे गृहस्थगुरु, आसनपर बैठे तब शिष्य गुरुको तीन प्रदक्षिणा करके नमस्कार करके हाथ जोमके खमा होके, गुरुको विज्ञापना करे यथा ॥

"॥ जगवन् तारितोहं, निस्तारितोहं, उत्तमः कृतोहं, सत्तम.कृतोहं, पूत. कृतोहं, पूज्यकृतोहं, तद्भगवन्नादिश, प्रमाद बहुले गृहस्थधर्म्में, मम किंच नापि रहस्यजूतं सुकृतं ॥"

हे जगवान् ! तारा मुझको, निस्तारा मुझको, उत्तम करा मुझको, अतिशयसाधु (श्रेष्ठ) करा मुझको, पवित्रकरा मुजको, पूज्य करा मुझको, तिसवास्ते, हे जगवन् ! प्रमादबहुल गृहस्थधर्ममे मेरेको कुछजी रहस्यजूत सुकृत कथन करो. ॥ तब गुरु कहे ॥

"॥ वत्स ! सुष्ठ्वनुष्ठितं सुष्ठु पृष्टं ततः श्रूयताम् ॥"

हे वत्स ! अच्छा करा, जला पूछा, तिसवास्ते तूं श्रवण कर. ॥

दानं हि परमो धर्म्मो दानं हि परमा क्रिया ॥
दानं हि परमो मार्ग्गस्तस्माद्दाने मनः कुरु ॥ १ ॥
दया स्यादभयं दानमुपकारस्तथाविधः ॥
सर्वो हि धर्म्मसंघातो दानेन्तर्भावमर्हति ॥ २ ॥
ब्रह्मचारी च पाठेन भिक्षुश्चैव समाधिना ॥
वानप्रस्थस्तु कष्टेन गृही दानेन शुध्यति ॥ ३ ॥
ज्ञानिनः परमार्थज्ञा अर्हन्तो जगदीश्वराः ॥
व्रतकाले प्रयच्छन्ति दानं सांवत्सरं च ते ॥ ४ ॥
गृह्णतां प्रीणनं सम्यक् ददतां पुण्यमक्षयम् ॥
दानतुल्यस्ततो लोके मोक्षोपायोऽस्ति नाऽपरः ॥ ५ ॥

अर्थः—दानही परम उत्कृष्ट धर्म है, दानही परमा क्रिया है, दानही परम मार्ग है, तिसवास्ते दान देनेमें मन कर. । अभयदानसें दया होवे है, दानसेंही तथाविध उपकार होवे है, सर्वही धर्म समूह दानमें अंतर्भाव हो सक्ता है। ब्रह्मचारी पाठ करके, साधु समाधि करके, वानप्रस्थ कष्ट करके, और गृहस्थी दान करके शुद्ध होता है. । तीन ज्ञानके धर्त्ता परमार्थके जाणकार, ऐसें अर्हंत भगवंत जगदीश्वर भी व्रतसमयमें सांवत्सर दान देते हैं. । दान ग्रहण करनेवालेको तो, दान तृप्त करता है; और देनेवालेको अक्षय पुण्य प्राप्त करा ता है; तिसवास्ते दानके समान दूसरा कोई मोक्ष का उपाय लोकमें नही है. ॥ ५ ॥ जिसवास्ते हे

वत्स ! तैनें ब्राह्मणपणा, वा क्षत्रियपणा, वा वैश्य पणा प्राप्त करा है, अंगीकार करा है, तिसवास्ते हे वत्स ! तूं गृहस्थधर्ममें मोक्षके सोपानरूप दान देनेका प्रारंभ कर । तब नमस्कार करके शिष्य कहे, हे भगवन् ! मुझको दानका विधी कहो. । गुरु कहे ' आदिशामि ' कहता हूं । यथा ॥

गावो भूमिः सुवर्णं च रत्नान्यन्नं च नक्तकाः ॥
गजाश्वाइति दानं तदष्टधा परिकीर्त्तयेत् ॥ १ ॥
एतच्चाष्टविधं दानं विप्राणां गृहमेधिनाम् ॥
देयं न चापि यतयो गृह्णन्त्येतच्चनिःस्पृहा. ॥ २ ॥
यतिभ्यो भोजनं वस्त्रं पात्रमौषधपुस्तके ॥
दातव्यं द्रव्यदानेन तौ द्वौ नरकगामिनौ ॥ ३ ॥

अर्थः–गौ १, भूमि २, सुवर्ण ३, रत्न ४, अन्न ५, नक्तक वस्त्रविशेष ६, हाथी ७, और घोडा ८, येह आठ प्रकारका दान कहाहे । यह पूर्वोक्त आठ प्रकारका दान, गृहस्थी ब्राह्मणगुरुयोंको देना. और निःस्पृह यति साधु मुनिराज, इस दानको नही लेते हैं । साधवोको तो, भोजन, वस्त्र, पात्र, औषध पुस्तक, इनका दान देना. साधुकों द्रव्य (धन) का दान देनेसें, देनेलेनेवाले दोनोंही नरकगामी होते हैं. ॥ ३ ॥ तिसवास्ते प्रथम गोदान ग्रहण करना उपनीत, वछडेसहित कपिला, वा पाटला, वा श्वेत रंगकी, स्नापित, चर्चित, भूपित, धेनुको, आगे ल्या

यके पूंछसे पकडके, रूप्यमय खुरा है जिसके, स्वर्ण मय शृंग है जिसके, ताम्रमय पृष्ट है जिसकी, कांस्य मय दोहपात्र है जिसका, ऐसी धेनु, गृहस्थगुरुके तांइ देवे । गुरु तिस गौकी पूंछको हाथमें धारण करकें, यह वेदमंत्र पढे । यथा ॥

" ॥ ॐ अर्हं गौरियं धेनुरियं प्रशस्यपशुरियं सर्वोत्तमक्षीरदधि घृतेयं पवित्रगोमयमूत्रेयं सुधास्त्राविणीयं रसोद्भाविनीयं पूज्येयं हव्येयं अभिवाद्येयं तद्दत्तेयं त्वया धेनुः कृतपुण्यो भव प्राप्त पुण्यो भव अक्षयं दानमस्तु अर्हं ॐ ॥ "

यह कहकर गृहीगुरु धेनुको ग्रहण करे. शिष्य तिस गौकेसाथ द्रोणप्रमाण सात धान्य, तुलामात्र षट् (६) रस और पुरुषतृप्तिमात्र षट् (६) विकृती (विगय) देवे ॥ इतिगोदानम् ॥ अन्य सर्व भूमिरत्नादिदानोंविषे यह मंत्र पढना. । यथा ॥

" ॥ ॐ अर्हं एकमस्ति दशमक्कमस्ति शतमस्ति सहस्त्रमस्ति अयुतमस्ति लक्षमस्ति प्रयुतमस्ति कोट्यस्ति कोटिदशकमस्ति कोटिशतक्कमस्ति कोटिसहस्त्रमस्ति कोट्ययुतमस्ति कोंटिलक्षमस्ति कोटिप्रयुतमस्ति कोटाकोटिरस्ति संख्येयमस्ति असंख्येयमस्ति अनंतानंतमस्ति दान फलमस्ति तदक्षयं दानमस्तु ते अर्हं ॐ ॥ " इति परेषां दानानां मंत्रपाठः ॥

यहां उपनयनमें गोदानकाही निश्चय है, शेष दान क्रमकरके अन्यदा भी देना. गोदानादि दान गृहस्थगुरु ब्राह्मणोंकोही देना निःस्पृह यतियोंको न देना तथा तिन यतियोंको, अन्न, पान, वस्त्र, पात्र, भेषज, वसति, पुस्तकादि दानमें 'धर्मलाभः' यही मंत्र जाणना । अथ गृहस्थगुरु, उपनीतसें गोदान लेके, पर्णानुज्ञा देके, चैत्यवंदन, और साधु वंदन करायके, तैसेंही संघके मिले हुए, मंगलगीत वाजंत्रोंके वाजते हुए, शिष्यको साधुयोंकी वसतिमें (उपाश्रयमें) ले जावे. तहां मंडलीपूजा, वासक्षेप, साधुवंदनादि सर्व पूर्ववत् करना । पीछे चतुर्विध संघकी पूजा, और मुनियोको वस्त्र, अन्न, पात्रादि दान करे. ॥ इति गोदानविधिः ॥

संपूर्णोयं चतुर्विधउपनयनविधिः ॥

अथ शूद्रको उत्तरीयक देनेकी विधि लिख हैं ॥ सात दिन तैलनिषेकस्नान पूर्ववत् जाणना. । तदनंतर यथाविधि पौष्टिक, सर्व शिरका मुंडन, वेदिकरण, चतुष्किकाकरण, जिनप्रतिमास्थापन, पूर्ववत्. । पीछे गृहस्थगुरु, जिनेश्वरकी अष्टप्रकारी पूजा करे. चारोंदिशायोंमें शक्रस्तव पाठ करे. पीछे गुरु आसनऊपर बैठ जावे तब शिष्य श्वेत वस्त्र पहिरके, उत्तरासंगकरके समवसरण और गुरुको, प्रदक्षिणा करके. 'नमोस्तु २' कहता हुआ, गुरुको

नमस्कार करके हाथ जोमके, खमा होयके कहे. "॥ जगवन् प्राप्तमनुष्यजन्मार्यदेशार्यकुलस्य मम बोधिरूपां जिनाज्ञां देहि ॥" गुरु कहे "॥ ददामि ॥" शिष्य फिर नमस्कार करके कहे "॥ नयोग्योहमुपनयनस्य तज्जिनाज्ञां देहि ॥" गुरु कहे ददामि ॥" पीछे द्वादश (१२) गर्जतंतुरूप, जिनोपवीतप्रमाण दीर्घ (लंबा) कार्प्पासका, वा रेशमका, उत्तरीयक, परमेष्ठिमंत्र पढता हुआ, जिनोपवीतवत् पहिरावे. पीछे गुरु, पूर्वाजिमुख शिष्यको चैत्यवंदन करावे. । पीछे शिष्य 'नमोस्तु २" कहता हुआ, सुखसें बैठे गुरुके पगोंमें पमके, फिर खडा होके, हाथ जोमके, ऐसें कहे. "॥ जगवन् उत्तरीयकन्यासेन जिनाज्ञामारोपितोहं ॥" गुरु कहे "सम्यगारोपितोसि तर जवसागरम् ॥" पीछे गुरु सन्मुख बैठे शूद्रके आगे व्रतानुज्ञा देवे. ॥ यथा ॥

सम्यक्त्वेनाधिष्ठितानि व्रतानि द्वादशैव हि ॥
धार्याणि जवता नैव कार्यः कुलमदस्त्वया ॥ १ ॥
जैनर्षीणां तथा जैनब्राह्मणानामुपासनम् ॥
विधेयं चैव गीतार्थाचीर्णं कार्यं तपस्त्वया ॥ २ ॥
न निंद्यः कोपि पापात्मा न कार्यं स्वप्रशंसनम् ॥
ब्राह्मणेज्यस्त्वया मानं दातव्यं हितमिछता ॥ ३ ॥
शेषं चतुर्वर्णशिक्षाश्लोकव्याख्यानमाचरेत् ॥
उत्तरीयपरिभ्रंशे जंगे वाप्युपवीतवत् ॥ ४ ॥

कार्यं व्रतं प्रेतकर्मकरणं वृषल त्वया ॥
युक्तिरेषोत्तरासंगानुज्ञायां च विधीयते ॥ ५ ॥
क्षात्राणामथ वैश्यानां देशकालादियोगतः ॥
त्यक्तोपवीतानां कार्यमुत्तरासंगयोजनम् ॥ ६ ॥
धर्मकार्ये गुरोर्दृष्टौ देवगुर्वालयेऽपि च ॥
धार्यस्तथोत्तरासंगः सूत्रवत् प्रेतकर्मणि ॥ ७ ॥
अन्येषामपि कारूणां गुर्वानुज्ञां विनापि हि ॥
गुरुधर्मादिकार्येषु उत्तरासंग इष्यते ॥ ८ ॥

अर्थः—सम्यक्त्वके संयुक्त द्वादश व्रत तैने धारण करने, और कुलका मद न करना. । जैन ब्राह्मणोंकी उपासना करनी; तथा गीतार्थाचीर्ण तप करना. । किसी पापात्माको निंदना नही, अपनी प्रशंसा नकरनी, हित इच्छके ब्राह्मणको मान देना । शेष चतुर्वर्णशिक्षाश्लोकमें कहे आचारको आचरण करना, (उत्तरीयके परिभ्रंशमें, वा नंगने उपवीतवत् जाणना । व्रत करना, प्रेतकर्म करना,) हे वृषलशूद्र ! उत्तरासंगकी अनुज्ञामें तैने यह युक्ति करनी । देशकालादियोगसें त्याग किया है उपवीत जिनोंनें, वैसे क्षत्रिय और वैश्योंको, उत्तरासंग योजन करना । धर्मकार्यमे,. गुरुकी दृष्टिमें, देव और गुरुके मकानमें, तथा प्रेतकर्ममें, सूत्रकी तरें उत्तरासंग धारण करना. । और नी कारुओंको गुरुकी आज्ञाके विना नी गुरुधर्मादिकार्योंमें उत्त

रासंग इच्छते हैं. । ऐसा व्याख्यान करके गुरु शिष्य को चैत्यवंदन करावे. । परमेष्टिमंत्रका उच्चार और मंत्रव्याख्यान पूर्ववत्. । इतना विशेष है. शूद्रादि कोंको 'नमो' के स्थानमें 'णमो' उच्चारण कराना. इतिगुरुसंप्रदायः । पीछे शिष्यसहित गुरु, उत्सव करते हुए धर्मागारमें जावे. तहां मंगलीपूजा, गुरु नमस्कार, वासक्षेपादि पूर्ववत्. । पीछे मुनियोंको अन्न, वस्त्र, पात्र दान देवे. और चतुर्विध संघकी पूजा करे. ॥ इति उपनयने शूद्रादीनां उत्तरीयक न्यासोत्तरासंगानुज्ञोविधिः ॥

अथ बटूकरणविधिः—अथ बटूकरणविधि लिखते हैं. ॥ जिसवास्ते सम्यक् उपनीत, वेदविद्यासंयुक्त, दुष्प्रतिग्रहवर्जित, अशूद्रान्नभोजन करनेवाले, माह नोंके आचारमें रक्त, सर्व गृहस्थोकेसंस्कारप्रतिष्ठादिक मोंके करानेवाले, ऐसें ब्राह्मण, पूज्य होते हैं. । परंतु त्रियादि राजायोंको, सेवा, अन्नपाक, तिसकी आज्ञा करनी, अभ्युत्थान, चाटुः—मनोहर वचन, प्रशंसा, विना नमस्कारके आशीर्वाद देना, विज्ञानकर्म, कृषि वाणिज्यकरण, तुरंगवृषभादि शिक्षाकरण, इत्यादि कर्म करनेवाले ब्राह्मणयोग्य नहीहै. इसवास्ते एसे ब्राह्मणो वा हरकोइ को शुद्ध ब्राह्मण बनानेके लिए "बटू करण" विधि करनाचहिये. सो बतातेंहै. उक्तं च यतः ॥

च्युतव्रतानां व्रात्यानां तथा नैवेद्यभोजिनाम् ॥
कुकर्म्मणामवेदानामजपानां च शस्त्रिणाम् ॥ १ ॥
ग्राम्याणां कुलहीनानां विप्राणां नीचकर्म्मणाम् ॥
प्रेतान्नभोजिनां चैव मागधानां च वंदिनाम् ॥ २ ॥
घांटिकानां सेवकानां गंधतांबूलजीविनाम् ॥
नटानां विप्रवेषाणां पर्शुरामान्वयायिनाम् ॥ ३ ॥
अन्यजात्युद्भवानां च वदिवेषोपजीविनाम् ॥
इत्यादिविप्ररूपाणां वटूकरणमिष्यते ॥ ४ ॥

अर्थः—व्रतसे भ्रष्ट हुए, संस्कारहीन, नैवेद्यका भोजन करनेवाले, कुकर्मके करनेवाले, जैन वेदको नही जाणनेवाले, वेद मंत्रोंका जप न करनेवाले, शस्त्रको धारण करनेवाले, कुग्रामके वसनेवाले, कुलहीन, नीच कर्मके करनेवाले, प्रेतके अन्नका भोजन करनेवाले, मागध—स्तुतिपाठ पढनेवाले वंदीराजादिकी स्तुति पढनेवाले, घंटिका वजानेवाले, सेवा करनेवाले, गंधतांबूलकरके आजीविका करनेवाले, विप्रवेष धारण करनेवाले नट, पर्शुरामके संतानीय, अन्य जातिसें उत्पन्न हुए, वंदिवेषसे आजीविका करनेवाले, इत्यादि विप्ररूपको वटूकरण इच्छते हे । तिस का यह विधि है प्रथम तिसके घरमे गृहस्थगुरु, यथोक्त विधिसें पौष्टिक करे पीछे तिसको शिखा वर्जके मुंडन करावे, पीछे तिसको तीर्थोदक

वाणिज्ये स्वामिसेवायां कपटं मा कृथाः क्वचित् ॥
ब्रह्मस्त्रीभ्रूणगोरक्षां देवर्षिगुरुसेवनम् ॥ २ ॥
अतिथीनां पूजनं च कुर्याद्दानं यथा धनम् ॥
अथात्मघातं मा कुर्या मा वृथा परतापनम् ॥ ३ ॥
उपवीतमिदं स्थाप्यमाजन्मविधिवत्त्वया ॥
शेषः शिक्षाक्रमः कथ्यश्चातुर्वर्ण्यस्य पूर्ववत् ॥ ४ ॥

अर्थः—परनिंदा, परद्रोह, परधनकी वांछा, मांस भक्षण, म्लेच्छकंद"लशुनादिभक्षण, इनको वर्जना.। वाणिज्यमें स्वामीकी सेवामें, कदापि कपट न करना; ब्राह्मण, स्त्री, गर्भ और गौ, इन चारोंकी रक्षा करनी देव ऋषि और गुरुकी सेवा करनी.। अतिथीयोंका पूजन करना, धनके अनुसार दान देना, आत्मघात नही करना, परको पीडा न करनी. । जन्मपर्यंत यावज्जीवे तबतक विधिपूर्वक उपवीत धारण करना, शेष शिक्षाक्रम पूर्ववत् चारों वर्णोंका कथन करना. ॥ पीछे सो बटुकृत, गुरुको स्वर्ण, वस्त्र, धेनु, अन्न, दान करे.। यहां बटुकरणमें वेदी, चतष्किका, समवसरण, चैत्यवंदन, व्रतानुज्ञा, व्रतविसर्ग, गोदान, वासक्षेपादि नही है.॥ इति बटुकरणविधिः॥

इति द्वादशमोपनयनादिसंस्कारवर्णं समाप्तम् ॥



॥ अथ अध्ययनारंभ संस्कार लिख्यते ॥

अश्विनी, मूल, पूर्वा ३, मृगशीर्ष, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, अश्लेषा, हस्त, शतभिषा, स्वाति, चित्रा, श्रवण, धनिष्ठा, येह नक्षत्र और बुध, गुरु, शुक्र, येह वार विद्यारंभमें शुभ है. अर्थात् इनोंमें प्रारंभ करी विद्या प्राप्त होती है रवि और चंद्र, मध्यम है मंगल और शनिवार, त्यागने योग्य है । अमावास्या, अष्टमी, प्रतिपत् (एकम,) चतुर्दशी, रिक्ता, षष्ठी, नवमी, येह तिथियें विद्यारंभमें सदाही वर्जनी. ।

अथ उपनयनसदृश दिन और लग्नमें विद्यारंभ संस्कारका आरंभ करिये, तिसका यह विधि है. । गृहस्थगुरु प्रथम विधिसें उपनीत पुरुषके घरमें पौष्टिक करे; पीछे गुरु, मंदिरमें, वा उपाश्रयमें, वा कदंबवृक्षकेतले, कुशाके आसनउपर आप बैठके, शिष्यको वामेपासे कुशासनोपरि बिठलाके तिसके दक्षिण कानको पूजके तीनवार सारस्वत मंत्र पढे. पीछे गुरु, अपने घरमें, वा पाठ शालामे वा पौषधागारमें, शिष्यको पालखी, वा घोडेपर चढायके मंगलगीतोंके गाते हुए, दान देते हुए, वाजंत्र वाजते हुए, यति गुरुकेपास लेजाके मंडलीपूजापूर्वक वास क्षेप करवाके, पाठशालामें लेजावे पीछे गुरु शिष्यको आगे येह शिक्षाश्लोक पढे. । यथा ॥

अज्ञानतिमिरांधानां, ज्ञानांजनशलाकया ॥
नेत्रमुन्मीलितं येन, तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १ ॥
यासां प्रसादादधिगम्य सम्यक्, शास्त्राणि विंदन्ति परं पदंज्ञाः ॥ मनीषितार्थप्रतिपादकाभ्यो नमोस्तु ताभ्यो गुरुपा डुकाभ्यः ॥ २ ॥
सत्येतस्मिन्नरतिरतिदं गृह्यते वस्तु दूरा, दप्यासन्नेप्य सति तु मनस्याप्यते नैव किंचित् ॥ पुंसामित्यप्यवग तवतामुन्मनीभावहेता, विच्छा वाढं भवति न कथं सद्गुरूपासनायाम् ॥ ३ ॥
इति मत्वा त्वया वत्स ! त्रिशुध्धोपासनं गुरोः ॥
विधेयं येन जायंते गोधीकीर्तिधृतिश्रियः ॥ ४ ॥

ऐसें शिष्यको शिक्षा देके, और तिससें स्वर्ण वस्त्र दक्षिणा लेके, गुरु अपने घरको जावे. पीछे उपाध्याय, सर्वको पहिले मातृका पढावे; पीछे विप्रको प्रथम आर्यवेद पढावे, पीछे षडंगी, पीछे न्याय व्याकर्ण धर्मशास्त्र पढावे; क्षत्रियको भी ऐसेंही चतुर्दश विद्या पढावे. पीछे आयुर्वेद, धनुर्वेद, दंड नीति और आजीविकाशास्त्र पढावे. वैश्यको धर्म शास्त्र, नीतिशास्त्र, कामशास्त्र और अर्थशास्त्र पढावे. शूद्रको नीतिशास्त्र और आजीविकाशास्त्र पढा वे, कारुयोंको तिनके उचित विज्ञानशास्त्र पढावे. पीछे सा धुयोंको चतुर्विध आहार वस्त्र पात्र पुस्तक दान देवे.।

इति त्रयोदशमविद्यारंभसंस्कारवर्णनं समाप्तं ॥

अथ विवाह संस्कार विधिलिख्यते ॥

विवाह जो है सो समानकुलशीलवालोंकाही होता है. यतउक्त ॥

ययोरेव समं शीलं, ययोरेव समं कुलम् ॥
तयोर्मैत्री विवाहश्च, न तु पुष्टविपुष्टयोः ॥ १ ॥

तिसवास्ते समकुलशील, समजाति, जाने है देशकृत्य जिनोंके, तिनका विवाहसंवध जोडना योग्य है, तिसवास्ते जो अविकृत है, तिसनें विकृतकुलकी कन्या ग्रहण नही करनी । विकृतकुलं यथा । जिनकेकुलमें शरीरऊपर रोम वहुत होवे, अर्शरोग होवे, दाद होवे, चित्रकुष्टि होवे, नेत्ररोग होवे, उदररोग होवे, ऐसे वंशोंकी कन्या न ग्रहण करनी विकृत कुल होनेसें । कन्या विकृता यथा । वरसें लंवी होवे, हीन अंगवाली होवे, कपिला होवे, ऊची दृष्टिवाली होवे, जिसका जापण और नाम भयानक होवे, ऐसी कन्या विचक्षणोंको त्यागने योग्य है. तथा देवता, ऋषि, ग्रह, तारा, अग्नी नदी, वृक्षादिकके नामसें जो कन्या होवे, तथा जिसके शरीरऊपर वहुत रोम होवे, पिंगाक्षी और घरघरास्वरवाली, ऐसी कन्या भी पाणिग्रहणमे वर्जनी. ॥ कन्यादाने वरस्य विकृतं कुलं यथा ॥ हीन होवे, क्रूर होवे, बधूसहित होवे, दरिद्री होवे,

समें, गुरु शुक्रके अस्त हुए, मलमासमें, और जन्म मासमें, विवाहादि न करना. । मासांतमें, संक्रांति में, संक्रांतिके दूसरे दिनमें, ग्रहणादि सात दिनोंमें जी, पूर्वोक्त कार्य नही करना. । जन्मके तिथि वार, नक्षत्र, लग्नमें; राशि और जन्मके ईश्वरके अस्त हुए, और क्रूर ग्रहोकरके हत हुए जी, विवाह नही करणा. । जन्मराशिमें, जन्मराशि और जन्मलग्नसें बारमें और आठमेमें, और लग्नके अंशके अधिपके छठे, और आठमे घरमें गए हुए, लग्न नही करना. । स्थिर लग्नमें, वा द्विस्वजावलग्नमें, वा सद्गुण करी संयुक्त चर लग्नमें, उदयास्तके विशुद्ध हुए, विवाह करना. परंतु उत्पातादिकरके विदूषितमें नही करना. । लग्न और सप्तम घर, ग्रहकरके वर्जित होवे; तीसरे, छठे, और इग्यारमे घरमें, रवि, मंगल और शनि होवे. । छठे और तीसरे घरमें, तथा पापग्रहवर्जित पांचमें घरमें राहु होवे; लग्नमें तथा पांचमे, चौथे, दशमे, और नवमे घरमें बृहस्पति होवे. । ऐसेंही शुक्र, बुध, होवे; लग्न, छठे, आठमे, बारमे घरसें, अन्यत्र चंद्रमा होवे, सो जी पूर्ण होवे. । क्रूरकरके दृष्ट, और क्रूरसंयुक्त चंद्र वर्जना; क्रूर, और अंतस्थ लग्न और चंद्र वर्जने. । इत्यादि गुणसंयुक्त, दोष विवर्जित लग्नमें, शुज अंशमें शुज ग्रहोंकर दृष्ट हुए, पाणिग्रहण शुज है. ॥ इत्यादि

श्रीजद्रबाहु, वराह, गर्ग, लल्ल, पृथुयशः, श्रीपति, विरचितविवाहशास्त्रके अवलोकनसें शुज लग्न देख के विवाहका आरंज करना. ॥

श्लोकः ॥

ततश्च कुलदेशादि गुरुवाक्यविशेषतः ॥
अनुज्ञातं विवाहादि गर्ग्गादिमुनिजिः पुरा ॥१॥

वृत्तम् ॥

सूर्यः षट् त्रिदशस्थितस्त्रिदशषट्ससाद्यगश्चंद्रमा
जीवः ससनवद्विपंचमगतो वक्रार्कजौ षट्त्रिगौ ॥
सौम्यः षट्द्विचतुर्दशाष्टमगतः सर्वेप्युपांते शुजाः
शुक्रः ससमषट्दशाष्टरहितः शार्दूलवत्रासकृत् ॥ १ ॥

स्त्रीयोंको बृहस्पति बलवान् होवे, पुरुषोको सूर्य बलवान् होवे, और दंपतीको चंद्र बलवान् होवे तो, लग्न शोधना ॥

प्रथम कन्यादानविधि कहते हैं.—पूर्वोक्त समान कुलशीलवाले, अन्य गोत्रीसें कन्या मांगनी. । पूर्वोक्त गुणविशिष्ट वरकेतांइ कन्या देनी. । कन्याके कुलज्येष्ठने वरके कुलज्येष्ठको, नालियर, क्रमुक (सुपारी) जिनोपवीत, व्रीही, दूर्वा, हरिद्रा अपने २ देशकुलोचित वस्तु दानपूर्वक कन्यादान करना. तदा गृहस्थगुरु वेदमंत्र पढे । स यथा ॥

"॥ ॐ अर्हं परमसौजाग्याय, परमसुखाय, परम जोगाय, परमधर्म्माय, परमयशसे, परमसन्तानाय,

जोगोपजोगांतरायव्यवच्छेदाय, इमां अमुकनाम्नीं कन्यां अमुकगोत्रां अमुकनाम्ने वराय अमुकगोत्राय ददाति गृहाण अर्हं ॐ ॥"

पीछे सर्व लोकोंकेतांइ कन्याके पक्षी तांबूल देवे. । तथा दूर रहे विवाहकालमें वरके जीते हुए, सो कन्या अन्यको न देवे.

उक्तंच ॥

"सकृज्जल्पन्ति राजानस्सकृज्जल्पन्ति पण्डिताः ॥
सकृत् प्रदीयते कन्या त्रीण्येतानि सकृत् सकृत्॥१॥"

राजाओं एकवार बोलते हैं, पंडित जन एक वार बोलते हैं, कन्या एकवार दिइजाती हैं. पूर्वोक्त तीन कार्य एकएकहीवार होते हैं. ॥ तथा वर जी, तिस कन्याको वस्त्र, आजरण, गंधादिउत्सवसहित, तिसके पिताके घरमें देवे. । कन्याका पिता जी, परिजनसंयुक्त वरको, महोत्सवसहित वस्त्र मुद्रिकादिक देवे. ॥

लग्नदिनसें पहिले मासमें. वा पक्षमें, अवकासानुसारें दोनों पक्षोंके स्वजनोंको एकठे करके, सांवत्सर–ज्योतिषिकको उत्तम आसनऊपर बिठलाके, तिसके हाथसें विवाहलग्न जूमिके ऊपर लिखवावे; और रूप्य, स्वर्णमुद्रा, फल, पुष्प, दूर्वा करके जन्मलग्नवत् विवाहलग्नको पूजे. । पीछे ज्योतिषिको

दोनों पक्षोंके वृद्धनें वस्त्रालंकार तांबूलदान देना इति विवाहारंजः ॥

पीछे कोरे शरावलोंमें यव वोवने। पीछे कन्याके घरमें मातृस्थापना, और षष्ठीस्थापना, षष्ठी पूजनविधिके प्रकारसें करना । वरके घरमें मातृ स्थापन, और कुलकरस्थापन करना. । परमतमें गण पति, कंदर्प स्थापन करते हैं. सो सुगम, और लोक प्रसिद्ध है. ॥

अथ कुलकर स्थापनविधि कहते हैं. ॥ गृहस्थ गुरु जूमिपर नही पडे गोमय (गोवर) करके लीपी हुई जूमिमें, स्वर्णमय, रूप्यमय, ताम्रमय, वा श्रीप र्णीकाष्ठमय, पट्टा, स्थापन करे । पट्टकस्थापन मंत्रः

"॥ ॐ आधाराय नमः आधारशक्तये नमः ।

इस मंत्रकरके एकवार मंत्रके पट्टेको स्थापन करके, तिस पट्टेको अमृतामंत्रकरके तीर्थजलोंसें अजिपिंचन करके. । पीछे चदन, अक्षत, दूर्वाकरके पट्टेको पूजे. । पीछे आदिमें.

"॥ ॐ नमः प्रथमकुलकराय, कांचनवर्णाय, श्यामवर्ण चंद्रयशः प्रियतमासहिताय, हाकारमात्रोच्चारख्यापितन्याय्यपथाय, विमलवाहनाजिधानाय, इह विवाहमहोत्सवादौ आगछ २, इह स्थाने तिष्ट २, सन्निहितो जव २, क्षेमदो जव २, उत्सवदो जव २, आनंददो जव २, जोगदो जव २, कीर्तिदो जव २,

अपत्यसंतानदो भव २, स्नेहदो भव २, राज्यदो भव २, इदमर्घ्यं पाद्यं बलिं चर्चां आचमनीयं गृहाण २, सर्वोपचारान् गृहाण ॥ " २, पीछे ॥

" ॥ ॐ गंधं नमः । ॐ पुष्पं नमः । ॐ धूपं नमः । ॐ दीपं नमः । ॐ उपवीतं नमः । ॐ भूषणं नमः । ॐ नैवेद्यं नमः । ॐ तांबूलं नमः ॥ "

पूर्वोक्त मंत्रकरी आव्हान संस्थापन करके, इस मंत्रसे अर्घ्य, पाद्य, बलि, चर्चा, आचमनीय, दान देवे. यह छोटे मंत्रोंसें गंधके दो तिलक, दो पुष्प, दो धूप, दो दीप, एक उपवीत, दो स्वर्णमुद्रा, दो नैवेद्य, दो तांबूल, चढावे. ॥१॥ पीछे दूसरे स्थानमें ॥

" ॥ ॐ नमो द्वितीयकुलकराय, श्यामवर्णाय, श्यामवर्णचंद्रकांता प्रियतमासहिताय, हाकारमात्रख्यापितन्याय्यपथाय, चक्षुष्मदभिधानाय, ॥ " शेषं पूर्ववत् ॥ २ ॥

" ॥ ॐ नमस्तृतीयकुलकराय, श्यामवर्णाय, श्यामवर्णसुरूपाप्रियतमासहिताय माकारमात्रख्यापितन्याय्यपथाय, यशस्वअभिधानाय ॥ " ॥ शेषं पूर्ववत् ॥

" ॥ ॐ नमश्चतुर्थकुलकराय, श्वेतवर्णाय, श्यामवर्णप्रतिरूपाप्रियतमासहिताय, माकरमात्रख्यापितन्याय्यपथाय, अभिचंद्राभिधानाय ॥ " शेषं पूर्ववत् ॥

" ॥ ॐ नमः पंचमकुलकराय, श्यामवर्णाय, श्यामवर्णचक्षुःकांताप्रियतमासहिताय, धिक्कारमात्रख्या

पितन्याय्यपथाय प्रसेनजिदभिधानाय ॥" शेषं पूर्ववत् ॥ ५ ॥

"॥ ॐ नम षष्ठकुलकराय, स्वर्णवर्णाय, श्यामवर्णश्रीकांताप्रियतमासहिताय, धिक्कारमात्रख्यापितन्याय्यपथाय मरुदेवाभिधानाय, ॥" शेषं पूर्ववत् ॥ ६ ॥

"॥ ॐ नमः सप्तमकुलकराय, कांचनवर्णाय, श्यामवर्णमरुदेवाप्रियतमासहिताय, धिक्कारमात्रख्यापितन्याय्यपथाय, नाभीअभिधानाय ॥" शेषं पूर्ववत् ॥ ॥ ७ ॥ इतिकुलकरस्थापन पूजनविधिः ॥

यह कुलकरस्थापना और परसमयमें गणेशमदन स्थापना, विवाहके पीछे भी सात अहोरात्रपर्यंत रखनी चाहिये । पीछे वरके घरमें शांतिक, पौष्टिक करे. और कन्याके घरमें मातृपूजा पूर्ववत् । पीछे विवाहकालसें पूर्व सात, नव, इग्यारह, वा तेरह, दिनोंमें वधूवरको अपने २ घरमें, मंगलगीतवाजंत्र पूर्वक, तैलाभिषेक और स्नान, नित्य विवाहपर्यंत कराना. । प्रथमतैलाभिषेकदिनमें, वरके घरसें कन्याके घरमें, तैल, शिरःप्रसाधनगंधद्रव्य, द्राक्षादि खाद्य, शुष्कफल, भेजने । नगरकी औरतें वरके घरमें और कन्याके घरमें, तैल, धान्य, ढौकन करें । वधूवरके घरकी वृद्ध नारीयों तिन तैल धान्यढौकने वाली नारीयोंको, पूडे आदि पक्वान्न देवें । तहां धारणादि देशाचार, कुलाचारोंसें करना. । तैलाभि

षेक, कुलकर गणेशादि स्थापन, कंकणबंध, अन्य विवाहके उपचारदिक सर्व, वधूवरको चंद्रबलके हुए, विवाहवाले नक्षत्रमें करना. । तथा धूलिभक्त, कौर भक्त, सौभाग्यजलल्यावन प्रमुख, कर्म, मंगलगीत वाजंत्रादिसहित देशाचार कुलार विशेषसें करना. । पीछे जेकर, वर, अन्य ग्रामांतर, नगरांतर, वा देशांतरमें होवे तो, तिसकी गमनयात्रा (जान जनेत वरात) कन्याके निवासस्थानप्रति करनी; तिसका विधि यह है. ॥

प्रथम एक दिनमें मातृपूर्वक सर्व लोकोंको भोजन देना; पीछे दूसरे दिन सुस्नात होके, चंदन का लेपन करके, वस्त्रगंधमाल्यादिकरके अलंकृत होके, मुकुट भूषित शिरको करके, घोडेपर, वा हाथी पर, वा पालखीमें आरूढ होके, वर चले. । तिसके समीप, अच्छे वस्त्रोंवाले, प्रमोदसहित, पानबीडे चावे हुए, संबंधी ज्ञातिजन, अपनी २ संपदानु सार घोडेआदि ऊपर चढे हुवे, वा पगोंसें चलते हुए, वरकेसाथ चलें. । दोनों पासे, मंगलगानमें तत्पर ऐसी ज्ञातिकी नारीयां चलें और आगे जैन ब्राह्मणलोक, गृहशांतिमंत्र पढते हुए चलें. ॥

"ॐ अर्हं आदिमोर्हन्, आदिमो नृपः, आदिमो यंता, आदिमो नियंता, आदिमो गुरुः, आदिमः स्रष्टा, आदिमः कर्त्ता, आदिमो भर्त्ता, आदिमो

जयी, आदिमो नयी, आदिमः शिल्पी, आदिमो विद्वान्, आदिमो जल्पकः, आदिमः शास्ता, आदिमो रौद्रः, आदिमः सौम्य, आदिमः काम्यः, आदिमः, शरण्यः, आदिमो दाता, आदिमो वंद्यः, आदिमः स्तुत्यः, आदिमो ज्ञेयः, आदिमो ध्येयः, आदिमो भोक्ता, आदिमः सोढा, आदिम एकः, आदिमोऽनेकः, आदिमः स्थूलः, आदिमः कर्म्मवान् आदिमोऽकर्म्मा, आदिमो धर्म्मवित्, आदिमोऽनुष्टेयः, आदिमोऽनुष्ठाता, आदिमः सहजः, आदिमो दशावान् आदिमः सकलत्रः, आदिमो निःकलत्रः, आदिमो विवोढा, आदिमः ख्यापकः, आदिमो ज्ञापकः, आदिमो विदुरः, आदिमः कुशलः, आदिमो वैज्ञानिक., आदिमः सेव्यः, आदिमोगम्यः, आदिमो विमृश्यः, आदिमो विस्रष्टा, सुरासुरनरोरग प्रणतः, प्राप्तविमलकेवलो यो गीयते, सकलप्राणिगणहितो, दयालुरपरापेक्षापरात्मा, परंज्योतिः, परं ब्रह्मा, परमैश्वर्यभाक्, परंपर, परापरो, जगदुत्तम, सर्वगः, सर्ववित्, सर्वजित्, सर्व्वीयः, सर्व्वप्रकास्य सर्ववंद्यः, सर्वपूज्यः, सर्वात्माऽसंसारोऽव्ययोऽवार्यवीर्यः, श्रीसंश्रयः, श्रेय, संश्रयः, विश्वावश्यायहृत्, संशयहृत्, विश्वसारो, निरंजनो, निर्मम्मो, निःकलंको, निःपाप्मा, निःपुण्यः, निर्मना, निर्वाचा, निर्देहो, निःसंशयो, निराधारो, निरवधिः प्रमाण, प्रमेयं, प्रमाता,

जीवाजीवाश्रवबंधसंवरनिर्जरावंधमोक्षप्रकाशकः, स एव भगवान्, शान्तिं करोतु, तुष्टिं करोतु, पुष्टिं करोतु, ऋद्धिं करोतु, वृद्धिं करोतु, सुखं करोतु, सौख्यं करोतु, श्रियं करोतु, लक्ष्मीं करोतु अर्हं ॐ ॥

ऐसें आर्यवेदके पाठी ब्राह्मण, आगे चलें. । पीछे इसी विधिसें महोत्सवकरके, चैत्यपरिपाटी, गुरुवंदन, मंडलीपूजन, नगरदेवतादिपूजन, करके, नगरके समीप रहे; पीछे पंथमें चलें. । तथा इसी रीतिसें कन्याधिष्ठित नगरमें प्रवेश करना. । तिसही नगरमें विवाहकेवास्ते चले हुए वरका भी, यही विधि जाणना. । तथा नित्यस्नानके अनंतर कौसुंभ सूत्रकरके वधूवरके शरीरका माप करना. । पीछे विवाहदिनके आये हुए, विवाहलग्नसें पहिले, तिस ही नगरका वासी, वा अन्यदेशसें आया वर, तिस ही पूर्वोक्त विधिसें, पाणिग्रहणकेवास्ते चले. तिस की बहिन विशेषकरके लूंणआदि उत्तारण करे. । पीछे वर, आडंबर और गृहस्थगुरुसहित कन्याके घरके द्वारमें आवे. तहां खडे हुए वरको, तिसके सासुजन, कर्पूरदीपकादिकरके आरात्रिक (आरति) करे. । पीछे अन्य स्त्री, जलते हुए अंगारे, और लवणकरके संयुक्त, त्रड त्रड ऐसे शब्द करते हुए, सरावसंपुटको, वरको निरुंछन करके, प्रवेशमार्गके वामे पासे स्थापन करे. । पीछे अन्य स्त्री कौसुं

नसूत्रसें अलंकृत, मंथानको लाके, तिससें, तीन वार वरके ललाटको स्पर्श करे । पीछे वर, वाहन सें नीचे उतरके, वामे पगसे तिस अग्निलवण संयुतसंपुटको खंमित करे (तोडे.) पीछे वरकी सासु, वा कन्याकी मामी, वा कन्याका मामा, कौसुं नवस्त्रको वरके कंठमें मालके, खेंचता हुआ वरको मातृघरमें ले जावे. तहां विभूषाकरके, कौतुकमंग लकरके, प्रथम आसनऊपर बैठी हुई कन्याके वामे पासे, मातृदेवीके सन्मुख, वरको बिठलावे । पीछे गृहस्थगुरु लग्नवेलामे शुभांशके हुए, पीसी हुई समी (खेजमी) की ठाल, और पीपलिकी ठाल, चंदनद्रव्यमिश्रितकरके, तिससें लीपे हुए, वधूवरके दोनों दक्षिण हाथ जोडे. । ऊपर कौसुंनसूत्रसें बांधे ॥ हस्तवधनमंत्रः ॥

"॥ ॐ अर्हं आत्मासि, जीवोसि, समकालोसि, समचित्तोसि, समकर्म्मासि, समाश्रयोसि, समदेहोसि, समक्रियोसि, समस्नेहोसि. समचेष्टितोसि, समाभिला षोसि, समेच्छोसि, समप्रमोदोसि, समविपादोसि, समावस्थोसि, समनिमित्तोसि, समवचाअसि, सम क्षुत्तृष्णोसि, समगमोसि, समागमोसि, समविहा रोसि, समविषयोसि, समशब्दोसि, समरूपोसि, समगंधोसि, समस्पर्शोसि, समेंद्रियोसि, समाश्रवो सि, समबंधोसि, समसंवरोसि, समनिर्जरोसि, सम

मोक्षोसि, तत् एहि एकत्वमिदानीं अर्हं ॐ ॥"
इति हस्तबंधनमंत्रः ॥

यहां समयांतरमें (वैदिक मतमें) मधुपर्क जक्षण, देशांतरमें वरको दो गौयां देनी, और कुलांतरमें कन्याको आनरण पहिरावणे, इत्यादि करते हैं। पीछे वधुवरको मातृघरमें वैठे हुए, कन्याके पक्षी, वेदिकी रचना करें; तिसका विधि यह है. ॥ कितनेक काष्टस्तंन काष्टाच्छादनोंकरके चौकूणी वेदी करते हैं; और कितनेक चारों कूणोंमें स्वर्ण, रूप्य, ताम्र, वा माटीके सात सात कलशोंको ऊपर लघु, लघु, अर्थात् प्रथम वमा उसके ऊपर गेटा, उसके ऊपर फिर गेटा, एवं स्थापन करके चारों पासे चार चार आर्द्र वांसोंसें वांधके वेदि करते हैं. चारों वारणोंमें वस्त्रमय, वा काष्टमय तोरण, और चंदन मालिका वांधते हैं; और अंदर त्रिकोण अग्निका कुंम करते हैं. । वेदी वनाया पीछे गृहस्थगुरु, पूर्वोक्त वेष धारण करके वेदिकी प्रतिष्टा करे. । तिसका विधि यह है. ॥

वास पुष्प अक्षतों सें हाथ जरके ॥

"॥ ॐ नमः क्षेत्रदेवतायै शिवायै क्षाँ क्षीं क्षुँ क्षौँ क्षः इह विवाहमंडपे आगच्छ २ इह वलिपरिज्नोग्यं गृह्ण २ जोगं देहि, सुखं देहि, संततिं देहि यशोदेहि,

ऋद्धिं, देहि, वृद्धिं देहि, बुद्धिं देहि, सर्वसमीहितं देहि, २ स्वाहा ॥"

ऐसें पढके चारों कोणोंमें न्यारेन्यारे वास, माल्य, अक्षत, क्षेप करना; तोरणकी प्रतिष्ठाभी ऐसेंही करनी. तन्मंत्रो यथा ॥

"ॐ ह्रीं श्रीं नमो द्वारश्रिये, सर्वपूजिते, सर्व मानिते, सर्वप्रधाने, इह तोरणस्थासर्वसमीहितं देहि २ स्वाहा ॥"॥ इतितोरणप्रतिष्ठा ॥

पीछे वेदिके मध्यमें अग्निकोणेमें अग्निकुंडमें मंत्रपूर्वक अग्निको स्थापन करे. । अग्निस्थापन मंत्रो यथा ॥

"॥ ॐ रं रां रीं रूं रौं रः नमोऽग्नये, नमो बृह ज्ञानवे, नमोनंततेजसे, नमोनंतवीर्याय, नमोनंतगु णाय, नमो हिरण्यरेतसे, नमछागवाहनाय, नमो हव्यासनाय, अत्र कुंडे आगच्छ २ अवतर २ तिष्ट २ स्वाहा ॥"

समयांतरमें, देशांतरमें वा कुलांतरमें, वेधंतर मेंही, हस्तलेपन करते है. देश कुलाचारादिमें मधु पर्क प्राशनके अनंतर, वेदि, और हस्तलेपसें पहि ले परस्पर कंयायुरू, वधूवरास्फालन, वेमानयन, मणिग्रथन, स्नान, चाष्टकर्म, पर्याणकर्म्म, वस्त्रकौसुं जसूत्रांतःकर्पणप्रमुख, कर्म्म करते है. वे देशविशे पलोकोसें जाण लेने व्यवहार शास्त्रोंमें नही कहे

हें परंतु स्त्रीयोंको सौजाग्यप्राप्तिवास्ते, शौक आदि न होवे तिसके वास्ते, वरको वशीजूत करनेके वास्ते करते हें. ॥

पीछे युक्त हाथवाले, नारी और नरकी कटी ऊपर चढे हुए वधूवर दोनोंको, गीतवाजंत्रादि बहुत आमंवरसें दक्षिण द्वारसें प्रवेश कराके वेदिके मध्यमें लावे. । पीछे देशकुलाचारसें काष्टासनोंके ऊपर, वा वेत्रासनोंके ऊपर, वा सिंहासनके ऊपर, वा अधोमुखी शरमय खारीके ऊपर, वधूवरको पूर्व सन्मुख बिठलावे. । तथा हस्तलेपमें, और वेदिकमें कुलाचारके अनुसार दसियां सहित कौरवस्त्र, वा कौसुंजवस्त्र, वा स्वजाववस्त्र वधूवरको पहिरावे पीछे गृहस्थगुरु, उत्तरसन्मुख मृगचर्म ऊपर बेठाहुआ, शमी, पिप्पल, कपित्थ (कवठ—एतवेल) कुटज (कुडची—जिस वृक्षका फल इंद्रयव होता है,) बिल्व, आमलकके इंधनकरके अग्निको जगाके, इस मंत्रकरके घृत मधु तिल यव नाना फलोंका हवन करे ॥ मंत्रो यथा ॥

“॥ ॐ अर्हं अग्ने प्रसन्नः, सावधानो जव, तवायमवसरः, तदाहारयेंद्र यमं नैरुतं वरुणं वायुं कुबेरमीशानं नागान् ब्रह्माणं लोकपालान् ग्रहांश्च सूर्यशशिकुजसौम्यबृहस्पतिकविशनिराहुकेतून् सुरांश्चअसुरनागसुपर्णविद्युदग्निद्वीपोदधिदिक्कुमारान् जुवनपतीन्

पिशाचभूतयक्षराक्षसकिन्नरकिंपुरुषमहोरगगंधर्वान् व्यंतरान् चंद्रार्कग्रहनक्षत्रतारकान् ज्योतिष्कान् सौधर्मेशान् सनत्कुमारमाहेंद्रब्रह्मलांतकशुक्रसहस्रारान तप्राणतारणाच्युतग्रैवेयकानुत्तरभवान् वैमानिकान् इंद्रसामानिकपार्षद्यत्रायस्त्रिंशल्लोकपालानीकप्रकीर्णक लौकांतिकाभियोगिकभेदभिन्नांश्चतुर्णिकायानपि स भार्यान् सायुधबलवाहनान् स्वस्वोपलक्षितचिह्नान् अप्सरसश्च परिगृहितापरिगृहितभेदभिन्नाः सस खिकाः सदासिकाः साभरणा रुचकवासिनीर्दिक्कुम रिकाश्च सर्वाः समुद्रनदीगिर्याकरवनदेवतास्तदेतान् सर्वान् सर्वाश्च इदमर्घ्यं पाद्यमाचमनीयं बलि चरुं हुतं न्यस्तं ग्राह्य २ स्वयं गृहाण २ स्वाहा अर्हं ॐ॥"

पीछे अष्टीतरें हुत करके प्रदीप्त अग्निके हुए, गृहस्थगुरु, तहांसें उठके दक्षिणपासे स्थित हुई वधूके सन्मुख बैठके, ऐसा कहे ॥

"॥ ॐ अर्हं इदमासनमध्यासीनौ, स्वध्यासीनौ, स्थितौ, सुस्थितौ, तदस्तु वां, सनातन संगमः, अर्हं ॐ ॥"

ऐसें कहके कुशाग्रतीर्थोदककरके दोनोंको सींचन करे । पीछे वधूका पितामह, वा पिता, वा चाचा, वा भाइ वा मातामह, वा कुलज्येष्ठ, धर्मानुष्टान करके उचित वेषवाला, वधूवरके आगे बैठे. । शांतिक पौष्टिकसें आरंभके विवाहसें मासपर्यंत मंगल

गान, वादित्रवादन, भोजन तांबूल वस्त्र सामग्री सदैव करनेचहिये ॥ पीछे गुरु ॥

"॥ ॐ नमोर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः ॥"

ऐसें कहके, प्रथम अक्षतपूर्ण हाथवाला होके वधूवरके आगे ऐसा कहे. ॥

"विदितं वां गोत्रं संबंधकरणेनैव ततःप्रका श्यतां जनाग्रतः"

जाना है तुमारा गोत्र, संबंध करनेसेंही; तिस वास्ते प्रकाश करो, लोकोंके आगे. । तब प्रथम वरके पक्षीय, अपने गोत्र, अपनी प्रवर, ज्ञाति और अपने अन्वय–वंशको प्रकाश करे, । पीछे वरकी माताके पक्षीय, गोत्र, प्रवर, ज्ञाति, और वंशको प्रकाश करे. । पीछे कन्याके पक्षीय, अपने गोत्र, प्रवर ज्ञाति, वंशको प्रकाश करे. । फिर कन्याकी माताके पक्षीय, गोत्र, प्रवर, ज्ञाति, वंशको प्रकाश करे. । पीछे गुरु. ॥

"॥ ॐ अर्हँ अमुकगोत्रीयः, इयत्प्रवरः, अमुकज्ञातिः, अमुकान्वयः, अमुकप्रपौत्रः, अमुकपौत्रः अमुकपुत्रः, अमुकगोत्रीयः, इयत्प्रवर अमुकज्ञातीयः, अमुकान्वयः, अमुकप्रदौहित्रः, अमुकदौहित्रः, अमुकः सर्ववरगुणान्वितो, वरयिता, अमुकगोत्रीया, इयत्प्रवरा, अमुकज्ञातीया, अमुकान्वया, अमुकप्रपौत्री, अमुकपौत्री, अमुकपुत्री, अमुकगोत्रीया, इयत्प्रवरा, अमुक

ज्ञातीया,अमुकान्वया, अमुकप्रदौहित्री, अमुकदौहित्रीअमुका वर्य्या तदेतयोर्वर्य्यावरयोर्वरवर्य्ययोर्नि विका विवाहसंबंधोस्तु शांतिरस्तु, तुष्टिरस्तु, पुष्टिरस्तु, धृतिरस्तु, बुद्धिरस्तु, धनसंतानवृद्धिरस्तु, अर्हं ॐ ॥' ऐसें कहे ॥

पीछे गुरु, वरवधूके पाससें गंध, पुष्प, धूप, नैवेद्य करके अग्निकी पूजा करावे । पीछे वधू लाजांजलिको अग्निमें निक्षेप करे. । पीछे फिर तैसेंही दक्षिण पासे वधू, और वामे पासे वर बैठे. । पीछे गुरु वेदमंत्र पढे.

" ॥ ॐ अर्हं अनादिविश्वमनादिरात्मा, अनादिकालः, अनादिकर्म्म, अनादिसंबंधो, देहिनां, देहानुमतानुगतानां, क्रोधोहंकारछझलोभैः, संज्वलनप्रत्याख्यानावरणाप्रत्याख्यानानंतानुबंधिभिः शब्दरूपरसगंधस्पर्शैरिछानिछापरिसंकलितै संबंधो अनुबंधः प्रतिबंधः संयोगः सुगमः सुकृतः स्वनुष्ठित. सुनिवृत्तः सुप्रास. सुलब्धो द्रव्यभावविशेषेण अर्हं ॐ॥ 'यह मंत्र पढके फेर ऐसा कहे

" ॥ तदस्तु वां सिद्धप्रत्यक्षं केवलिप्रत्यक्षं चतुर्णिकायदेवप्रत्यक्षं विवाहप्रधानाग्निप्रत्यक्षं नागप्रत्यक्षं नरनारीप्रत्यक्षं नृप्रत्यक्षं जनप्रत्यक्ष मातृप्रत्यक्षं पितृप्रत्यक्षं मातृपक्षप्रत्यक्ष पितृपक्षप्रत्यक्षं ज्ञाति

स्वजनबंधुप्रत्यक्षं संबंधः सुकृतः सदनुष्ठितः सुप्राप्तः
सुसंगतः तत्प्रदक्षिणी क्रियतां तेजोराशिर्विभावसुः॥"

ऐसें कहके तैसेंही ग्रथित अंचल वरवधू, अग्निकी प्रदक्षिणा करें. तैसें प्रदक्षिणाकरके तैसेंही पूर्वरी तिसें बैठे. लाजांजलीकी तीनों प्रदक्षिणामें आगे वधू और पीछे वर हो. दक्षिण पासे वधूका आसन, औरवामे पासे वरका आसन. ॥ इति प्रथमलाजाकर्म॥

पीछे वरवधूके आसन ऊपर बैठे हुए, वेद मंत्र पढे.

"॥ ॐ अर्हं कर्मास्ति मोहनीयमस्ति दीर्घस्थित्यस्ति निबिडमस्ति दुःछेद्यमस्ति अष्टाविंशतिप्रकृत्यस्ति क्रोधोस्ति मानोस्ति मायास्ति लोभोस्ति संज्वलनोस्ति प्रत्याख्यानावरणोस्ति अप्रत्याख्यानोस्ति अनंतानुबंध्यस्ति चतुश्चतुर्विधोस्ति हास्यमस्ति रतिरस्ति अरतिरस्ति भयमस्ति जुगुप्सरस्ति शोकोस्ति पुंवेदोस्ति स्त्रीवेदोस्ति नपुंसकवेदोस्ति मिथ्यात्वमस्ति मिश्रमस्ति सम्यक्त्वमस्ति सप्तति कोटाकोटि सागरस्थित्यस्ति अर्हं ॐ ॥" यह वेदमंत्र पढके ऐसा कहे.

"॥ तदस्तु वां निकाचितनिबिडबद्धमोहनीयकर्मोदयकृतः स्नेहः सुकृतोस्तु सुनिष्ठितोस्तु सुसंबंधोस्तु आभवमक्षयोस्तु तत् प्रदक्षिणी क्रियतां विभावसुः॥"

फेर भी तैसेंही अग्निकी प्रदक्षिणा करे॥ इति द्वितीयलाजाकर्म्म ॥

चारोंही लाजामें प्रदक्षिणाके प्रारंभमें वधू, अग्निमें लाजामुष्टि प्रक्षेप करे पीछे तिन दोनोंके तैसेंही बैठे हुए, गुरु, ऐसा वेदमंत्र पढे.

"॥ ॐ अर्हं कर्म्मास्ति, वेदनीयमस्ति, सातमस्ति, असातमस्ति, सुवेद्यं सातं, दुर्वेद्यमसातं, सुवर्गणाश्रवणं सातं, दुर्वर्गणाश्रवणमसातं, शुभपुद्गलदर्शनं सातं, दुःपुद्गलदर्शनमसातं, शुभपद्रसास्वादनं सातं, अशुभपद्रसास्वादनमसातं, शुभगंधाघ्राण सातं, अशुभगंधाघ्राणमसातं, शुभपुद्गलस्पर्शः सातं, अशुभपुद्गलस्पर्शोऽसातं, सर्वं सुखकृत् सातं, दुःखकृद सातं, अर्हं ॐ इस वेदमंत्रको पढके ऐसें कहे

"॥ तदस्तु वां सातवेदनीय माभूदसातवेदनीयं तत् प्रदक्षिणीक्रियतां विभावसु. ॥"

इति पुनः अग्निको प्रदक्षिणा करके वधूवर दोनों तैसेंही बैठ जावे ॥ इति तृतीयलाजाकर्म ॥

पीछे गुरु ऐसा वेदमंत्र पढे

"॥ ॐ अर्हं सहजोस्ति, स्वभावोस्ति, संबंधोस्ति, प्रतिबद्धोस्ति, मोहनीयमस्ति, वेदनीयमस्ति, नामास्ति, गोत्रमस्ति, आयुरस्ति, हेतुरस्ति, आश्रवबद्धमस्ति, क्रियाबद्धमस्ति, कायबद्धमस्ति, सांसारिकसंबध. अर्हं ॐ ॥

ऐसा वेदमंत्र पढके, कन्याके पिताके, चाचेके, भाइके वा कुलज्येष्टके, हाथको तिलयवकुशदूर्वासें युक्त जलसें पूरके, ऐसे कहे

"॥ अद्य अमुकसंवत्सरे, अमुकायने, अमुकऋतौ, अमुकमासे, अमुकपक्षे, अमुकतिथौ, अमुकवारे, अमुकनक्षत्रे, अमुकयोगे, अमुककरणे, अमुकमुहूर्त्ते, पूर्वकर्मसंबंधानुबद्धवस्त्रगंधमाल्यालंकृतां सुवर्णरूप्यमणिभूषण भूषितां ददात्ययं प्रतिगृह्णीष्व ॥"

ऐसें कहके वधूवरके योजित हाथमें जलक्षेप करे.। तब वर कहे. "प्रतिगृह्णामि" तदनंतर गुरु कहे.

"सुप्रतिगृहीतास्तु, शांतिरस्तु, पुष्टिरस्तु, ऋद्धिरस्तु, वृद्धिरस्तु, धनसंतानवृद्धिरस्तु, ॥"

पीछे प्रथम तीन लाजामें कन्याके हाथ ऊपर थे अब कन्याके हाथको नीचे करे, और वरके हाथको ऊपर करे, पीछे वरवधूको आसनसें ऊठाकर वरको आगे करे, और वधूको पीछे करे. । पीछे लाजाकी मुष्टि अग्निमें प्रक्षेप करकेगुरु ऐसें कहे. "प्रदक्षिणीक्रियतां विभावसुः" वर वधूको प्रदक्षिणा करते हुए, कन्याका पिता, यावत् कन्याका कुलज्येष्ट, वरवधूके देनेयोग्य वस्त्र, आभरण, स्वर्ण, रूप्य, रत्न, ताम्र, कांस्य, भूमि, निष्क्रय, हाथी, घोडा, दासी, गौ, बैल, पल्यंक, तूलिका, उत्सीर्षक, दीप, शस्त्र, पाकके भांडे, आदि सर्व वस्तुको वेदिमें ल्यावे. । और भी तिसके भाइ, संबंधी, मित्रादि, स्वसंपदाके अनुसारसें देने योग्य वस्तुयें वेदिमें ल्यावे. । पीछे प्रदक्षिणाके अंतमें वरवधू, तैसेंही आसन

ऊपर बैठे. नवरं इतना विशेष है कि, चतुर्थ लाजा के अनंतर वरका आसन दक्षिण पासे, और वधू, का आसन वामे पासे करणा. । पीछे गुरु, कुश दूर्वा अक्षत वासकरके हस्त पूर्ण हुआ थका, ऐसें कहे.

"॥ शक्रादिदेवकोटिपरिवृतो जोग्यफलकर्मजोगाय संसारिजीवव्यवहारमार्गसंदर्शनाय, सुनंदासुमंगले पर्यणैषीत्, ज्ञातमज्ञातं वा तदनुष्ठानमनुष्ठितमस्तु"

ऐसें कहके वास, दूर्वा, अक्षत, कुशको वरवधूके मस्तक ऊपर क्षेप करे. । पीछे गुरुके कहनेसें वधूका पिता, जल, यव, तिलका तेल हाथमें लेके, ऐसें कहे सुदायंददामि, प्रतिग्रहाण तब वर कहे "प्रतिगृह्णामि प्रतिगृहीतं परिगृहीतं" गुरु कहे "सुगृहीतमस्तु सुपरिगृहीतमस्तु" पुनः तैसेंह। वस्त्र, भूषण, हस्ति, अश्वादि दाय, देनेमें वधूके पिताका, और वरका यही वाक्य, और यही विधि है. । पीठे सर्व वस्तुके दीए हुए गुरु ऐसें कहे.

"॥ वधूवरौवां, पूर्वकर्म्मानुबंधेन, निबिडेन, निकाचितबद्धेन, अनुपवर्त्तनीयेन, अपातनीयेन, अनुपायेन, अश्लथेन, अवश्यजोग्येन, विवाह प्रतिबद्धो बभूव, तदस्त्वखंडितोऽक्षयोऽव्ययो, निरपायो, निर्व्याबाधः, सुखदोस्तु, शांतिरस्तु, पुष्टिरस्तु, ऋद्धिरस्तु, वृद्धिरस्तु, धनसंतान वृद्धिरस्तु ॥"

ऐसा कहके तीर्थोदकोकरके कुशाग्रसें सिंचन

करे. । फेर गुरु तैसेंही वधूवरको उठाके मातृघरमें ले जावे, तहां ले जाके वधूवरको ऐसें कहे.

" ॥ अनुष्ठितो वां, विवाहो, वत्सौ, सस्नेहौ सभोगौ, सायुषौ, सधर्मौ, समदुःखसुखौ, समशत्रुमित्रौ, समगुणदोषौ, समवाङ्मनःकायौ, समाचारौ, समगुणौ, भवतां ॥ "

पीछे कन्याका पिता, करमोचनकेवास्ते गुरुप्रतें कहे. । तव गुरु ऐसा वेदमंत्र पढे.

" ॥ ॐ अर्हं जीवत्वं कर्मणा बद्धः, ज्ञानावरणेन बद्धः, दर्शनावरणेन बद्धः, वेदनीयेन बद्धः, मोहनीयेन बद्धः, आयुषा बद्धः, नाम्ना बद्धः, गोत्रेण बद्धः, अंतरायेण बद्धः, प्रकृत्या बद्धः, स्थित्या बद्धः, रसेन बद्धः, प्रदेशेन बद्धः, तदस्तु ते मोक्षो गुणस्थानारोहक्रमेण अर्हं ॐ ॥ "

इस वेदमंत्रको पढके फेर ऐसें कहे.

मुक्तयोः करयोरस्तु वां स्नेहसंबंधोऽखंडितः ॥ "

ऐसें कहके करमोचन करे. । कन्याका पिता करमोचनपर्वमें जामातृ (जमाइ) के मांगेप्रमाण, स्वसंपत्तिके अनुसार बहुत वस्तु देवे. । दानविधि, पूर्व मंत्रसेंही जानना. । पीछे मातृघरसें उठके, फेर वेदिघरमें आवें. पीछे गुरु, आसनऊपर बैठे दोनोंको ऐसें कहे.

" ॥ वृत्तम् । पूर्वं युगादिभगवान् विधिनैव येन,

विश्वस्य कार्यकृतये किल पर्यणैपीत् ॥ भार्याद्वयं तद मुना विधिनास्तु युग्म,मेतत्सुकामपरिभोगफला नुवधि ॥ १ ॥"

ऐसें कहके पूर्वोक्त विधिसे अंचलमोचन करके "वत्सौ लब्धविषयौ भवतां" ऐसें गुरुअनुज्ञात दोनो दंपती–स्त्रीभर्त्ता, विविध विलासिनीयोंके गणसें वेष्टित, शृंगारगृहमें प्रवेश करे. । तहां पूर्वस्थापित मदनकी कुलवृद्धानुसार पूजा करे । पीछे तहां वधूवरको समहीकालमें क्षीरान्नभोजन कराना. पीछे यथायुक्तिकरके शयन गृहमें जावे । *

पीछे तिसही आगमनरीतिकरके उत्सवसहित अपने घरको जावे. । पीछे वरके मातापिता, वरको निरुंछनमंगलविधी स्वदेशकुलाचारकरके करे. । कंकणबंधन, कंकणमोचन, द्यूतक्रीडा, वेणीग्रंथनादि, सर्व कर्म भी, तिस २ देशकुलाचारकरके करणे चाहिये. । विवाहसें पहिलें वधूवर दोनोंके पक्षमें भोजन देना । तदनंतर धूलिभक्त, जन्यभक्त, आदि देशकुलाचारसें करणे । पीछे सात दिनके अनंतर वरवधू विसर्जन करना, तिसका विधि यह है. । सात दिनतक विविध भक्तिसे पूजित जमाइको,

---

* इस कथनसें यो यही सिद्ध होता है कि यौवनमाप्तोकाही विवाह होना चाहिये. क्योंकि उसहि समय कामक्रीडा करनेका विधि इस ग्रथमें लिखा है

पूर्वोक्त रीतिसें अंचलग्रंथन करके अनेक वस्तुदा
पूर्वक तिसही आडंबरसें स्वगृहको पहुंचावे.। पीर
सात रात्रिपर्यंत, वा मासपर्यंत, वा ७ मासपर्यंत, व
वर्षपर्यंत स्वकुलसंपत्तिदेशाचारानुसार महोत्सव क
ना. सात रात्रिके अनंतर, वा मासअनंतर, कुल
चारानुसारकरके कन्याके पक्षमें पूर्वोक्त रीतिकरवे
मातृविसर्जन करना.—गणपतिमदनादिविसर्जन विधि
लोकमें प्रसिद्ध है.—और वरपक्षमें कुलकर विसर्ज
नविधि लिखते हैं.। कुलकरस्थापनानंतर, नित्य कुल
करकी पूजा करनी.। विसर्जनकालमे कुलकरोंका
पूजन करके, गुरु पूर्ववत् "ॐ अमुककुलकराय"
इत्यादि संपूर्णमंत्र पढके "पुनरागमनाय स्वाहा"
ऐसें सर्वकुलकरोंको विसर्जन करे.॥ पीछे यह पढे.

"आज्ञाहीनं क्रियाहीनं मंत्रहीनं च यत्कृतं॥
तत्सर्वं कृपया देव क्षमस्व परमेश्वर ॥ १ ॥"

इतिकुलकरविसर्जनविधिः॥

पीछे मंडलीपूजा, गुरुपूजा, वासक्षेपादि पूर्ववत्.। साधूओंको वस्त्र पात्र देना.। ज्ञानपूजा करणी.। जैन ब्राह्मणोंको याचकोकों अपर मागनेवालोंको यथासंपत्तिसें दान करणा.।

तथा देशकुलसमयांतरमें विवाहलग्नके प्राप्त हुए, वरको श्वशुरके घरको प्राप्त हुए, षट् (६) आचार करते हैं. प्रथम अंगणमें आसन देना.। श्वशुर कहे

"विष्टरं प्रतिगृह्याण" तव वर कहे "ॐ प्रतिगृ ह्लामि" ऐसें कहके आसन ऊपर बैठे ॥ १ ॥ पीछे श्वशुर वरके पग प्रक्षालन करे ॥ २ ॥ पीछे दहि चंदन अक्षत दूर्वा कुश पुष्प श्वेतसरसो और जल करके श्वशुर जमाइको अर्घ देवे ॥ ३ ॥ पीछे आच मन देवे ॥ ४ ॥ पीछे गंधअक्षतसें तिलक करे ॥५॥ पीछे वरको मधुपर्क प्राशन करावे ॥ ६ ॥ पीछे गृहके अंदर वधूवरका परस्पर दृष्टिसंयोग और परस्पर दोनोंका नामग्रहण, शेष पूर्ववत् ॥

इति चतुर्दशमः विवाह संस्कार· समाप्तः ॥

अथ पंचदशम व्रतारोप संस्कार· प्रारभ्यते ।

इहां जैनमतमें गर्भा धानसें लेके विवाहपर्यंत चतुर्दश १४ संस्कारोंकरके संस्कृत भी पुरुष, व्रतारो पसंस्कारविना इस जन्ममें प्रशंसा पात्र नही होता है. और परलोकमें आर्यदेशादिभावपवित्रित मनुष्य जन्म स्वर्गमोक्षादिका भाजन नही होता है. इस वास्ते व्रतारोपही, मनुष्योंको परमसंस्कार है यत उक्तमागमे ।

"बंभणो खत्तिउ वावि, वेसो सुद्दो तहेवय ॥
पयई वादि धम्मेण, जुत्तो मुक्खस्स भायणं॥१॥"

अर्थ.—ब्राह्मण, वा क्षत्रिय, वा वैश्य, वा शूद्र, धर्मसें युक्त हुआ, मोक्षका भाजन होता है. ॥ १ ॥

बहत्तर कलाकुशल भी, विवेकसहित भी होवे, तो भी वो नर कुशल नहीं हैं; जो, सर्वकलायोंमें प्रधान जो धर्मकला तिसको नही जाणताहो. ॥ १ ॥ परमतमें भी कहा है । 'उपनीतोपि पूज्योपि कलावानपि भार्गव । न परत्रेह सौख्यानि प्राप्नोति च कदाचन ॥ १ ॥' इसवास्ते सर्वसंस्कार मे प्रधान व्रतसंस्कार कहते हैं. । तिसका विधि यह है.

पीछले विवाहपर्यंत संस्कार गृहस्थगुरु जैन ब्राह्मणने वा क्षुल्लकने कराने. परंतु व्रतारोपसंस्कार तो, निर्ग्रंथ यतिनेही करावणा.प्रथम गुरुकी गवेषणा करणी.

गुरू कैसे होना !

पांच महाव्रतयुक्त, ५, पांच प्रकारके आचार पालनेमें समर्थ, ५, पांच समिति, ५, और तीन गुप्ति सहित, ३, एवं छत्तीस गुणोंवाला गुरु होता है. । प्रतिरूप, तेजस्वी, युग प्रधान, आगमका जानकार, मधुर वाक्यवाला, गंभीर, बुद्धिमान्, उपदेश देनेमें तत्पर, ऐसा आचार्य होता है. । किसीका आलोचित दूषण अन्यआगे प्रकाशे नहीं, सोमप्रकृतिवाला होवे, शिष्यादिका संग्रह करनेवाला होवे, इत्यादि अभिग्रहमें जिसकी मति होवे, किसीके दूषण न बोले; चपल न होवे, प्रशांतहृदयवाला होवे, ऐसे गुणोंयुक्त गुरु होता है. । कितनेही जिनवरेंद्र अजरामर पदका पंथ दिखाके मोक्षको प्राप्त

हुए है, परं संप्रति कालमें तो, जिनप्रवचन, आचार्य नेही धारण करा है. ॥

अव प्रकारांतरकरके गुरुके छत्तीस गुण कहते है । आचारविनय, श्रुत विनय, विक्षेपनाविनय, दोषका परिघात, एवं चार प्रकारके विनयकी प्रतिपत्ति करनेवाले गुरु होवे.। अथवा सम्यक्त्व, ज्ञान, चारित्र, इनप्रत्येकके आठ ८ नेद हैं; एवं २४, और तपके द्वादश १२ नेद है, ऐसें आचार्यके छत्तीस गुण होते हैं ।

अथवा आचारादि आठ ८, और दश प्रकारका स्थितकल्प १० द्वादश १२ तप और षडावश्यक ६ ये बत्तीस गुण आचार्यके हैं ।

अथवा संविग्न १, मध्यस्थ २, शांत ३, मृदु--कोमलस्वनाववाला ४, सरल ५, पंडित ६, सुसंतुष्ट ७, गीतार्थ ८, कृतयोगी ९, श्रोताके नावको जाननेवाला १०, व्याख्यानादिलब्धिसंपन्न ११, उपदेशदेनेमें निपुण १२, आदेयवचन १३, मतिमान् १४, विज्ञानी १५, निरुपपाति १६, नैमित्तिक १७, शरीरका वलिष्ठ १८, उपकारी १९, धारणाशक्तिवाला २०, वहुत कुछ जिसने देखा २१, नैगमादि नयमतमें निपुण २२, प्रियवचनवाला २३, अच्छे मधुर गंनीर स्वरवाला २४, तप करणेमें रक्त २५, सुंदर शरीरवाला २६, शुन नली प्रतिनावाला २७, वादियोंको

जीतनेवाला २७, परिषदादिको आनंदकारक २९, शुचि–पवित्र ३०, गंभीर ३१, अनुवर्त्ती ३२, अंगीकार करेका पालनेवाला ३३, स्थिरचित्तवाला ३४, धीर ३५, उचितका जाननेवाला ३६, ये पूर्वोक्त ३६, गुण आचार्यके सूत्रमें कहे हैं. ॥

ऐसें पितापरंपरायसें माने गुरुके प्राप्त हुए, वा, तिसके अभावमें पूर्वोक्त गुणयुक्त अन्यगच्छीय गुरुके प्राप्त हुए, गृहस्थको व्रतारोपणविधि योग्य है, सो विधि यह है. ॥ चतुर्दश संस्कारोंकरके संस्कृत ऐसा गृहस्थी गृहस्थधर्मको अंगीकार करने योग्य होता है.।

कहा है की.

अक्षुद्र १, रूपवान् २, प्रकृतिसौम्य ३, लोकप्रिय ४, अक्रूरचित्त ५, भीरु ६, अशठ ७, सुदाक्षिण्य ८, लज्जालु ९, दयालु १० मध्यस्थ सोमदृष्टि ११, गुणरागी १२, सत्कथी १३, सुपक्षयुक्त १४, सुदीर्घदर्शी १५, विशेषज्ञ १६, वृद्धानुग १७, विनीत १८, कृतज्ञ १९, परहितार्थकारी २०, और लब्धलक्ष २१ इकीस गुणोंवाला श्रावक धर्मरत्नके योग्य होता है; अर्थात् इकीस गुण जिस जीवमें होवे, अथवा प्रायः नवीन उपार्जन करे, तिस जीवमें उत्कृष्ट योग्यता माननी. और थोडेसें थोडे इकीस गुणोंमेंसें चाहे कोइ दश गुण जीवमें होवे, तिसको जघन्य योग्य

तावाला जानना, ११–१२–१३–१४–१५–१६–१७–१८–१९–२० शेष गुणवालेको मध्यमयोग्यतावाला जानना. इन इकीस गुणोंका विस्तारसहित वर्णन अज्ञानतिमिरज्ञास्करके द्वितीय खंमके ४६ पृष्ठसें लेके ७३ पृष्ठपर्यंतहे उहांसें देख लेना.

योगशास्त्रमे श्रीहेचंद्राचार्यनेंजी एसाहि कहाहे की.

न्यायसें धन उपार्जन करनेवाला, शिष्टाचारकी प्रशंसा करनेवाला, जिनका कुलशील अपने समान होवे, ऐसे अन्य गोत्रवालेके साथ विवाह किया है जिसने, पापसें मरनेवाला, प्रसिद्ध देशाचारको करनेवाला, अर्थात् देशाचारका उल्लंघन नही करनेवाला, किसी जगे जी अवर्णवाद नही बोलनेवाला, राजादिकोमें विशेषसें अवर्णवाद वर्जनेवाला, । अतिप्रकट, वा अति गुप्त स्थानमें नही रहनेवाला, अछा पामोसी होवे तिस घरमें रहनेवाला, जिस मकानके अनेक आनेजानेके रस्ते होवे तिस घरको वर्जनेवाला, । सदाचारोंसें संग करनेवाला, मातापिताकी पूजा जक्ति करनेवाला, उपद्रवसंयुक्त स्थानको त्यागनेवाला, जगत्मे जो कर्म निदनीक होवे तिसमें प्रवृत्त नही होनेवाला; । अपनी आमदनीअनुसार खर्च करनेवाला, अपने धनके अनुसार वेष रखनेवाला; बुद्धिके आठ गुणोंसें संयुक्त निरंतर धर्मोपदेश श्रवण करनेवाला; अजीर्णमें जोजनका त्यागी

वखतसर साम्यतासें भोजन करनेवाला, एक दूसरेकी हानी न होवे इस रीतिसं धर्म अर्थ कामको सेवने वाला;। यथायोग्य अतिथि साधु और दीनकी प्रति पत्ति करनेवाला, सदा आग्रहरहित, गुणोंका पक्ष पाती;। देशकालविरुद्धचर्या त्यागनेवाला,।कोइ भी कार्य करनेमें अपना बलाबल जाननेवाला, जे पांच महाव्रतमें स्थित होवे और ज्ञानवृद्ध होवे तिनकी पूजा भक्ति करनेवाला, पोषणेयोग्यका पोषण करने वाला,। दीर्घदर्शी, विशेषज्ञ, कृतज्ञ, लोकवल्लभ, ल ज्जालु, दयालु, सौम्य, परोपकार करणेमें समर्थ, काम, क्रोध, लोभ, मान, मद, हर्ष, इन षट ६ अंत रंग बैरियोंके त्याग करनेंमें तत्पर, पांच इंद्रियोंके समूहको वश करनेवाला, ऐसा पुरुष गृहस्थधर्मके वास्ते कल्पता है ॥ १० ॥

ऐसे पुरुषको व्रतारोप करना चहिये। प्रायःकरके व्रतारोपमें गुरु शिष्यके वचन प्राकृत भाषामें होते हैं, क्यों कि गर्भाधानादि विवाहपर्यंत संस्कारोंमें प्रायः करके गुरुकेही वचन है, शिष्यके नहीं और गुरु प्रायः शास्त्रविद् होते है, इसवास्ते संस्कृतही बोलते है.। इहां व्रतारोपमें बाल, स्त्री, मूर्ख शिष्यों का क्षमाश्रमणदानपूर्वक वचनाधिकार है, तिस वास्ते तिनको संस्कृत उच्चार असामर्थ्य होनेसें प्राकृत वाक्य है. तिसकी साहचर्यतासें तिसके

प्रबोधवास्ते, गुरुके वचन भी, प्राकृतही है ॥ यत उक्तमागमे ॥

"॥मुत्तूण दिठ्ठिवायं कालियउक्कालियंगसिद्धंतं ॥
थीबालवायणत्थंपाइयमुइयं जिणवरेहिं ॥ १ ॥"

अर्थ.—दृष्टिवादको वर्जके कालिक उत्कालिक अंगसिद्धांतको स्त्रीबालकोंके वाचनार्थ जिनवरोंने प्राकृत कथन करे है ॥ यथाच ॥

बालस्त्रीवृद्धमूर्खाणां नृणां चारित्रकांक्षिणाम् ॥
अनुग्रहाय तत्त्वज्ञैः सिद्धांत. प्राकृतः कृतः ॥ १ ॥

और दृष्टिवाद बारमा अंग, परिकर्म १ सूत्र २ पूर्वानुयोग ३, पूर्वगत ४, चूलिकारूप ५ पंचविध संस्कृतमेंही होता है, सो बालस्त्रीमूर्खको पठनीय नही है. संसारपारगामी तत्त्वउपन्यासके वेत्ता गीतार्थोंकोंही पठनीय है शेष एकादशांग कालिक उत्कालिकादिशास्त्र योगवाहि साधु साध्वी और संयमी बालकोंके पढने योग्य हैं इसवास्तेही अरिहंत भगवंतोंनें एकादशांगादि शास्त्र प्राकृतमें करे है तिसवास्ते व्रतारोपमें भी, गृहस्थ बाल स्त्री मूर्ख जनोके उपकारार्थ और, तेसें यतियोंकेभी, वचन, प्राकृतमें कहे है. ॥

अथ मृदु, ध्रुव, चर, क्षिप्र नक्षत्रोंमें प्रथम भिक्षा, तप, नंदी, आलोचनादि कार्य करणे शुभ है. और मंगल, शनि, विना सर्व वारोंमें. । वर्षे,

मास, दिन, नक्षत्र, लग्न शुद्धिके हुए, विवाहदीक्षा प्रतिष्ठावत्, शुभ लग्नमें गुरु तिसके घरमें शांतिक पौष्टिक करके, फेर देवघरमें, शुभ आश्रममें, अन्यत्र, वा, यथाकल्पित समवसरणको स्थापन करे. । पीछे स्नान करके स्वघरमें महोत्सवसहित आये हुए श्रावकको पूर्वाभिमुख गुरु, अपने वामे पासें स्थापके ऐसें कहे—कैसे श्रावकको—सकक्ष श्वेत वस्त्र और श्वेत उत्तरासंग धारण किया है जिसने, तथा मुखवस्त्रिका हाथमें धारण करी है जिसने, तथा जिसकी चोटी वांधी हुई है, चंदनका मस्तकमें तिलक करा है जिसने, स्ववर्णानुसार जिनोपवीत वा उत्तरीय, वा उत्तरासंग धारण किया है जिसने ऐसे श्रावकको—क्या कहे सो कहते हैं ।

" सम्मत्तंमि उलद्धे, थइयाइं नरयतिरियदाराइं ॥
दिव्वाणि माणुसाणि अ, मुक्खसुहाइं सहीणाइं ॥ १ ॥"

अर्थः—सम्यक्त्वके लाभ हुए, नरकतिर्यंचगतिके द्वार ढांके है, और देवता मनुष्य मोक्षके सुख स्वाधीन है. । पीछे गुरुकी आज्ञासें श्राद्धजन, नालिकेर अक्षत सुपारीसें पूर्ण हस्त करके परमेष्ठिमंत्र पढता हुआ समवसरणको तीन प्रदक्षिणा करे. । पीछे गुरुके पास आयकर, गुरु श्राद्ध दोनोही इर्यापथिकीपडिक्कमे. । पीछे आसन उपर बैठे गुरुके आगे, श्राद्धजन ऐसें कहे ॥

"इच्छामि खमासमणो वंदिउं जावणिज्जाए निसीहिआए मत्थएण वंदामि ॥ भगवन् इच्छाकारेण तुम्हे अह्मं सम्मत्ताइतिगारोवणिअंनंदिकड्ढावणियं वासखेवं करेह ॥"

पीछे गुरु, वासांको, सूरिमंत्रसे, वा, गणिविद्या अर्थात् वर्द्धमान विद्यासें, अभिमंत्रके, परमेष्ठि और कामधेनु दोनों मुद्राकरके, पूर्वाभिमुख खडा होके, वामे पासे रहे श्रावकके शिरमें निक्षेप करे. । तिसके मस्तकके उपर हाथ रखके, गणधर विद्यासें रक्षा करे गुरु आसनउपर बैठ जावे, और श्राद्ध पूर्ववत् समवसरणको प्रदक्षिणा करके, गुरु आगे क्षमाश्रमण देके कहे

"॥ इच्छाकारेण तुम्हे अह्मं सम्मत्ताइतिगारोवणिअं चेइआइं वंदावहे ॥"

पीछे गुरु और श्रावक दोनो, चार वर्द्धमानस्तुतियो करके चैत्यवंदन करें.। जो छंदसें वर्द्धमान होवे, और चरम जिनकी प्रथम स्तुतिवाली होवे, तिनको वर्द्धमानस्तुति कहते है. । पीछे चारस्तुतिके अंतमें "श्रीशांतिदेवाराधनार्थं करेमि कासग्गं वंदणवत्तियाए पूअणवत्तियाए सकारव० स० जावअप्पाणं वोसिरामि" सत्ताइस उछ्वासप्रमाण अर्थात् 'सागरवरगम्भीरा' तक चतुर्विंशतिस्तव चिंतवन करे । पीछे 'नमो अरिहंताणं' कहके पारे । पार

जावंतिचेइयाइं० " और " अर्हणादिस्तोत्र " पढे सो लिखते हे.

अरिहाण नमो पूअं, अरहंताणं रहस्स रहिआणं।
पयओ परमिट्ठिणं, अरुहंताणं धुअरयाणं ॥ १ ॥
निद्दड्ढ अट्ठकम्मिंधणाण, वरनाणदंसणधराणं ॥
मुत्ताण नमो सिद्धाणं, परमपरमिट्ठिभूयाणं ॥ २ ॥
आयारधराण नमो, पंचविहायारसुट्ठियाणं च ॥
नाणीणायरियाणं, आयारुवएसयाण सया ॥ ३ ॥
बारसविहं अपूव्वं, दिंताण सुअं नमो सुअहराणं
सययमुवज्झायाणं, सज्झायज्झाणजुत्ताणं ॥ ४ ॥
सव्वेसिं साहूणं, नमो तिगुत्ताण सव्वलोएवि ॥
तवनियमनाणदंसण, जुत्ताणं बंभयारीणं ॥ ५ ॥
एसो परमिट्ठीणं पंचन्हवि भावओ नमुक्कारो ॥
सव्वस्स कीरमाणो, पावस्स पणासणो होइ ॥ ६ ॥
भुवणेवि मंगलाणं, मणुयासुरअमरखयरमहियाणं ॥
सव्वेसिमिमो पढमो, होइ महामंगलं पढमं ॥ ७ ॥
चत्तारि मंगलं मे, हुंतु अरहा तहेव सिद्धा य ॥
साहू य सव्वकालं, धम्मो य तिल्लोयमंगल्लो ॥ ८ ॥
चत्तारि चेव ससुरा, सुरस्स लोगस्स उत्तमा हुंति ॥
अरिहंत सिद्ध साहू, धम्मो जिणदेसियमुयारो ॥९॥
चत्तारिवि अरिहंते, सिद्धे साहू तहेव धम्मं च ॥
संसारघोररक्कस, भएण सरणं पवज्जामि ॥ १० ॥
अह अरहओ भगवओ, महइ महा वद्धमाणसामिस्स

पणयसुरेसरसेहर, चियलिकुसुमुच्चयकमस्स ॥ ११ ॥
जस्स वरधम्मचक्कं, दिणयरविंचव्व भासुरच्छायं ॥
तेएण पज्जलंतं, गच्छइ पुरओ जिणंदस्स ॥ १२ ॥
आयासं पायालं, सयलं महिमंडलं पयासंतं ॥
मिच्छत्तमोहतिमिरं, हरेइ तिएहंपि लोयाणं ॥ १३ ॥
सयलंमिवि जियलोए, चिंतियमित्तो करेइ सत्ताणं ॥
रक्खं रक्खसडाइणि, पिसायगहजूअजक्खाणं ॥ १४ ॥
लहइ विवाए वाए, ववहारे भावओ सरंतो अ ॥
जूए रणे अ रायं, गणे अ विजयं विसुद्धप्पा ॥ १५ ॥
पच्चूसपओसेसुं, सययं भव्वो जणो सुहज्झाणो ॥
एअं झाएमाणो, मुक्ख पइ साहगो होइ ॥ १६ ॥
वेआलरुद्ददाणव, नरिंदकोहंडिरेवईणं च ॥
सव्वेसि सत्ताण, पुरिसो अपराजिओ होइ ॥ १७ ॥
विज्जुव पज्जलंती, सवेसुवि अक्खरेसु मत्ताओ ॥
पंचनमुक्कारपए, इक्किक्के उवरिमा जाव ॥ १८ ॥
ससिधवलसलिलनिम्मल,आयरसहं च वन्नियं विंडु॥
जोयणसहप्पमाण, जालासयसहस्सदिप्पंतं ॥ १९ ॥
सोलससु अक्खरेसु, इक्किक्क अक्खरं जगज्जोअं ॥
भवसयसहस्समहणो, जमि ठिओ पच नवकारो॥२०॥
जो गुणइ ह इक्कमणो, भविओ भावेण पंच नवकारं ॥
सो गच्छइ सिवलोयं, उज्जोअतो दसदिसाओ ॥२१॥
तवनियमसंजमरहो, पंचनमोक्कारसारहिनिउत्तो ॥
नाणतुरंगमजुत्तो, नेइ फुडं परमनिवाणं ॥ २२ ॥

सुरूप्पा सुरूमणा, पंचसु समिईसु संजय तिगुत्तो ॥
जे तम्मि रहे लग्गा, सिग्घं गछंति सिवलोअं ॥२३॥
थंभेइ जलं जलणं, चिंतियमित्तोवि पंच नवकारो ॥
अरिमारिचोरराउल, घोरुवसग्गं पणासेइ ॥ २४ ॥
अठेवय अठसयं, अठसहस्सं च अठकोमीओ ॥
रकंतु मेसरीरं, देवासुरपणमिआ सिद्धा ॥ २५ ॥
नमो अरहंताणं, तिलोयपुज्जो अ संथुओ नयवं ॥
अमरनररायमहिओ, अणाइनिहणो सिवं दिसउ॥२६॥
निठा विअ अठ कम्मो, सिवसुहनूओ निरंजणो सिद्धो
अमर नरराय महिओ, अणाइ निहणो सिवं दिसउ। २७
सव्वे पओसमछर, आहिअहिअया पणासमुवयंति ॥
डुगुणीकयधणुसद्धं, सोउपि महाधणुसहस्सं ॥ २७ ॥
इय तिहुअणप्पमाणं, सोलसपत्तं जलंतदित्तसरं ॥
अठारअद्धवलयं, पंचनमुक्कारचक्कमिणं ॥ २ए ॥
सयलुज्जोइअनुवणं, निद्दाविअसेससत्तुसंघायं ॥
नासिअमिछत्ततमं, विअलियमोहं गयतमोहं ॥ ३०॥
एयस्स य मज्जठो, सम्मदिठीवि सुद्धचारित्ती ॥
नाणी पवयणनत्तो, गुरुजणसुस्सूसणापरमो ॥ ३१ ॥
जो पंच नमुक्कारं, परमो पुरिसो पराइ नत्तीए ॥
परियत्तेइ पइदिणं, पयओ सुद्धप्पओगप्पा ॥ ३२ ॥
अठेवय अठसया, अठसहस्सं च अठलरकं च ॥
अठेवय कोडीओ, सो तइयनवे लहइ सिद्धिं ॥३३॥
एसो परमो मंतो, परमरहस्सं परंपरं तत्तं ॥

नाणं परमं णेअं, सुक्कं ज्झाणं परं ज्झेयं ॥ ३४ ॥
एवं कवयमनेयं, खाश्यमच्छ पराजुवणरक्खा ॥
जोईसुन्नं विंडु, नाओ तारालवो मत्ता ॥ ३५ ॥
सोलसपरमक्खरवीअविंडुगवो जगुत्तमो जोओ ॥
सुअवारसंगसायर, महृछपुवछपरमछो ॥ ३६ ॥
नासेइ चोरसावय, विसहरजलजलणवधणसयाइं ॥
चिंतिज्जतो रक्खस, रणरायजयाइं जावेण ॥ ३७ ॥
॥ इति अरिहणादिस्तोत्रम् ॥

इस अरिहणादि स्तोत्रको पढके "जय वीयराय जगगुरु०" इत्यादि गाथा पढे पीछे आचार्य उपाध्याय गुरु साधुओंको वंदना करे । यह शक्रस्तव विधि, गुरु और श्रावक दोनोंही करे. । चैत्यवंदनके अनंतर श्राद्ध, क्षमाश्रमणदानपूर्वक कहे

"॥ जगवन् सम्यक्त्वसामायिकश्रुतसामायिकदेशविरतिसामायिकआरोवणिअ नंदिकढ्ढावणिअं काउसग्गं करेमि ॥"

गुरु "कहे करेह" तब श्रावक "सम्मत्ताइतिगारोवणिअ करेमि काउसग्ग अनछ०" इत्यादि कहके सत्ताइस उश्वास प्रमाण अर्थात् 'सागरवरगंजीरा लग कायोत्सर्ग करे । पीछे नमो अरिहंताण कहके पारके चतुर्विंशतिस्तव अर्थात् लोगस्स संपूर्ण पढे । पीछे मुखवस्त्रिका प्रतिलेखनपूर्वक श्रावक द्वादशावर्त्त वंदन करे, फिर क्षमाश्रमण देके कहे "जग

वन् सम्मत्ताइतिगं आरोवेह" गुरु कहे "आरो वेमि" पीछे श्रावक गुरुके आगे खमा होके, अंजलि करके, मुखवस्त्रिकासें मुखाछादन करके, तीनवार परमेष्ठिमंत्र पढे । पीछे सम्यक्त्वदंरूक पढे. सयथा ॥

"॥ अहणं नंते तुझाणं समीवे मिछत्ताओ पडीक्कमामि सम्मत्तं उवसंपज्जामि । तंजहा दवओ खित्तओ कालओ नावओ । दवओणं मिछत्तकारणाइं पच्चक्खामि सम्मत्तकारणाइं उवसंपज्जामि नो मे कप्पइ अद्यप्पनिई अन्नउछिए वा अन्नउछिअदेवयाणि वा अन्नउछियपरिग्गहियाणि अरिहंतचेइआणि वंदित्तए वा नमंसित्तए वा पुविं अणालत्तेणं आलवित्तए वा संलवित्तए वा तेसिं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा दाउं वा अणुप्पयाउं वा । खित्तओणं इहेव वा अन्नछ वा । कालओणं जाव जीवाए । नावओणं जाव गहेणं न गहिज्जामि जाव छलेणं न छलिज्जामि जाव सन्निवाएणं नान्निनविस्सामि जाव अन्नेण वा केणइ परिणामवसेण परिणामो मे न परिवडइ ताव मे एअं सम्मद्दंसणं अन्नछ रायानिओगेणं बलानिओगेणं गणानिओगेणं देवयानिओगेणं गुरुनिग्गहेणं वित्तीकंतारएणं वोसिरामि ॥"

ऐसें तीनवार दंडक पाठ कहना ॥ अन्ये तु दंडकमिछमुच्चारयंति यथा ॥

"॥ अहण्णं भंते तुह्माणं समीवे मिछत्ताओ पडिक्कमामि सम्मत्तं उवसंपज्जामि नो मे कप्पइ अज्जप्पभिइं अन्नउछिए वा अन्नउछियदेवयाणि वा अन्नउछियपरिग्ग हियाणि चेइआणि वंदित्तए वा नमंसित्तए वा पुविं अणालत्तेणं आलवित्तए वा संलवित्तए वा तेसिं असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा दाउं वा अणुप्पयाउं वा अन्नत्थ रायाभिओगेणं गणाभिओगेणं बलाभिओगेणं देवयाभिओगेणं गुरुनिग्गहेणं वित्तीकंतारेणं तं चउव्विहं। तंजहा। दवओ खित्तओ कालओ भावओ। दवओ णं दंसणदवाइं अंगीकयाइं। खित्तओणं उड्ढलोए वा अहोलोए वा तिरिअलोए वा। कालओणं जाव जीवाए। भावओणं जाव गहेणं न गहिज्जामि जाव छलेणं न छलिज्जामि जाव सन्निवाएणं नाभिभविस्सामि अन्नेण वा केणइ परिणामवसेण परिणामो मे न परिवडइ ताव मे एसा दंसणपडिवत्ती॥

इति गुरुविशेषेण द्वितीयो दंडकः॥ प्रथम दंडक दोनोमेंसें कोइ एक दंडक तीन वार उच्चारण करे. पीछे गाथा॥

"इअ मिछत्ताओ विरमिअ सम्मं उवगम्म भणइ गुरुपुरओ॥ अरिहंतो निस्संगो, मम देवो दक्खणा साहू॥ १॥"

गुरु तीन वार यह गाथा पढके श्राद्धके मस्तको

परि वासक्षेप करे. । पीछे गुरु, आसन ऊपर वैठके गंध अक्षत वासांको सूरिमंत्रसें, वा गणिविद्यासें मंत्रे. । पीछे गंधाक्षत वासांको हाथमें लेके जिन चरणोंको स्पर्श करावे. । पीछे साधु, साध्वी, श्राव क, श्राविकाओंको देवे. ते साधुआदि, मुठीमें लेले वे. । पीछे श्राद्ध गुरुके आगे क्षमाश्रमण देके कहे ॥ "भयवं तुम्हे अह्मं सम्मत्ताइयतीअंआरोवेह ।" गुरुकहे "आरोवेमि" फिर श्रावक क्षमाक्षमण देके कहे "संदिसह किं भणामि" गुरु कहे "वंदित्तु पवेयह" फिर श्रावक क्षमाश्रमण देके कहे "भयवं तुज्झेहिं अह्मं सामाइयतिअमारोविअं" गुरु कहे "आरोवियं २ खमासमणेणं हछेणं सुत्तेणंअछेणं तडुभएणं गुरुगुणेहिं वड्ढाहि निछारगपारगो होहि" श्रावक कहे "इछामो अणुसहिं" पुनः श्रावक क्षमाश्रमण देके कहे "तुह्माणं पवेइयं संदिसह साहूणं पएवेमि" गुरु कहे "पवेयह" पीछे श्रावक परमेष्ठिमंत्र पढता हुआ, समयसरणको प्रदक्षिणा करे. । और संघ पूर्वे दिये हुए वासांको, तिसके मस्तकोपरि क्षेपण करे. । गुरु आसनऊपर वैठे, वहांसें लेके वासक्षेपपर्यंत क्रिया, तीन वार इसहि रीतिसें करना. । फिर श्रावक क्षमाश्रमण देके कहे "तुह्माणं पवेइयं" फिर क्षमाश्रमण देके कहे "साहूणं पवेइयं संदिसह काउसग्गं करेमि" गुरु कहे

"करेह" पीछे श्रावक–सम्मत्ताइतिगरस्सथिरीकर णढं करेमि काउसग्गं अन्नछ०–सागरवरगंभीरातक कायोत्सर्ग करे पारके संपूर्ण लोगस्स कहे. । पीछे चारथुइवर्जित शक्रस्तवसें चैत्यवंदन करे । पीछे श्रावक, गुरुको तीन प्रदक्षिणा देवे पीछे आसन ऊपर बैठा हुआ गुरु, श्रावकको आगे बिठाके निय म देवे. ॥ नियमयुक्तिर्यथा ॥

गुलर, पूलक्षण, काकोडुंवरि, वट और पिप्पल, ये पांच जातिके फल ५ मांस, मदिरा, माखण और मधु, ये चार विकृति ४–एवं ९–अज्ञात फल १० , अज्ञात पुष्प ११, हिम (वरफ) १२, विष १३, करहे (ओले–गडे) १४, सर्वसचित्तमट्टी १५, रात्रिभोजन १६, घोलवडा–काचे दूध दहि छाछमें गेरा हुआ विदल १७. बइगण १८, पंपोटा–खसख सका दोडा १९, सिंघाडे २०, वायगण २१, और कायंवाणि २२, येह वावीस द्रव्य श्रावकोंको भक्ष ण करने योग्य नहीं हैं. अन्य प्रकारसे २२ अभक्ष्य यह है की पांच जातिके उवरादि फल ५ चार महा विगइए, हिम १०, विष ११, करह १२, सर्व मृत्तिका १३, रात्रि भोजन १४, बहुबीज वाले फल १५, अनं त काय १६, अचार १७, घोलवडा १८, वेइंगण १९, अज्ञात फल फूल २०, तुछ फल २१, चलितरस २२ ऐसें नियम देके यह गाथा उच्चारण करावे ॥

"अरिहंतो मह देवो, जावज्जीवं सुसाहुणो गुरुणो ॥
जिणपण्णत्तं तत्तं, इअ समत्तं मए गहिअं ॥ १ ॥"

तदनंतर अरिहंतको वर्जके अन्यदेवको नमस्कार करनेका, जैनयति महाव्रतधारी गुरू प्ररूपकको वर्जके अन्य लिंग विप्रादिकोंको नावसें अर्थात् मोक्षलान जानके वंदना करनेका, और जिनोक्त सप्त तत्वको वर्जके तत्वांतरकी श्रद्धा करनेका, नियम करना.

अन्य देव और अन्य लिंगि विप्रादिकोंको नमस्कार और दान,लोकिकव्यवहारकेवास्ते करना.और अन्यमतके शास्त्रका श्रवण पठन नी, ऐसेंही जानना. । पीछे गुरु सम्यक्त्वकी देशना करे. ॥ सोबताते हे. ॥

मानुष्यमार्यदेशश्च जातिः सर्वाङ्गपाटवम् ॥
आयुश्च प्राप्यते तत्र कथंचित्कर्मलाघवात् ॥ १ ॥
प्राप्तेषु पुण्यतः श्रद्धा, कथकः श्रवणेष्वपि ॥
तत्त्वनिश्चयरूपं तद्बोधिरत्नं सुदुर्लभम् ॥ २ ॥

॥ गाथा ॥

कुसुमयसुईण महणं सम्मत्तं जस्स सुठिअं हियए ॥
तस्स जगुज्जोयकरं नाणं चरणं च नवमहणं ॥ १ ॥

अर्थः—मनुष्यजन्म १, आर्यदेश २, उत्तमजाति ३, सर्वइंद्रि संपूर्ण ४, आयुः ५, ये कथंचित् कर्मकी लाघवतासें प्राप्त होतें है. । पुण्योदयसें पूर्वोक्त

प्राप्ति हुये जी श्रद्धा १, शुद्ध प्ररूपकका योग २, और सुणनेसें तथानिश्चयरूप बोधिरत्न सम्यक्त्व ३, ये अतिही डुर्लज्ञ हैं. ॥ कुत्सितसमयएकांतवादि ोंके शास्त्र और तिनकी श्रुतियोंको मथन करनेवाला म्यक्त्व, जिसके हृदयमे अछीतरें स्थित है, तिस ुरुपको जगत्के उद्योत करनेवाले, और जव–संसा को मथनेवाले, ज्ञान और चारित्र प्राप्त होते हैं. ॥

॥ श्लोका. ॥

ा देवे देवताबुद्धिर्गुरौ च गुरुतामतिः ॥
र्मे च धर्मधीः शुद्धा सम्यक्त्वमिदमुच्यते ॥ १ ॥
अदेवे देवबुद्धिर्या गुरुधीरगुरौ च या ॥
अधर्म्मे धर्म्मबुद्धिश्च मिथ्यात्वं तद्विपर्ययात् ॥ २ ॥
सर्वज्ञो जितरागादिदोपस्त्रैलोक्यपूजित. ॥
यथास्थितार्थवादी च देवोऽर्हन् परमेश्वरः ॥ ३ ॥
ध्यातव्योयमुपास्योयमय शरणमिष्यताम् ॥
अस्यैव प्रतिपत्तव्यं शासनं चेतनाऽस्ति चेत् ॥ ४ ॥
ये स्त्रीशस्त्राद्सूत्रादिरागाद्यंककलंकिताः ॥
निग्रहानुग्रहपरास्ते देवा स्युर्न मुक्तये ॥ ५ ॥
नाट्याट्टहाससंगीताद्युपप्लवविसंस्थुलाः ॥
लंजयेयु पदं शांतं प्रपन्नान् प्राणिन' कथं ॥ ६ ॥
महाव्रतधरा धीरा जैक्ष्यमात्रोपजीविन' ॥
सामायिकस्था धर्मोपदेशका गुरवो मताः ॥ ७ ॥
सर्वाजिलापिण. सर्वजोजिन. सपरिग्रहा. ॥

अब्रह्मचारिणो मिथ्योपदेशा गुरवो न तु ॥ ८ ॥
परिग्रहारंभमग्नास्तारयेयुः कथं परान् ॥
स्वयं दरिद्रो न परमीश्वरी कर्तुमीश्वरः ॥ ९ ॥
दुर्गतिप्रपतत्प्राणिधारणाद्धर्म उच्यते ॥
संयमादिर्दशविधः सर्वज्ञोक्तो विमुक्तये ॥ १० ॥
अपौरुषेयं वचनमसंभवि भवेद्यदि ॥
न प्रमाणं भवेद्वाचां ह्याप्ताधीना प्रमाणता ॥ ११ ॥
मिथ्यादृष्टिभिराख्यातो हिंसाद्यैः कलुषीकृतः ॥
स धर्म इति वित्तोपि भवभ्रमणकारणम् ॥ १२ ॥
सरागोपि हि देवश्चेद्गुरुरब्रह्मचार्यपि ॥
कृपाहीनोपि धर्मः स्यात् कष्टं नष्टं हहा जगत्॥ १३ ॥
शमसंवेगनिर्वेदानुकंपास्तिक्यलक्षणैः ॥
लक्षणैः पंचभिः सम्यक् सम्यक्त्वमुपलक्ष्यते ॥ १४ ॥
स्थैर्यं प्रभावनाभक्तिः कौशलं जिनशासने ॥
तीर्थसेवा च पंचास्य भूषणानि प्रचक्ष्यते ॥ १५ ॥
शंका कांक्षा विचिकित्सा मिथ्यादृष्टिप्रशंसनम् ॥
तत्संस्तवश्च पंचापि सम्यक्त्वं दूषयंत्यमी ॥ १६ ॥

अर्थः—साचे देवमें जो देवपणेकी बुद्धि, साचे गुरुके विषे गुरुपणेकी बुद्धि और साचे धर्मके विषे धर्मकी बुद्धि, कैसी बुद्धि ? शुद्धा सूधी निश्चल संदेहरहित, इसको सम्यक्त्व कहतें हैं. । ऐसी सम्यक्त्वकी बुद्धि थोड़े वखत भी जिसको आजा वेगी, सो प्राणि अर्द्धपुद्गलपरावर्तकालमेंही संसार

सें निकलके मोक्षको प्राप्त होगा, यह निश्चय जाणना. यत उक्तम् ॥
अंतोमुहुत्तमित्तंपि फासियं जेहिं हुज्ज सम्मत्तं ॥
तेसिं अवट्ठ पुग्गलपरिअट्टो चेव संसारो ॥ १ ॥
भावार्थः-अंतर्मुहूर्तमात्र भी जिनोंनें सम्यक्त्व स्पर्श किया है, तिनोंका अर्द्धपुद्गलपरावर्त्तही उत्कृष्ट संसार जाणना, तदनंतर अवश्यमेव मोक्षको प्राप्त होवे. इति सम्यक्त्वस्वरूपम् ॥ १ ॥

अथ मिथ्यात्वस्वरूपमाह ॥ जिसमें देवके गुण नही हैं, ऐसे अदेवमें देवकी बुद्धि—जैसें तममे उद्योतकी बुद्धि । जिसमे गुरुके गुण नहीं है, ऐसें अगुरुमें गुरुकी बुद्धि—जैसें नीवमे आम्र की बुद्धि । अधर्म यागादि, जीवहिंसादिक के विषे धर्म की बुद्धि—जैसें सर्पके विषे पुष्पमालाकी बुद्धि, सो मिथ्यात्व है. सम्यक्त्वसें विपर्यय होनेसें, अर्थात् साचे देवके ऊपर अदेवपणेकी बुद्धि, जैसें कौशिक (घूअड) की सूर्यके तेजऊपर अधकारकी बुद्धि, साचे गुरुऊपर अगुरुपणेकी बुद्धि, जैसें श्वेतशखके ऊपर काचकामलरोगवालेकी नीलशंखकी बुद्धि । तिसको मिथ्यात्व कहतेहै. । सो मिथ्यात्व पांच प्रकारका है. १ आभिग्रहिक, २ अनाभिग्रहिक, ३ आभिनिवेशिक, ४ सांशयिक, ५ अनाभोगिक. ॥
(१) प्रथम आभिग्रहिकमिथ्यात्व, सो, जिस्को

मिथ्या कुशास्त्रोंके पढनेसें कुदेव कुगुरु कुधर्मके ऊप र आस्था दृढ है, जिससें ऐसा जानता है कि, जो कुछ मैने समझा है सोही सत्य है, औरोंकी समझ ठीक नही है, जिसको सत्यासत्यकी परीक्षा करने का अब मन भी नहीं है, और जो सत्यासत्यका विचार भी नही करता है. यह मिथ्यात्व, दीक्षित शाक्यादि अन्यमतममत्वधारीयोंको होता है. वे अपने मनमें ऐसें जानते हैं कि, जो मत हमने अंगिकार किया है, वोही सत्य है; और सर्व मत झूठे हैं. ऐसें जिसके परिणाम होवे, सो आभिग्र हिक मिथ्यात्व है.

(२) दूसरा अनाभिग्रहिकमिथ्यात्व, सो सर्व मतोंको आच्छा जाणे, सर्व मतोंसें मोक्ष है, इस वास्ते किसीको बुरा न कहना सर्व देवोंको नम स्कार करना, ऐसी जो बुद्धि, तिसको अनाभिग्र हिक मिथ्यात्व कहते हैं. यह मिथ्यात्व जिनोंने कोइ दर्शन ग्रहण नहीं करा ऐसें जो गोपाल बाल कादि तिनको है. क्योंकि, यह अमृत और विषको एकसरिखे जाननेवाले हैं.

(३) तीसरा अभिनिवेशिक मिथ्यात्व, सो जो पुरुष जानकरके झूठ बोले, प्रथम तो अज्ञानसें किसी शास्त्रार्थको भूल गया, पीछे जब कोइ विद्वा न् कहे कि, तुम इस विषयमें भूलते हो, तब अप

ने मनमें सत्य विषयको जाणता हुआ नी, जूठे पक्षका कदाग्रह, ग्रहण करे, जात्यादि अजिमानसें कहना, न माने, उलटी स्वकपोलकल्पित कुयुक्तियों बनाकरके अपने मनमाने मतको सिद्ध करे, वादमें हार जावे तो नी न माने, ऐसा जीव, अतिपापी, और बहुल संसारी होता है. ऐसा मिथ्यात्व, प्रायः जो जैनी, जैन मतको विपरीतकथन करता है, उस में होता है, गोष्ठमाहिलादिवत् ॥

(४) चौथा सांशयिकमिथ्यात्व, सो देव गुरु धर्म जीव काल पुद्गलादिक पदार्थोंमें यह सत्य है कि, यह सत्य है ? ऐसी बुद्धि, तिसको सांशयिक मिथ्यत्व कहते हैं तथा क्या यह जीव असंख्य प्रदेशी है ? वा नहीं है ? इसतरें जिनोक्त सर्व पदार्थमें शंका करनी । " सांशयिकं मिथ्यात्वं तदशेषया शंका संदेहो जिनोक्ततत्त्वेष्वितिवचनात् ॥ "

(५) पांचमा अनाजोगिकमिथ्यात्व, सो जिन जीवोंको उपयोग नही कि, धर्म अधर्म क्या वस्तु है ? ऐसें जे एकेंद्रियादि विशेषचैतन्यरहित जीव, तिनको अनाजोगमिथ्यात्व होता है. ॥ २ ॥

अथदेवलक्षणमाह ॥ देव सो कहिये, जो सर्वज्ञ होवे, परंतु जैसें लौकिक मतमें विनायकका मस्तक ईश्वरने छेदन कर दिया, पीछे पार्वतीके आग्रहसे सर्वत्र देखने लगा, परं किसी जगे नी

मस्तक न देखा, तब हाथीके मस्तकको लायके विनायकके मस्तकके स्थानपर चेप दिया, जिसवास्ते विनायकका (गणेशका) नाम " गजानन " प्रसिद्ध हुआ. इत्यादि–यदि ईश्वर (महादेव) सर्वज्ञ होता तो, पार्वतीका पुत्र जाणके विनायकका मस्तक कभी न छेदन करता. यदि छेदा, तो जगत्में विद्यमान तिस मस्तकको क्यों न देखा ? इसवास्ते ऐसें अधूरेज्ञानवालेको देव न कहिये. । तथा ' जित रागादिदोषः ' जे संसारके मूलकारण राग द्वेष काम क्रोध लोभ मोहादिक दोष, तिन सर्वको जिसने जीते हैं, निर्मूल कियें हैं, तिसको देव कहिये. जिसमें रागादि दोष होवे, तिसको अस्मदादिवत् संसारी जीवही कहियें, तिसमें देवपणा न होवे. । तथा ' त्रैलोक्यपूजितः ' स्वर्गमर्त्यपातालके स्वामी इंद्रादिक परम भक्तिकरके जिसको वांदे, पूजे, नमस्कार करे, सेवे, सो देव कहिये. परंतु कितनेक इसलोकके अर्थीयोंके वांदनेसें, वा पूजनादिकसें देवपणा नही होता है. । तथा ' यथा स्थित सत्यपदार्थका वक्ता, सो देव कहिये, परंतु जिसका कथन पूर्वापरविरोधि होवे, और विचारते हुए सत्य २ मिले नही, सो देव न कहिये. ॥ देवो र्हत् परमेश्वरः ये पूर्वोक्त चार गुण पूर्ण जिसमें

होवे, सो अरिहंत, वीतराग, परमेश्वर, देव, कहिये, इससें अन्य कोइ देव नही है. ॥ ३ ॥

ऐसा पूर्वोक्त साचा देव, पिछानके आराधना, सोही कहते हैं । ध्यातव्योयमित्यादि–पूर्वे जो देवके लक्षण कहे, तिन लक्षणो संयुक्त जो देव, तिसको एकाग्र मनसें ध्यावना, जैसें श्रेणिक महाराजने श्रीमहावीरजीका ध्यान किया. । तिस ध्यानके प्रजावसें आगमी चउवीसीमें श्रेणिक, वर्ण, प्रमाण,संस्थान, अतिशयादिकगुणोंकरके श्रीमहावीरस्वामिसरिखा 'पद्मनाज,' नाम प्रथम तीर्थंकर होगा. इसीतरें औरोनें जी तल्लीनपणे देवका ध्यान करना, तथा 'उपास्योयम्' ऐसे पूर्वोक्त देवकी सेवा करनी श्रेणिकादिवत्. । तथा इसी देवका, संसारके जयको टालनहार जाणके, शरण वांछना. । इसी देवका शासन, मत, आज्ञा, धर्म, अंगीकार करना. । 'चेतनास्ति चेत्' जो कोइ चेतना चैतन्यपणा है तो, सचेतन सजाण जीवको उपदेश दिया सार्थक होवे, परंतु अचेतन अजाणको दिया उपदेश क्या काम आवे? इसवास्ते 'चेतनास्ति चेत्' ऐसें कहा. ॥ ४ ॥

अथादेवत्वमाह ॥ अथ अदेवके लक्षण कहते है. ॥ ये स्त्री० ॥ जिनके पास स्त्री (कलत्र) होवे तथा खड्ग धनुष्य चक्र त्रिशूलादिक शस्त्र (हथियार) होवे, तथा अक्षसूत्र जपमाला आदि शब्द

सें कमंडलुप्रमुख होवे, ये कैसें है ? रा० रागादि
कके अंक–चिन्ह है, सोही दिखावे हैं. स्त्री रागका
चिन्ह है, । जो पासे स्त्री होवे तो जाणना कि,
इसमें राग हैं. । शस्त्र द्वेषका चिन्ह है, जो पासे
हाथियार देखीए तो, ऐसा जाणिये कि तिसने
किसी वैरीको मारना चूरना है, अथवा किसीका
जय हैं, जिस वास्ते शस्त्रधारण किये हैं. । अक्ष
सूत्र असर्वज्ञपणाका चिह्न है. यदि होवे तो, मणके
विना गिणतीकी संख्या जाणलेवे. अथवा तिससें
अधिक वडा अन्य कोइ है, जिसका वो जाप करता
है ? । कमंडलु अशुचिपणेका चिन्ह है, यदि हाथ
में कमंडलु पाणीका भाजन देखीए तो, ऐसा जाणि
ये की, यह अशुचि है. शौच करणेके वास्ते यह
कमंडलु धारण करता है. यतउक्तं ॥
स्त्रीसंगः काममाचष्टे द्वेषं चायुधसंग्रहः ॥
व्यामोहं चाक्षसूत्रादिरशौचं च कमंडलुः ॥ १ ॥
इन पूर्वोक्त दोषोंकरके जे दूषित है, तथा निग्र
हा० जिसके उपर रुष्टमान होवे, तिसको निग्रह
(बंधनमरणादिक) करें, और, जिसके उपर तुष्ट
मान होवे, तिसको अनुग्रह (राज्यादिकके वर)
देवें; तेदेवा० वे देव, मुक्तिके हेतु नही होते हैं.॥५॥
ऐसे पूर्वोक्त देव अपने सेवकोंको मोक्ष नही दे
सकते हैं, सोही वात फिर कहते हैं. । नाट्याट्ट० जे

देव नाटकके रसमें मग्न हे, अट्टाट्टहास करते हैं, इत्यादि संसारकी चेष्टा जो अस्थिर है; तन्नयेयुः—जे आपही ऐसे हैं, वे देव, अपने आश्रित सेवकोंको शांतपद, (ससार चेष्टारहित मुक्ति, केवलज्ञानादि कपद,) कैसें प्राप्त कर सकते हैं? जैसें एरंमवृक्ष कल्प वृक्षकीतरें इछा नही पूर सकता हे, यदि किसी मूढ पुरुषने एरंमको कल्पवृक्ष मान लिया तो, क्या वो कल्पवृक्षकीतरें मनोवांछित दे सकता हे? ऐसेंही कीसी मिथ्या दृष्टीनें पूर्वोक्त दूषणोवाले कुदेवोंको देव मान लिये तो, क्या वे देव परमेश्वर मोक्ष दाता हो सकते हे? कदापि नही हो सकते हैं.॥८॥

अथगुरुलक्षणमाह ॥ अथ गुरुके लक्षण कहते हैं ॥ महाव्र० अहिंसादि पांच महाव्रतके धारने पालनेवाले और आपदामें नी धीर साहसिक होके अपने व्रतोंको विराधे नहीं बेंतालीश (४२) दूषण रहित निक्षावृत्ति (माधुकरी वृत्ति) करके अपने चारित्रधर्मके तथा शरीरके निर्वाहवास्ते नोजन करे, नोजन नी ऊनोदरतासयुक्त करे, नोजनकेवास्ते अन्न पाणी रात्रिको न राखे, धर्मसाधनके उपकरण विना और कुछ नी संग्रह न करे, तथा धन, धान्य, सुवर्ण, रूपा, मणि मोती, प्रवालादि परिग्रह, न राखे. । सामा० रागद्वेषके परिणामरहित मध्यस्थ वृत्ति होकर सदा सामायिकमें वर्त्ते. । धर्मोप० जो

धर्मी जीवोंके उद्धारवास्ते सम्यग् ज्ञानदर्शनचारित्ररूप जगवंतके स्याद्वाद अनेकांतस्वरूप निरूपण किया है, तिस धर्मका उपदेश करे, परंतु ज्योतिषशास्त्र, अष्टप्रकारका निमित्त शास्त्र, वैद्यकशास्त्र, धन उत्पन्न करनेका शास्त्र, राजसेवादि अनेकशास्त्र, जिनसें धर्मको वाधा पहुंचे तिनका उपदेश न करे; ऐसे गुरु कहियें. । काष्ठमय वेडीसमान आप जी तरें, और औरोंको जी तारें. ॥ ७ ॥

अथ अगुरुलक्षणमाह॥ अथ अगुरुके लक्षण कहते हैं ॥ सर्वा० स्त्री, धन, धान्य, हिरण्य, रूपादि सर्व धातु, क्षेत्र, हाट, हवेली, चतुःपदादिक अनेक प्रकारके पशु, इन सर्वकी अजिलाषा है जिनको, सर्व जोजिनः । मधु, मांस, मांखण, मदिरा, अनंतकाय, अजक्ष्यादिक सर्व वस्तुके जोजन करनेवाले, सपरिग्रहाः । जे पुत्र, कलत्र, धन, धान्य, सुवर्ण, रूपा, क्षेत्रादि सहित हैं, । अब्रह्म० तथा अब्रह्मचारी हैं । मिथ्यो० मिथ्या धर्मका उपदेश करें, ज्योतिष, निमित्त, वेदक, मंत्र तंत्रादिकका उपदेश देवें, वे गुरु नही. लोहमय वेडी (नावा) समान, आप जी डुबें, औरोंको जी डुबावे ॥ ७ ॥

पूर्वोक्त वातही कहते हैं ॥ परिग्रहा० स्त्री, घर, लक्ष्मी आदि परिग्रह, और क्षेत्र, कृषी, व्यवसायादि आरंज इनमें जे मग्न है, आपही जवसमु

डूमें डुवे हुए, हैं, ता० वे, किसतरेंसें दूसरे जीवोंको संसारसागरसे तार सकते है ? इसवातमें दृष्टांत कहते हैं. । जो पुरुप आपही दरिद्री है, सो परको ईश्वर लक्ष्मीवंत करनेको समर्थ नही है; तैसेंही वे कुगुरु, आपही ससारमें डुवे हुए, पर अपने सेवकोको कैसें तार सके ? ॥ ए ॥

धर्मलक्षणमाह ॥ सत्य धर्मका स्वरूप कहते हैं ॥ डुर्गति० नरक, तिर्यंच, कुमनुष्य, कुदेवत्वादि डुर्गति में गिरते हुए प्राणिकी रक्षा करे, गिरने न देवे, इस वास्ते धारण करनेसें धर्म कहिये, सो, संयमादि दशप्र कार सर्वज्ञ कथित धर्म, पालनेवालेको मोक्षकेवास्ते होता है । संयमादि दश प्रकार ये है. सयम जीवदया १, सत्यवचन २, अदत्तादानत्याग ३, ब्रह्म चर्य ४, परिग्रहत्याग ५, तप ६, क्षमा ७, निरहंका रता ७, सरलता ए, निर्लोजता १०, ॥ इससें उलटा हिंसादिमय असर्वज्ञोक्त धर्म, डुर्गतिकाही कारण है ॥ १० ॥

अधर्मत्वमाह ॥ अपौरुपेयं० अपौरुपेय वचन, असंजवि–संजवरहित है क्योंकि, जो वचन है सो किसी पुरुपके बोलनेसेंही है, विना बोले नही वचू परिनापणे इति वचनात् और अक्षरोत्पत्तिके आठ स्थान नियत है, सो जी पुरुपकोंही होते हैं. इस वास्ते वचन पुरुपके विना संजवे नही. । जवेद्य

दि–न प्रमाणं । यहि होवे तो, वेदको प्रमाणता नही. क्योंकि, । नवेद्वाचां ह्याप्ताधीना प्रमाणता । वचनोंकीप्रमाणता, आप्त पुरुषोंके आधीन है. ॥ ११ ॥

असर्वज्ञोक्त धर्म प्रमाण नही यही कहते हैं. ॥ मिथ्यादृष्टि असर्वज्ञोंने अपनी बुद्धिसें कहा हुआ, पशुमेध, अश्वमेध, नरमेधादि यज्ञोंके कथनसें, और अपुत्रस्य गतिर्नास्ति इत्यादि कथनसें, जीववधादि कोंकरके जो धर्मही है, ऐसा अजाण लोकोंमें विशेष प्रसिद्ध है. तो नी, नवत्रमण (संसारत्रमण) का कारण है. यथार्थ धर्मके अनावसें ॥ १२ ॥

कुदेवकुगुरुकुधर्मनिंदामाह ॥ सरागोपि॰ यदि जगत्में सरागः रागद्वेषादि सहित नी देव होवे, अब्रह्मचारी मैथुनानिलाषी नी गुरु होवे, और दया हीन नी धर्म होवे, तो, हाहा ! इति खेदे बमा नारी कष्ट है, संसारलक्षण जगत् नष्ट हुआ, डुर्गतिमें पमनेसें. क्योंकि, पूर्वोक्त देव गुरु धर्मकरके मुबनाही होवे. यतः उक्तं ॥

रागी देवो दोसी देवो तामिसूमंपि देवो रत्ता मत्ता कंता सत्ता जे गुरू तेवि पुज्जा । मज्जे धम्मो मंसे धम्मो जीव हिंसाइ धम्मो हाहा कष्टं नठो लोओ अट्टमट्टं कुणंतो ॥ १ ॥ १३ ॥

ऐसें पूर्वोक्त अदेव, अगुरु, अधर्मका परित्याग करके, सत्य देव, गुरु, धर्मकी, आस्था करनी, तिसका नाम

सम्यक्त्व है. सो सम्यक्त्व हृदयमे है, ऐसा पांच लक्षणोंकरके मालुम होता है, वे पांच लक्षण कहते हैं.॥

शमसं०—जिस जीवमें अनंतानुबधि क्रोध मान माया लोनका उपचय देखिये, अर्थात् अपराध करनेवालेके ऊपर जिसको तीव्र कषाय उत्पन्न होवेही नही, यदि उत्पन्न होवे तो, तिस क्रोधादिको निष्फल करदेवे, इस शमरूप लक्षणसें जाणिये कि, इस जीवमें सम्यक्त्व है । १ । सवेग—जिसके हृदयमें संवेग संसारसें वैराग्यपणा होवे, तिस जीवमे संवेगरूप लक्षणसें सम्यक्त्व जाणना । २ । संसारके सुखो ऊपर द्वेषी, वैराग्यवान्, परवशपणेसें कुटुंबादिकके डु:खसें गृहस्थपणेमें रहा हुआ मोक्षाभिलाषी, जो जीव है, तिसमे निर्वेदरूप लक्षणसें सम्यक्त्व हैं. । ३ । जिसके हृदयमें डुःखिजीवोंको देखके अनुकंपा (दया) उत्पन्न होवे, डु.खिजीवोंके डुःखोंको दूर करनेका जिसका मन होवे, जो डुःखिजीवको देखके अपने मनमें डु.खी होवे, शक्तिअनुसार डु खिजीवके डु खोंको दूर करे, तिसमें अनुकंपारूप लक्षणसें सम्यक्त्व उपलब्ध होता है. । ४ । जिनोक्त तत्वोंमें अस्तिजाव का होना, सो आस्तिक्य । ५ । एतावता शम १, संवेग २, निर्वेद ३, अनुकंपा ४, और आस्तिक्य ५, इन पांचों लक्षणों सें हृदयगत सम्यक्त्व जाणना, ॥ १४ ॥

॥ अथ सम्यक्त्वके पांच भूषण कहते हैं. ॥ स्थैर्यं०—स्थैर्य जिनधर्मकेविषे स्थिरता । १ । जिन धर्मकी प्रभावना । २ । जिनधर्ममें भक्ति । ३ । जिन शासनमें कुशलता । ४ । और तीर्थसेवा । ५ । ये पांच सम्यकत्व के भुषण हैं. ॥ १५ ॥

अथ सम्यक्त्वके पांच दूषण कहते है. ॥ शंका० शंका धर्म. है, वा नही ? इत्यादि संदेह । १ । आकांक्षाअन्य २ धर्मकी अभिलाषा । २ । विचिकित्साधर्मके फलका संदेह । ३ । मिथ्यादृष्टिकी प्रशंसा । ४ । और मिथ्यादृष्टियोंका परिचय । ५ । ये पांच सम्यक्त्वको डुषित करते हैं. ॥ १६ ॥
ऐसें पूर्वोक्त उपदेशकरके श्रेणिक, संप्रति, दशार्ण भद्रादि सम्यक्त्वमें दृढ राजायोंके व्याख्यान करे. । उस दिनमें श्रावक एकभक्त आचाम्लादि तप करे. । साधुयोंको अन्न, वस्त्र, पुस्तक, वसति, यथायोग्य देवे. । मंगलीपूजा करनी. । चतुर्विधसंघवात्सल्य करना. । और संघपूजा करनी. ॥

इतिव्रतारोपसंस्कारे सम्यक्त्वसामायिकारोपणविधिः ।

देशविरतिसामायिकारोपणविधिः

सम्यक्त्व सामायिकारोपणानंतर तत्कालही, तिस की वासनानुसारें, वा मास वर्षादिके अतिक्रम हुए,

देशविरतिसामायिक आरोपण करना हैं । तहां नंदि, चैत्यवंदन, कायोत्सर्ग, क्षमाश्रमणआदि, सर्व विधि पूर्ववत् जाणनी.

परंतु सर्वत्र सम्य क्त्वसामायिकके स्थानमें देशविर तिसामायिककानाम ग्रहण करना । सर्वत्र तैसे करके फिर दूसरी नंदि दंडकोच्चारकालमे नमस्कार तीन पाठानंतर, हाथमें ग्रहण करे परिग्रह परि माण टिप्पनक(फहरिस्त–नोंध) ऐसे श्रावकको गुरु, देशविरतिसा मायिकदंडक उच्चरावे ॥ सयथा ॥

" ॥ अहण्णं भंते, तुह्माणं समीवे, थुलगं, पाणा इवायं, संकप्पओ, वीइंदिआइजीवनिकायनिग्गहनि यट्टिरूवं, निरावराहं, पच्चक्खामि जावज्जीवाए, दु विहं तिविहेण, मणेणं, वायाए, काएणं, न करेमि, न कार वेमि, तस्स भंते पडिक्कमामि, निंदामि, गरि हामि, अप्पाणं, वोसिरामि, ॥ '

यह पाठ तीनवार कहना ॥ १ ॥ इसीतरें सर्व व्रतोंमें तीन २ वार पाठ पढना. ॥

" ॥ अहण्णं भंते, तुह्माण, समीवे, थूलगं, मुसा वाय, जीहाछेयाइनिग्गहहेऊअं, कन्ना, गोभूमि, निक्खेवावहार, कूड सरकाइ, पंचविहं, दक्खिन्नाइ अविसए, अहागहिअ भंगएण, पच्चक्कामि, जावज्जीवाए, दुविहं तिविहेणं, मणेणं वायाए, काएणं० ॥ २ ॥ "

" ॥ अहणं, नंते, तुह्माणं, समीवे, थूलगं, अदिन्नादाणं, खत्तखणणाइचोरकारकरं, रायनिग्गहकरं, सच्चित्ताचित्त वत्थुविसयं, पच्चरकामि, जावज्जीवाए, ङुविहं तिविहेणं० ॥ ३ ॥ "

" ॥ अहणं, नंते, तुह्माणं, समीवे, थूलगमेहुणं, उरालिय, वेउव्वियनेअं, अहागहिअ नंगएणं, तब ङुविहं तिविहेणं दिव्वं, एगविहं तिविहेणं तेरिछं, एगविहमेगविहेणं माणुस्सं, पच्चक्खामि, जावज्जीवाए, ङुविहं तिविहेणं० ॥ ४ ॥ "

" ॥ अहणं नंते तुह्माणं, समीवे, अपरिमिअं, परिग्गहं, धणधन्नाइनवविहवत्थुविसयं, पच्चरकामि, इछापरिमाणं, अहागहिअ नंगएणं, उवसंपज्जामि, जावज्जीवाए, ङुविहं, तिविहेणं० ॥ ५ ॥ "

"अहणं नंते, तुह्माणं, समीवे, पढमं गुणव्वयं, दिसिपरिमाणरूवं, पडिवज्जामि, जावज्जीवाए, ङुविहं, तिविहेणं ॥ ६ ॥ "

" ॥ अहणं नंते, तुह्माणं, समीवे, उवनोगपरिनोगवयं, नोयणउं, अणंतकाय, बहुबीय राइनोयणाइबावीसवत्थुंरूवं, कम्मणा, पन्नरस, कम्मादाण, इंगालकम्माइबहुसावज्जं, खरकम्माइ, रायनिउंगं च, परिहरामि, परिमिअं, नोगउवनोगं, उवसंपज्जामि, जावज्जीवाए, ङुविहं, तिविहेणं० ॥ ७ ॥"

" ॥ अहणं नंते, तुह्माणं समीवे, अणत्थदंमगु

णवयं, अट्टरुद्दझ्राण, पावोवएस, हिंसोवयारदाण,पमा यकरणरूवं, चउव्विहं, जहासत्तीए, पडिवज्जामि, डुविहं तिविहेण ॥ ७ ॥ "

" ॥ अहणं जंते तुह्माणं समीवे, सामाइयं, जहासत्तीए, पडिवज्जामि, जावज्जीवाए, डुविहं, तिविहेणं ॥ ए ॥ "

" ॥ अहणं जंते, तुह्माणं समीवे, देसावगासिअं, जहासत्तीए पडिवज्जामि, जावज्जीवाए, डुविहं तिविहेणं० ॥ १० ॥ "

" ॥ अहणं जंते, तुह्माणं समीवे, पोसहोववासं, जहासत्तीए, पडिवज्जामि, जावज्जीवाए, डुविहं, तिविहेणं० ॥ ११ ॥ "

" ॥ अहणं जंते, तुह्माणं समीवे, अतिहिसंविजागं, जहासत्तीए, पडिवज्जामि' जावज्जीवाए, डुविहं' तिविहेणं० ॥ १२ ॥ "

" ॥ इच्चेयं सम्मत्तमूलं पंचाणुवइयं, तिगुणवइयं, चउसिरकावइय, डुवालसविहं, सावगधम्मं, उवसंपज्जित्ताणं, विहरामि ॥ इति ॥

दंमकोच्चारणानंतर कायोत्सर्ग, वंदनक, क्षमाश्रमण, प्रदक्षिणा, वासक्षेपादिक पूर्ववत् ॥

परिग्रहप्रमाणटिप्पनकयुक्तिर्यथा ॥

जावार्थ –अमुक जिनेंद्रको नमस्कार करके, अमु

क श्राविका, वा अमुकश्रावक अमुक गुरुके पास, गृहस्थ धर्मको अंगीकार करता है. ॥ १ ॥

श्री अरिहंतको वर्जके अन्य देवको नमस्कार न करुं, जिनमतके सुसाधुकों छोडके अन्य लिंगिकों धर्मार्थे नमस्कार न करुं. ॥ २ ॥ जिन वचन स्याद्वादयुक्त सप्त वा नव तत्त्व को सत्य कर जानता हुं, मिथ्याशास्त्रोंके श्रवण पठन लिखनेका मुझको नियम हो. । ३ । परतीर्थिको प्रणाम, गुणानुवाद, स्तवन, भक्ति, राग, सत्कार, सन्मान, दान, विनय, वर्जुं—न करुं. । ४ । धर्मकेवास्ते अन्य तीर्थमें तप, स्नान, होमादिक नही करुं. तिनके उचित करने योग्य कर्ममें जयणा मुझको हो. । ५ । तीन, वा पांच, वा सातवार यथाशक्तिसें चैत्यवंदन करुं; एक, वा दो वा तीन वार, प्रतिदिन सुसाधुको नमस्कार करुं, और तिसकी सेवा करुं. । ६ । एक, वा दो, वा तीनवार प्रतिदिन जिनपूजा करुं; और पर्व दिनमें स्नात्रादि अधिक अधिकतर पूजा करुं. इति सम्यक्त्वम् ।

कुलाचार विवाहादि कृत्यमें जीवबध होते जयणा करुं । ७ । विना प्रयोजन एकेंद्रियका भी बध न करुं, प्रयोजनके हुए जयणा करुं, । इतिप्रथमव्रतम् ।

कन्या आदि पांच प्रकारका मृषावाद, नियमकरके वर्जता हुं. । इतिद्वितीयव्रतम् ।

जिससें चोर नाम पडे, और राजदंम होवे, ऐसा धन वर्जुं, अर्थात् चोरी वर्जुं । इतितृतीयव्रतम् ।

दो करण तीन योगसें देवतासंबंधि, एकविध त्रिविधें करी तिर्यंच संबंधि, मैथुनका नियम करता हुं. । ए । अनुनव करके स्तंजसमान ब्रह्मव्रतको अपने मनमें धारण करुं, और जावजीव मनुष्य संबंधि मैथुनकायाकरके वर्जुं । १० । परनारीको, और परपुरुषको (स्त्री व्रतग्राहिता आश्रित) वर्जुं इनके उपरांत अन्यक्रियाकी मुफको जयणा. । इति चतुर्थव्रतम् ॥

नव प्रकारके परिग्रहमें परिग्रहकी संख्याका प्रमाण यह है. । ११ । इतने मात्र रूपय्ये, इतने मोहोर, इतने मात्र गिणतिमें. । १२ । इतने गिण तिमे रूपय्ये, यह गणिमवस्तुका ग्रहण है. इतनी वस्तु तोलमे और मापसें इतनी वस्तु. ।१३। हाथ अंगु लसें मेय वस्तुका इतने प्रमाण मात्रसें मुफको संग्र ह करना कल्पे, तथा दृष्टिसें देखके जिनका मोल करा जावे ऐसे पदार्थ इतने रूपइयोंके मोलके रखने. । १४ । इतनी खांमी अन्नकी एक वर्षमें रख नी, इतनी मुफको परिग्रहमें नूमि रखनी कल्पे, इतने पुर, इतने गाम, इतने हाट, इतने घर, और इतने प्रमाण क्षेत्र, मुफको कल्पे । १५ । इतने सेर, वा इतने तोले प्रमाण सोना, इतना मात्र रूपा,

इतना कांसा, इतना तांबा, इतना लोहा, इतना तरुया, इतना सीसा, अपने घरमे रखना. । १६ । इतने दास, इतनी दासी, इतने सेवक—नौकर और इतने दासचेटकोंकी संख्यां मुझको रखनी कल्पे. । १७ । इतने हाथी, इतने घोडे, इतने बलद, इतने ऊंट, इतने गाडे, इतनी गौ, इतनी महिषी (भैंस) । १८ । इतनी बकरी, इतनी भेडें, और इतने हल रखने मुझको कल्पे. और अमुक अमुक कर्मका मुझको नियम हो. । १९ । इति पंचमव्रतम् ॥

दसोंही दिशायोंमें अपने वशसें इतने योजन प्रमाण जावजीव गमन करना, और तीर्थयात्रामें जानेकी जयणा. । २० । इतिषष्ठव्रतम् ।

कर्ममें भोगोपभोगमें, खरकर्ममें, पंदरा कर्मादानमें, दुप्पोल आहार अज्ञात फूल फल इनको वर्जुं. । २१ । पांच ऊंबर ५, चार महाविगइ ४, हिम १८, विष ११, कारक १२, सर्व जातकी मट्टी १३, रात्रिभोजन १४, बहुबीजा १५, अनंतकाय १६, संधान (बोल आचार) १७. । २२ । घोलवडां (विदल) १८, वृंताक १९, अज्ञात फल फूल २० तुछ फल २१ और चलितरस २२, ये बावीस वस्तुओको वर्जुं. । २३ । वर्जके अन्य फल फूल पत्रमेसें अमुक अमुक प्राणांतमें भी, भक्षण न करूं. २४ । इतने मात्र प्रासुक अनंतकायकी मुझको जयणा हो, इतने

अपक्क फल और अखंडित नी नक्षण न करुं. ।२५। आ जन्मतक इतनी सच्चित्त वस्तुओं मेरेको नक्षण करने योग्य है, इतने पुष्टिकारक डव्य और इतने व्यंजन शाकादि मुझको कल्पे, तथा घृत, छुग्ध दहि प्रमुख ।२६। इतनी विगइ मुझको कल्पे. इतने पियादे, इतने गज, इतने तुरग और इतने प्रधान रथोंकी मुझको जयणा हो. ।२७। इतनी सुपारी, इतने लवंग, इतने एलाफल (इलायची) जायफल आदि मेरेको नित्य इतने प्रमाण कल्पे सूतके, रेशमके, ऊनके, औरके, इन चार प्रकारके।२८। वस्त्रोंमें नी इतने वस्त्र पहिरने मुझको कल्पे; और इतनी जातिके फूल मेरे अंगके नोगवास्ते कल्पे. । २९ । आसन, सिंहासण, पीठ, पट्टे, वाजोठ, पल्लंक, गदेला, रजाइ, और खाट आदि ये सर्व इतने प्रमाण मुझकों कल्पे. । ३० । कर्पूर, अगर, कस्तूरी, चंदन केशरादि मात्र मेरे अंगके वास्ते इतने कल्पे, और पूजामें जयणा । ३१ । इतनी नारी मेरे संनोगमे इतने कालमात्र, इतने घडे, ठाणे हुए जलके और प्रासुक जलके मेरेकों स्नान वास्ते कल्पे. । ३२। इतनी वार दिनमें इतनी जातिके तेल मर्दन के वास्ते, इतने प्रकारके नात रोटी आदिक नोजन, और दिनमें इतनी वार नोन न करना. । ३३ । यह सच्चित्तादिका नोग परिनोग

जावजीवतक है, इनका भी फेर प्रमाण दिनदिनमें करुं, ✽ । ३४ । इतने मात्र मणि, कनक, रूपा, मोती भूषण, अंगऊपर धारण करुं. इतने मात्र गीत, नृत्य, वाजंत्र, मुझको उपभोगवास्ते कल्पे. । ३५ । इतिसप्तमव्रतम् ॥

वैरिका घात, वैर लेना, इत्यादिक आर्त्त, रौद्र, ध्यान, अदाक्षिण्यताविषे पापोपदेशका देना, इनको वर्जुं. । ३६ । अदाक्षिण्यताविषे हिंसाकारी गृहोपकरणादि देना तथा कामशास्त्रकापढना, जूआ खेलना, मद्य पीना, इनको परिहरुं. । ३७) हिंमोलेका विनोद, भक्त (भोजन), स्त्री, देश, और राजा, इनकी स्तुति, वा निंदा; पशु पक्षीका युद्ध, अकालमें नींद लेनी, संपूर्ण रात्रिमें सोना, । ३८ । इत्यादि प्रमाद स्थानक, अनर्थादंडनामक गुण व्रत में वर्जुं. । इति अष्टमव्रतम् ॥

एक वर्षमें इतने सामायिक करुं. । इतिनवमव्रतम् ॥

इतने योजन मेरेको दिन, वा रात्रिमें दशोदिशाओंमें जाना आना कल्पे. । इतिदशमव्रतम् ।

एक वर्षमें इतने पौषध करुं. इत्येकादशव्रतम् ॥

साधुओंको संविभाग भोजन वस्त्र आदिकसें करुं. ४० । प्रथम यतिको देके और नमस्कार करके पीछे

✽ दिन २ में जो प्रमाण करना है, सो दशम देसावकाशिकव्रतांतर्गत जाणना. ॥

आप पारणा करुं, जो सुविहित साधुओंका योग न होवे तो, दिशावलोकन करके भोजन करुं । ४१ । इतिद्वादशव्रतम् ॥

यह द्वादश व्रतरूप श्रावकधर्म, पूर्वोक्त विधिसें पालुं, विना गलएया जलका पान और स्नान, मरणांतमें भी न करुं. । ४२ । कंदर्प, दर्प, थूकना, सोना, चार प्रकारका आहार करना, विकथा, कलह, इत्यादि जिनमंरूपमें वर्जुं. । ४३ ।

अमुक महागछमें, अमुक गुरु सूरिके संतानमें, अमुकके शिष्यके पास, अमुक सूरिके पादांतमें ४४ ।अमुक संवत्सरमें, अमुक मासमें, अमुक पक्षमें, अमुक तिथिमे, अमुक वारमें, अमुक नक्षत्रमें, अमुक नगरमे । ४५ ।अमुकका पुत्र, अमुक नामका श्रावक, यहां गृहस्थधर्म ग्रहण करता है अमुककी पुत्री आमुककी भार्या, अमुक नामकी श्राविका, वा व्रत ग्रहण करती है । ४६ ।

नवरं क्षत्रियकेवास्ते प्राणातिपात स्थानमें प्रथम व्रतमे ४७ । ४८ । यह दो गाथा, अधिक जाननी. । युद्धमें, कोइ गौको चुरा लेजाता होवे तिसके हटानेमें, चैत्य, गुरु, साधु, संघको उपसर्ग देनेवालेको हटानेमें, तथा दुष्टके निग्रहमें, जीवके वध हुए मुझको दोष नहीं । ४९ । जनोंके, और देशके रक्षणवास्ते सिंह, व्याघ्र, शत्रुओंके हननेमें मुझको

दोष नही; अर्थात् इन कामोंके लिए हिंसा करनेसें मेरा व्रत भंग न होवे.। जल पीनेमें गणना, अन्यत्र स्नाना दिमें यथाशक्ति.। ४७। इनमें प्रमादके होनेसें, गुरुके वचनसें यह तप करुं; अल्प बहुत भांगेसें, तिससें मेरी विशुद्धि होवे.। ४ए॥ इति परिग्रह प्रमाणटिप्पनकविधिः॥

इन बारह व्रतोंमेंसें कोइ कितनेही व्रत अंगी कार करे, तिसको तितनेही उच्चार करावने.। जिस को ब मासिक सामायिक व्रत अरोपतें हैं, तिसका यह विधि है.॥ चैत्यवंदना, नंदि, क्षमाश्रमणादि सर्वपूर्ववत् सामायिकके अभिलाप करके;। और विशे षयह हैं;। कायोत्सर्गके अनंतर तिसके हस्तगत नूतन मुखवस्त्रिकाके ऊपर वासक्षेप करना.। तिसही मुखवस्त्रिकाकरके षट् (६) मासपर्यंत उभयकाल सामायिक ग्रहण करे.। पीछे तीनवार नमस्कारका पाठ करके दंडक पढावे. सयथा॥

"॥ करेमि भंते सामाइयं, सावज्जं जोगं पच्च क्खामि, जावनियमं पज्जुवासामि, डुविहं तिविहेणं, मणेणं वायाए काएणं, न करेमि, न कारवेमि, तस्स भंते पडिक्कमामि, निंदामि, गरिहामि अप्पाणं, वोसि रामि,। से सामाइए चउव्विहे तंजहा दव्वउ खित्तउ कालउ भावउ दव्वउणं सामाइअं पडुच्च, खित्तउणं इहेव वा अन्नह वा, कालउणं जाव छम्मासं, भाव

उणं जाव गहेणं न गहिज्जामि,जाव ठलेणं न ठलिज्जामि, जाव सन्निवाएणं नाभिन्नविज्जामि, ताव मे एसासामाइय पमिवत्ती ॥ "

ऐसें तीनवार पढावना. । मस्तकोपरि वासक्षेप करना, अक्षतवासाको अभिमंत्रणा, और संघके हाथ में वासक्षेप देना, यहां नही है परंतु प्रदक्षिणा तीन, करावनी. । इतिपाएमासिक सम्यक्त्वारोपणविधिः ॥

इसीतरें सम्यक्त्वका, और द्वादश व्रतोंका नी इसही दंमकसें तिस २ अभिलापसें मास, षट्ट (६) मास वा वर्ष पर्यंत, सम्यक्त्व व्रतोंका उच्चारण करना. । नवरं सम्यक्त्वका सम्यक्त्वदंडसें उच्चार करना. नवरं इतना विशेष है कि, सम्यक्त्वकी अवधिमें 'जावज्जीवाए' यह पाठ न कहना. किंतु, 'मासं ठम्मासं वरिसं' इत्यादि कहना शेष व्रतोंमें नी जावज्जीवाएके स्थानमे 'मासं ठम्मासं वरिसं' इत्यादि कहना ॥

अथ प्रतिमोद्वहनविधि· ॥ यावज्जीवतक नियम स्थिरीकरण प्रतिज्ञा जो है, तिसको प्रतिमा कहते हैं. तिनमे कालादिमें नियमव्यवछेद नही है. । ते प्रतिमा एकादश (११) गृहस्थोंकी हैं. । तद्यथा ॥

" ॥ दंसण १, वय २, सामाइय ३, पोसह ४ पमिमाय ५, बंन्न ६, अचित्ते ७, ॥ आरंन्न ८, पेस ए, उद्दिठ, वज्जाए १०, समणन्नूए य ११, ॥ १ ॥ "

अर्थः—तहां जिस प्रतिमामें मासतक श्रावक निःशंकितादि सम्यग् दर्शनवाला होवे, सा प्रथम दर्शनप्रतिमा १. व्रतधारी द्वितीया २. कृतसामायिक तृतीया ३. अष्टमी चतुर्दश्यादिमें चतुर्विध पौषध करना, चतुर्थी ४. पौषधकालमें, रात्रिकी आदि प्रतिमा, अंगीकार करनी, अस्नान, प्रासुकभोजी, दिनमें ब्रह्मचारी, रात्रिमें परिमाण करे और कृत पौषध तो, रात्रिमें भी ब्रह्मचारी, इति पंचमी ५. सदा ब्रह्मचारी षष्ठी ६. सच्चित्ताहारवर्जक सप्तमी ७. आप आरंभ नही करना, अष्टमी ८. नौकरोंसें आरंभ नही करावना, नवमी ९. उद्दिष्टकृताहारव र्जक, क्षुरमुंडित, शिखासहित, वा निराधारीकृतध नका, पुत्रादिकोंको बतलानेवाला, इति दशमी १०. क्षुरमुंडित, लुंचितकेश, वा रजोहरणपात्रधारी, साधु समान, निर्ममत्व, अपनी जातिमें आहारादिकेवास्ते विचरे, इतिएकादशी. ॥ ११ ॥

यहां पहिली एक मास, दूसरी दो मास, तीस री तीन मास, एवं यावत् इग्यारहमी इग्यारह मास पर्यंत. तथा जो अनुष्ठान, पूर्व प्रतिमामें कहा है, सोही अनुष्ठान, आगेकी सर्व प्रतिमायोंमें जानना. इनमें वितथ प्ररूपणा श्रद्धानादि करना, सो अति चार है. । तिनमें पहिली 'दर्शन प्रतिमा' तिसमें नंदि, चैत्यवंदन, क्षमाश्रमण, वासक्षेप, इनोंका विधि

दर्शनप्रतिमाके अभिलापसें सोही पूर्वोक्त रीतीसें जानना और दंडक ऐसें है।

"॥अहणं भंते तुह्माणं समीवे, मिछत्तं, दव्वभा वभिन्नं,पच्चरकामि, दंसणपडिमं, उवसंपज्जामि, नो मे कप्पइ,अप्पभिई अन्नउत्थिए वा, अन्नउत्थिअदेवयाणि वा, अन्नउत्थिअपरिग्गहिआणि वा, अरिहंतचेइआणि वा, वंदित्तए वा, नमंसित्तए वा, पुव्विअणालत्तेणं आलवित्तए वा, संलवित्तए वा, तेसिं असणं वा पाणं वा खाइमं वा दाउं वा, अणुप्पयाउं वा, तिविहं तिविहेणं, मणेणं वायाए काएणं, न करेमि न कारवेमि, करंतंपि अन्नं न समणुजाणामि, तहा अईअं निंदामि, पडुप्पन्नं संवरेमि, अणागयं पच्चख्खामि, अरिहंतसख्किअं, सिद्धसख्किअं, साहुसख्किअं, अप्पसख्किअं, वोसिरामि, तहा दव्वओ खित्तओ कालओ भावओ, दव्वओणं एसा दंसणपडिमा, खित्तओणं इहेव वा अन्नत्थ वा, कालओणं जाव मास, भावओणं जाव गहेणं न गहिज्जामि, जाव छलेणं न छलिज्जमि, जाव सन्निवाएणं नाभिभविजामि, ताव मे एसा दंसणपडिमा ॥"

शेषं पूर्ववत्। प्रदक्षिणात्रयादिक, दर्शनप्रतिमा स्थिरीकरणार्थ कायोत्सर्गादि. यहां अभिग्रह मासातिक यथाशक्ति आचाम्लादि प्रत्याख्यान करना, तीनों संध्यामे विधिसें देवपूजन करणा. पार्श्व

स्यादिवंदनका परिहार करना. शंकादि पांच अतिचारोंका त्याग करना. राजाभियोगादि ७ (६) कारणोंसें भी यह दर्शन प्रतिमा नही त्यागनी. ॥ इतिदर्शनप्रतिमा. ॥ १ ॥

अथ दूसरी व्रतप्रतिमा, सा, मास दो तक यावत् निरतिचार पांच अणुव्रत पालनविषया, गुणव्रत ३, शिक्षाव्रत ४, इनका पालना भी साथही जानना. अर्थात् दो मासपर्यंत निरतिचार द्वादश (१२) व्रतोंका पालना. यहां नंदिक्षमाश्रमणादि तिसतिस प्रतिमाके अभिलापसें पूर्ववत् । प्रत्याख्यान नियम चर्यादि सर्व तेसेंही जानने. दंडक भी तिसके अभि लापसें सोही जानना. ॥ इतिव्रतप्रतिमा ॥ २ ॥

अथ तीसरी सामायिक प्रतिमा, सा, तीन मास तक उभयसंध्यामें सामायिक करनेसें होती है. शेष नंदिनियम व्रतादिविधि सोइ अर्थात् पूर्वोक्तही जान ना. और दंडक सामायिकके अभिलापसें कहना. ॥ इतिसामायिकप्रतिमा ॥ ३ ॥

अथ चौथी पौषधप्रतिमा, सा, चार मास यावत् अष्टमी चौदशको चार प्रकारके आहारके त्यागमें रक्तको चार प्रकारके पौषधके करनेसें होती है. इत्यादिभेदसें दो आदि मासपर्यंत इस कथनसें यथाशक्ति सूचन किइ गइ. यहां नंदिव्रत नियमा

दिविधि सोही और दंमक तिसके (पौषधप्रतिमाके) अजिलापसें कहना. ॥ इतिपौषधप्रतिमा ॥ ४ ॥

ऐसें पांचमासादिकालवाली शेषप्रतिमायोमें जी यही पूर्वोक्त विधि है. नंदिक्षमाश्रमण दंमकादि तिसतिस प्रतिमाके अजिलापसे. व्रतचर्या सोही है, परं संप्रतिकालमे, पर्यायसें, वा संहननकी शिथिलतासें, पांचमी प्रतिमासें लेके इग्यारहमीतक प्रतिमाके अनुष्ठानका विधि शास्त्रोंमे नहि दिखताहै प्रतिमाका आरंज शुज मुहुर्तमें करना. ॥ इति देशविरतिसामायिकारोपणविधिः ॥

उपधान विधि ॥

श्रुतसामायिकारोपणविधि कहते हैं. ॥ तहां यतियोकों श्रुतसामायिकारोपण, योगोद्वहनविधिसें होता है. उनका श्रुतारोपण, आगम पाठसें होता है. और योगोद्वहन आगमपाठ रहित एसे गृहस्थोंको, श्रुतसामा यिकारोपण, उपधानोद्वहनसें होता है सो श्रुतारो पण, परमेष्ठिमंत्र, ईर्यापथिकी, शक्रस्तव, चैत्यस्तव, चतुर्विंशतिस्तव श्रुतस्तव, सिद्धस्तवादि पाठकरके होता है. ॥

उपधीयते ज्ञानादि परीक्ष्यते अनेनेत्युपधानं–जिससें ज्ञानादिकी परीक्षा करिये, तिसको उपधान कहते है अथवा चार प्रकारके संवर समाधिरूप सुखशय्यामें उत्तम होनेसें उत्सीर्पक स्थानमें उप

धीयते स्थापन करिये, तिसको उपधान कहिये. तिस उपधानमें ठ (६) श्रुतस्कंधोंका उपधान होता है, सोही दिखाते हैं. परमेष्ठिमंत्रका १, ईर्यापथिकीका २, शक्रस्तवका ३, अर्हत् चैत्यस्तवका ४, चतुर्विंशतिस्तवका ५. श्रुतस्तवका ६.

सिद्धस्तवकी वाचना उपधानविना होती है.

प्रथम परमेष्ठिमंत्र महाश्रुतस्कंधके पांच अध्ययन है, और एक चूलिका है. दो दो पदके आलावे पांच है, सात २ अक्षरके अर्हत् आचार्य उपाध्याय नमस्कार रूप तीन पद है. सिद्धनमस्कृति. रूप दूसरा पद पांच अक्षरोंका है, साधुओंको नमस्काररूप पांचमा पद नव अक्षरोंका है, एवं पांच पद. तिसके पीठे चूलिका, तिसमें दो पदरूप प्रथम आलापक सोलां (१६) अक्षरोंका है, तृतीय पदरूप दूसरा आलापक आठ (८) अक्षरोंका है, और चौथे पदरूप तीसरा आलापक नव (९) अक्षरोंका है. तहां पंचपरमेष्ठिमंत्रमें पांचो पदोंमें तीन उद्देशे है, और चूलिकामें भी उद्देशे तीन है एवं उद्देशे ६. ॥ प्रथमके पांचो पदोंमें पैंतीस (३५) अक्षर है, और चूलिकामें तेतीस (३३) अक्षर है. पांच अध्ययन ऐसें है ॥

नमो अरिहंताणं १। नमो सिद्धाणं २ । नमो

आयरिआणं ३। नमो उवज्झायाणं ४। नमो लोए सव्वसाहूणं ॥ ५ ॥ एका चूलिका यथा ॥

एसो पंच नमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो, मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥ १ ॥ दो दो पदके आलापक यह है ॥

नमो अरिहंताणं। नमोसिद्धाणं ॥ १ ॥ „
नमो आयरिआणं।नमो उवज्झायाणं ॥ २ ॥ „
नमो लोए सव्वसाहूणं ॥ ३ ॥ „
एसो पच नमुक्कारो। सव्वपावप्पणासणो ॥४॥„
मंगलाणं च सव्वेसिं। पढमं हवइ मंगलं ॥५॥„
सात २ अक्षरके तीन पद यह है ॥

नमो अरिहंताण। ७। नमोआयरिआणं। ७। नमो उवज्झायाणं। ७। ॥ १ ॥ „

पांच अक्षरोंका तीसरा पद "नमो सिद्धाणं। „२
पांचमां पद नव अक्षरप्रमाण "नमो लोएसव्वसाहूणं।३„

चूलिकामें (१६) अक्षरप्रमाण प्रथम आलापक॥
एसो पंच नमुक्कारो, सव्वपावप्पणा सणो ॥ १ ॥
चूलिकामें आठ अक्षर प्रमाण दूसरा आलापक„
मंगलाणं च सव्वेसिं ॥ २ ॥„
चूलिकामें नव अक्षर प्रकार तीसरा आलापक
"पढमं हवइ मंगलं ॥ ३ ॥„

सर्व अक्षर अडसठ (६८) तिसका उपधान ऐसें है. ॥

नंदि, देववंदन, कायोत्सर्ग, क्षमाश्रमण, वंद नक, प्रमुख नमस्कारश्रुतस्कंधके अनिलापसें पूर्व वत् जाणना. और अनिमंत्रित वासक्षेप नी पूर्व वत् जाणना. । तहां पूर्वसेवामें एकनक्तके अंतरे उपवास पांच, एवं दिन ११, तहां प्रथम नंदिदिन में एकनक्त, वा निविगइ, दूसरे दिन उपवास, तीसरे दिन एकनक्त, चौथे दिन उपवास, पांचमे दिन एकनक्त, ठठे दिन उपवास, सातमे दिन एक नक्त, आठमे दिन उपवास, नवमे दिन एकनक्त, दशमे दिन उपवास, एकादशमे दिन एकनक्त. ऐसें द्वादशम तप पूर्व सेवामें करना. । तहां पंचपरमेष्ठि पदोंकी वाचना नंदिविना नी देनी. शक्रस्तवका पढना, वासक्षेपपूर्वक तीन नमस्कारोंका पढना, सर्व वाचनाओंमें जाणना. । तहां श्रेणिबद्ध आठ आचा म्ल करने, ऐसें एकोनविंशति (१ए) दिन. पीठे वीसमे दिन एकनक्त, इकवीसमे दिन उपवास, बावीसमे दिन एकनक्त, तेइवीसमे दिन उपवास, चौवीसमे दिन एकनक्त, पच्चीसमे दिन उपवास. । ऐसें अष्टम तप उत्तर सेवामें. । पीठे चूलिकाकी वाचना एसो पंच यहांसें लेके हवइ मंगलं ॥

इति नमस्कारस्योपधानं॥ पीठे तिसकी वाचना, तिसका विधि यह है. ॥ पहिलां सामाचारीका पुस्तक पूजना, पीठे मुखवस्त्रिकासें मुख ढांकके

ऐर्यापथिकी (इरियावहियं) पमिक्कमके क्षमाश्रमण पूर्वक कहें. ॥

"॥ जगवन् नमुक्कारवायणासंदिसावणियं वाय णालेवावणियं वासक्खेवं करेह। चेश्याइं च वंदावेह ॥"

ऐसें नंदि करके छवीसमें दिन एकजक्त करें,वाचना देनी. चूलिकाके चारों पदोंके सर्व उपधानोंमें प्रति दिन अव्यापार पौषध करना, सवेरे २ पौषध पारके पुन: २ नित्य पौषध ग्रहण करना, और नमस्कार सहस्र गुणना ॥ इतिप्रथमसुपधानम् ॥ १ ॥

ऐर्यापथिकीका जी उपधान ऐसेंही है. आदिकी, और अंतकी, दोनोंही नंदि तिसके–ऐर्यापथिकीके अजिलापसें करनी. । तहां वाचनामे आठ अध्ययन, और वाचना दो,–एक पांच पदोंकी और दूसरी तीन पदोंकी; पांच पदोंकी एक चूलिका ॥

"॥ इछामि पडिक्कमिउं इरिआवहिआए विरा हणाए। १। गमणागमणे । २ । पाणक्कमणे, वीयक्कमणे हरीयक्कमणे ।३। ओसाउत्तिंगपणगदगमट्टीमक्कमासं ताणासंकमणे । ४ । जे मे जीवा विराहिया ।५। यह एक वाचना, द्वादशम तपके पीछे देते हैं ॥ १ ॥

"॥ एगिंदिया, बेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया । ६ । अजिहया, वत्तिया, लेसिया, संघाइ या, संघट्टिया, परियाविया, किलामिया, उद्दविया, गणाओ गणं संकामिया, जीवियाओ ववरोविया,

तस्स मिछामि डुक्कमं । ७ । तस्सउत्तरीकरणेणं, पायछित्तकरणेणं, विसोहीकरणेणं, विसल्लीकरणेणं, पावाणं कम्माणं निग्घायणठाए, ठामि काउस्सग्गं।०। यह दूसरी वाचना, आठ आचाम्लके अंतमें देनी. ॥ २ ॥ इसके पीछे ॥

" ॥ अन्नथ्थ उससिएणं, नीससिएणं, खासिएणं, छीएणं, जंनाइएणं उकूएणं, वायनिसग्गेणं, नमलिए, पित्तमुछाए, ॥ १ ॥ सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, सुहुमेहिं खेलसंचालेहिं, सुहुमेहिं दिठिसंचालेहिं।२। एवमाइएहिं, आगारेहिं, अनग्गो अविराहिओ, हुज्ज मे काउस्सग्गो । ३ । जाव अरिहंताणं, नगवंताणं, नमुक्कारेणं, न पारेमि । ४ । ताव कायं, ठाणेणं, मोणेणं, जाणेणं, अप्पाणं वोसिरामि । ५ ।" यह चूलिकाकी वाचना, अंत दिनमें देनी. ॥ इतिऐर्यापथिक्याउपधानम् ॥ २ ॥

अथ शक्रस्तवका उपधान कहते हैं. ॥ तहां नंदिआदि सर्व शक्रस्तवके अनिलापसें पूर्ववत्. । तथा प्रथम दिनमें एकनक्त, दूसरे दिन उपवास, तीसरे दिन एकनक्त, चौथे दिन उपवास, पांचमे दिन एकनक्त, छठे दिन उपवास,॥सातमे दिन एक नक्त; । तहां तीन संपदायोंकी प्रथम वाचना देते हैं. ॥ यथा ॥

"॥ नमुथ्थुणं अरिहंताणं जगवंताणं । १ । आइ गराणं तिथ्थयराणं सयंसंबुद्धाणं । २ । पुरिसुत्तमाणं पुरिससीहाणं पुरिसवरपुंमरीआणं पुरिसवरगंधह थ्थीणं । ३ । इत्येका वाचना ।

यह एक वाचना । नमुथ्थुणं । यह पद भिन्न है. । तीनोंही संपदा अनुक्रमे दो, तीन, चार पद वाली है. । पीछे एकश्रेणिकरके निरंतर सोलां (१६) आचाम्ल करने. । तिसमें पांच २ पदोंवाली तीन संपदाकी वांचना देते हैं. ॥ यथा ॥

॥ लोगुत्तमाणं लोगनाहाणं लोगहिआणं लोगप ईवाणं लोगपज्जोअगराणं । ४ । अजयदाणं चक्खुद याणं मग्गदयाणं सरणदयाणं बोहिदयाणं ।५। धम्म दयाणं धम्मदेसियाणं धम्मनायगाणं धम्मसारहीणं धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टीणं । ६ । यह दूसरी वाचना॥२।

पीछे फिर जी तिसही श्रेणिकरके सोलां आचा म्ल करने. । तिसमें दो तीन पदोंवाली तीन संप दाकी वाचना देनी. ॥ यथा ॥

॥ अप्पमिहयवरनाणदंसणधराणं विअट्टछउमा णं । ७ । जिणाणं, जावयाणं तिन्नाणं तारयाणं, बुद्धा णं बोहयाणं, मुत्ताणं मोअगाणं । ८ । सवन्नूणं सव्व दरिसिणं सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमवाबाहमपुण राविति,सिद्धिगइनामधेयं,ठाणं संपत्ताणं,नमो जिणा णं जिअजयाणं । ए । " यह तीसरी वाचना ॥ ३ ॥

"॥ जे अ अईआ सिद्धा, जे अ नविस्संतिणा गए काले ॥ संपइ अ वट्टमाणा, सवे तिविहेण वंदामि ॥" इस अंतिमगाथाकी वाचना नी, तीसरी वाचनाके साथही देनी. ॥ इतिशक्रस्तवोपधानम्॥३॥

अथ चैत्यस्तवका उपधान कहते हैं. ॥ नंदिआदिपूर्ववत्. । प्रथम दिने एक नक्त, दूसरे दिन उपवास, तीसरे दिन एक नक्त; पीछे श्रेणिकरके तीन आचाम्ल करने. अंतमें तीनोंही अध्ययनोंकी समकालें एक वाचना देनी. ॥ यथा ॥

"॥ अरिहंतचेइआणं, करेमि काउस्सग्गं, वंदणवत्तिआए, पूअणवत्तिआए, सक्कारवत्तिआए, सम्माणवत्तिआए, बोहिलानवत्तिआए, निरुवसग्गवत्तिआए । १ । सद्धाए, मेहाए, धीईए, धारणाए, अणुप्पेहाए, वड्ढमाणीए, ठामिकाउस्सग्गं । २ । अन्नथ्थउससिएणं—यावत्—वोसिरामि ॥ ३ ॥" यह एकही वाचना है. ॥ इति चैत्यस्तवोपधानम् ॥ ४ ॥

अथ चतुर्विंशतिस्तवका उपधान कहते हैं. ॥ नंदि, दो पूर्ववत् । प्रथम दिने एकनक्त, दूसरे दिन उपवास, तीसरे दिन एकनक्त, चौथे दिन उपवास, पांचमे दिन एकनक्त, छठे दिन उपवास, सातमे दिन एकनक्त. । एसें अष्टम तप । अंतमें प्रथम गाथाकी एक वाचना. यथा ॥

"॥ लोगस्स उज्जोअगरे, धम्मतिथ्थयरे जिणे ।

अरिहंते कित्तइस्सं, चउवीसंपि केवली । १ ।" यह एक वाचना. ॥ १ ॥

पीछे श्रेणिकरकेही वारां (१२) आचाम्ल करने. तिसके अंतमें तीन गाथाकी वाचना. ॥ यथा ॥

॥ उसजमजियं च वंदे, संजवमजिणंदणं च सुमइं च। पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ।२। सुविहिं च पुप्फदंतं, सीअलसिज्जंस वासु पुज्जं च ॥ विमलमणंतं च जिणं, धम्मं संतिंच वंदामि ।३। कुंथुं अरं च मल्लिं, वंदे मुणि सुव्वयं नमिजिणं च ॥ वंदामिरिठनेमिं, पासं तह वद्धमाणं च ।४। यह दूसरी वाचना. ॥२॥

पीछे तिस श्रेणिकरकेही तेरा (१३) आचाम्ल करने तिसके अंतमें तीसरी वाचना ॥ यथा ॥

॥ एवं मए अजिथुआ, विहुयरयमला पहीणजरमरणा ॥ चउवीसंपि जिणवरा, तिथ्थयरा मे पसीयंतु । ५ । कित्तियवंदियमहिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा । आरुग्गवोहिलाजं समाहिवरमुत्तमं दिंतु । ६ । चंदेसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहिय पयासयरा । सागरवरगंजीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥ ७ ॥" यह तीसरी वाचना. ॥ ३ ॥ इति चतुर्विंशतिस्तवोपधानम् ॥ ५ ॥

अथ श्रुतस्तवका उपधान कहते हैं । नंदि, दो पूर्ववत् । प्रथमदिने एकजक्त, दूसरे दिन उपवास, तीसरे दिन एकजक्त, पीछे श्रेणिकरके पांच आचाम्ल

करने. तिसके अंतमै दो गाथाओंकी और दोनों वृत्तों की समकालही वाचना.। तिसमें पांच अध्ययन है.। तिसमें प्रथमकी दो गाथाओंके दो अध्ययन ॥ यथा ॥

"॥ पुक्खरवरदीवड्ढे, धायइसंडे अ जंबुदीवेअ। भरहेरवयविदेहे, धम्माइगरे नमंसामि ।१। तम तिमिरपडलविद्धंसणस्स, सुरगणनरिंदमहिअस्स । सीमाधरस्स वंदे, पप्फोडिअमोहजालस्स ।२। तीसरा अध्यायन वसंततिलका वृत्तसें ॥ यथा ॥

॥ जाईजरामरणसोगपणासणस्स, कल्लाणपुक्खलविसालसुहावहस्स । को देवदाणव नरिंदगणच्चिअस्स, धम्मस्स सारमुवलब्भ करे पमायं ।३।

चौथा अध्ययन शार्दूलविक्रीडितवृत्तके पूर्वार्द्धसें। यथा

॥ लोगो जह पइट्ठिउं जगमिणं तेलुक्कमच्चासुरं, धम्मो वड्ढउ सासउ विजयउ धम्मुत्तरं वड्ढउ ।४। ।५।" इति श्रुतस्तवोपधानम् ।६। इति षडुपधानानि ।

तथा सिद्धस्तवमें प्रथम तीन गाथाकी वाचवा यथा

"सिद्धाणं बुद्धाणं, पारगयाणं परंपरगयाणं । लोअग्ग मुवगयाणं, नमो सया सव्वसिद्धाणं ।१। जो देवाणविदेवो, जं देवा पंजली नमंसंति । तं देवदेवमहिअं, सिरसा वंदे महावीरं ।२। इक्कोवि नमुक्कारो, जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स । संसार सागराउ, तारेइ नरं व नारिं वा ॥ ३ ॥" शेष दो गाथा ॥ यथा ॥

॥ उज्जिंतसेलसिहरे, दिरका नाणं च निसीहि आ जस्स । तं धम्मचक्कवट्टिं, अरिठनेमिं नमंसामि । ४ । चत्तारि अठ दस दो अ, वंदिआ जिणवरा चउव्वीसं । परमठनिठिअठा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसं तु ॥ ५ ॥" इत्युपधानवाचना स्थितिः ॥ अथ विस्तार, निशीथसिद्धांतसें उधृत उपधानप्रकरणसें जानना ॥

ज्ञावार्थः—पांच नमस्कारमें पांच उपवासका उप धान होता है, आठ आचाम्ल तथा अतमे एक अष्टमतप, और बत्तीस आचाम्ल. चैत्यस्तवमें एक उपवास, और तीन आचाम्ल करणे । चतुर्विंशति स्तवमें एक षष्ठतप, एक उपवास, और पंचवीस (२५) आचाम्ल करणे. । श्रुतस्तवमें एक उपवास, और पांच आचाम्ल. । तीर्थंकर गणधरोंने चैत्यवं दनादि सूत्रमें यह उपधान कथन करा है ॥ ५ ॥ व्यापाररहित, विकथाविवर्जित, रौद्र ध्यान रहित, विश्राम रहित उपयोगसहित, उपधान करे, ॥ ६ ॥ यह उत्सर्ग कहा अब अपवाद कहते हैं अथ कदापि उपधानवाही बालक होवे, वा वृद्ध होवे, वा शक्तिरहित तरुण होवे तो, अपनी शक्तिप्रमाण उपधान प्रमाण पूर्ण करे । रात्रिजोजनकी विरति, चतुर्विधाहार, वा त्रिविधाहार, वा द्विविधाहार प्रत्या ख्यानरूप करे; नवकारसहिआदि पच्चरकाण कर

के. । एक शुद्ध आंबिलकरे, अथवा इतर दो आंबि लकरनेसें, एक उपवास होता है. पणतालीस (४५) नवकारसहि करनेसें एक उपवास होता है. चौवीस (२४) पोरसि करनेसें, और दश (१०) साढपोरसी करनेसें, एक उपवास होता हैं. तीन निवि करनेसें, और चार एकलठाणे करनेसें, एक उपवास होता हैं. आचरणासें सोला (१६) पुरिमढ करनेसें उपवास होता है. चार एकासनेसें, और आठ बियासणे करनेसें जी, उपवास होता है. अर्थात् उपवासका जो फल है, सोही प्रायः पूर्वोक्त तपका फल है. इसवास्ते जिसकी पूर्वोक्त उपधानकी शक्ति न होवे सो, इन तपोंमेसें किसी जी तपके करनेसें उपधान प्रमाण पूर्ण करे. ॥ ११ ॥

गौतमस्वामी कहते हैं. हे जगवान् ! ऐसें करते हुए प्राणीको बहोत काल होवे तो, कदापि नवकारवर्जित नि, तिसका मरण हो जावे, तो नवकार वर्जित सो प्राणी, अनुत्तर, निर्वाण, कैसें प्राप्त करें ? तिसवास्ते नवकार प्रथमही ग्रहण करो, उपधान होवे, वा न होवे. ॥ १३ ॥

महावीर स्वामी कहते हैं. हे गौतम ! जो प्राणी जिस समयमें व्रतोपचार (उपधानारंज) करे, तिसही समयमें, तूं जिनाज्ञाकरके ग्रहण करा हैं व्रतार्थ जिसनें, ऐसा तिसको जाण. ॥ १४ ॥ ऐसें जिसने

उपधान करा है, सो प्राणी नवांतरमें सुलनवोधि होतेंहैं और उपधानके अध्यवसायवाले नी, हे गौतम ! आराधक होतें है. परंतु हे गौतम ! नक्ति वाला नी प्राणी, जो उपधानविना श्रुतको ग्रहण करे, तिसको नहीं ग्रहण करनेवालेके सदृश जाण ना तथा सो जीव, तीर्थंकरकी, तीर्थंकरके वच नोंकी, संघकी, और गुरुजनकी, आशातना करता है. सो आशातना वहुल प्राणी, हे गौतम संसा रमें नमण करता है. उपधानवीना नवकार जिसने पढ लिया है, तिसको नी उपधान पीठेसेनी कर नेसें वोधि, (जिनधर्मप्राप्ति) सुलन कही है यह उपधानकरके प्रधान, निपुण, संपूर्ण नी वंदन विधान, जिनपूजा, पूर्वकही श्रुतोक्त नीतिकरके पढना. तिस पच मंगलको स्वर, व्यजन, मात्रा, विंडु, पदछेद, स्थानोंकरके शुद्ध पढके, चैत्यवंदन सूत्रको, और अर्थको विशेपकरके जाणना. तिसमें जहां सूत्रविपे, वा अर्थविपे, संदेह होवे तो, तिस को वहुशः विचारके संपूर्ण संदेहरहित करना ॥२१॥

अथ शुनतीथि, करण, मुहूर्त्त, नक्षत्र, जोग, लग्नमें, चंडवलके अनुकूल हुए, कल्याणकारी प्रश स्त समयमे, अपने विनवानुसार नगवान्का पूजन कर, परम नक्तिसें विधिपूर्वक साधुवर्गको प्रतिलान के, अतिसमूह सहित, हर्पवशसे खडे हुवे है,

पुलक (रोम) जिसके, श्रद्धासंवेगविवेक परम वैराग्ययुक्त, निविड्रागद्वेषमोहमिथ्यात्वमलरूप कलंक रहित, अति उल्लसायमान, निर्मल अध्यवसाय करके, अनुसमय, त्रिभुवनगुरु जिन भगवानकी प्रतिमामें स्थापन किये हैं, नेत्र, और मन जिसने, तथा जिन चंद्रको वंदना करनेसें मैं धन्य हूं ऐसें मानते हुए, अपने मस्तकके ऊपर रचा है करकमलरूप मुकुट जिसने, जंतुरहित स्थानमें पदपदमें निःशंक सूत्रार्थको भावते (विचारते) हुए, ऐसें पूर्वोक्त विशेषणवाले उपधानवाहिने, जिननाथके कथन करे गंभीर समयसिद्धांतमें कुशल, शुभचारित्रसंयुक्त, अप्रमादादि बहुविध गुण संयुक्त, ऐसें गुरुके साथ, चतुर्विध संघसंयुक्त, विशेषसें निजबंधु सहित, इस निपुणविधिकरके जिनबिंबको वंदना करनी. ॥ ३० ॥

तदनंतर उपधानवाही, गुणाढ्यसाधुओंको परम भक्तिसें वंदना करे. तथा साधर्मिओंको यथायोग्य प्रणामादि करे. पीछे बहुमोलके उत्कृष्ट वस्त्र प्रदान पूर्वक भक्ति करके उपधानवाहिने, श्रीसंघका भारी सन्मान करना. ॥ ३१ ॥

इस अवसरमें अछीतरें जान्या है गंभीर सिद्धांतका सार जिसने, ऐसे गुरुने, आक्षेपिणी, विक्षेपिणी, संवेदिनी, और निर्वेदिनी, यह चार प्रकारकी

धर्मकथा श्रद्धासंवेग साधनेमें निपुण चारी प्रबंध करके करनी. ॥ ३३ ॥

पीछे तिस भव्यजीवको श्रद्धासंवेगमें तत्पर जाण के, निपुणमति आचार्य, चैत्यवंदनादि करनेमे यह वचन कहे. ॥ ३४ ॥

भो भो देवानुप्रिय! निज जन्म साफल्यताको प्राप्त करके तैंने आजसें लेके जावजीवपर्यंत तिनों ही कालमें एकाग्र सुस्थिर चित्तकरके अर्हत्प्रतिमा को वंदना करनी. क्योंकि, क्षणभंगुर मनुष्यपणेमें यही सार है, तहां तैने पुर्वान्हमे जिनप्रतिमाको और साधुयोको वंदना करकेही भोजन करना कल्पे, और अपराह्नमें भी फिर वंदना कर केही सोना कल्पे, अन्यथा नही. ॥ ३७ ॥

ऐसें अभिग्रहबंधन करके पीछे वर्द्धमान विद्यासें अभिमंत्रके गुरु सात मुष्टीप्रमाण गंध (वासक्षेप) ग्रहण करे. पीछे तिस उपधानवाहीके मस्तकऊपर "नित्थारगपारगो हविज्ज तुमं" ऐसें उच्चारण करता हुआ गुरु, नमस्कारपूर्वक निक्षेप करे (माले) इस विद्याके प्रभावके जोगसें निश्चय यह भव्य प्रारंभित कार्योंका शीघ्र निस्तार करनेवाला, और पार होनेवाला होवे. ॥ ४१ ॥

अथ चतुर्विध संघभी, तूं, निस्तारक पारग हो,

तूं धन्य है. सलक्षण है, इत्यादि बोलता हुआ, तिसके मस्तकऊपर वासक्षेप करे. ॥ ४३ ॥

पीछे जिनप्रतिमाके पूजादेशसें सुरभिगंधसंयुक्त अम्लान श्वेतमाला ग्रहण करके, गुरु अपने हाथों सें तिस उपधानवाहीके दोनों खंधोंऊपर आरोपण करता हुआ, शुद्ध चित्तकरकेनिसंदेह ऐसा वच न कहे. ॥ ४४ ॥

अहोतरें प्राप्त किया निज जन्म जिसने, तथा संचय करा है अतिभारी पुण्यका समूह जिसने, ऐसें भो भो भव्य! तेरी नरकगति, और तिर्यग् गति, अवश्यमेव बंद होगई. हे सुंदर! आजसें लेके, तूं, अपयस, नीच गोत्रोंका बंधक नही है. तथा जन्मांतरमें भी, यह पंचनमस्कार तुजको दुर्ल भ नही है. पांच नमस्कारके प्रभावसें जन्मांतरमें भी तुजको प्रधान जाति, कुल, आरोग्य संपदाएं प्राप्त होवेगी. और इसके प्रभावसें मनुष्य कदापि संसारमें दास, प्रेष्य, दुर्भग, नीच. और विकलें द्रिय नही होते हैं. किं बहुना. जोइस विधिसें इस श्रुतज्ञानको पढके श्रुतोक्त विधिसें शुद्ध आचा रमें-क्रिया करे, वे, यदि तिसही भवमें उत्त म निर्वाणको प्राप्त न होवे तो, अनुत्तर ग्रैवेयकादि देवलोकोंमें चिरकाल क्रीडा करके उत्तम कुलमें उत्कृष्ट प्रधान सर्वांगसुंदर प्रकट सर्वकला प्राप्त करी

है जिनोंने, ऐसेलोकोंके मनको आनंद देनेवाले होके, देवेंद्रसमान ऋद्धिवाले, दयामें तत्पर, दानविनयसंयुक्त, कामजोगोंसें विरक्त, संपूर्ण धर्मके अनुष्ठानसें, शुज ध्यानरूप अग्निसें चार घातिकर्मरूप इंधनको दग्ध किये हैं–जिनोंने, ऐसें महासत्त्व, निर्मल केवल ज्ञान, सर्व मलकर्मसें रहित, होकर शीघ्र सिद्ध होते हैं. ॥ ५३ ॥ यह निर्मल फल जाणके वहोत मान देने योग्य जो देव, सोही जये सूरि, ऐसें जो जिन तिनके वचनसें यह उपधान महानिशीथ सूत्रसें सिद्ध करो.–इस अंतिम गाथामें प्रकरणकर्त्ता श्रीमान देवसूरिने जगवानूके 'महमाणदेवसूरिस्स' इस विशेषणद्वारा अपना जी नाम, सूचन करा है ॥ ५४ ॥ इत्युपधानप्रकरणजावार्थः॥

॥ इत्युपधानविधिः ॥

अथ मालारोपण विधि कहते हैं ॥ तहां पिठलाही नंदि क्रम जाणना. । और इतना विशेप है कि, मालारोपनतपके पूर्ण हुए तत्कालही, वा दिनातरमें होता है तहां यह विधि है. ॥ मालारोपणसें पहिले दिनमें साधुओंको अन्न पान वस्त्र पात्र वसति पुस्तक दान देवे, संघको जोजन देवे, वस्त्रादिकसें संघकी पूजा करे, शुज तिथि वार नक्षत्र लग्नमें, दीक्षाके उचित दिनमें, परम युक्तिसें वृहत्स्नात्र विधिसें जिनपूजा करे, माता पिता परिजन साधर्मि

कादिकोंको एकठे करे, पीछे मालाग्राही कृतउचित वेष, कृतधम्मिल, उत्तरासंगवाला, निजवर्णानुसारसें जिनोपवीत उत्तरीयादिधारी, सज करके प्रचुरगंधादि उपकरण अक्षत नालिकेर हाथमें लेके पूर्ववत् समवसरणको तीन प्रदक्षिणा करे. । पीछे गुरुके समीपे क्षमाश्रमणपूर्वक कहे ॥ "इच्छाकारेण तुम्हे अम्हं पंचमंगलमहासुअखंध इरिआवहिआ सुअखंध, सक्कथ्थयसुअखंध, चेइअथ्थयसुअखंध, चउवीसथ्थयसुअखंध, सुयथ्थयसुअखंध, अणुजाणावणिअं, वासक्खेवं करेह" ॥ पीछे गुरु भी अभिमंत्रित वासक्षेप करे. । फिर श्राद्ध क्षमाश्रमणपूर्वक कहे "चेइआइं च वंदावेह" पीछे वर्द्धमानस्तुतियोंसें चैत्यवंदन कराना, शांतिदेवादि स्तुति पूर्ववत्. फिर शक्रस्तव अर्हणादि स्तोत्र कहना. पूर्ववत्. । पीछे उठके "पंचमंगलमहासुअखंध पडिक्कमणसुअखंध भावारिहंतथ्थय ठवणारिहंतथ्थय चउवीसथ्थय नाणथ्थय सिद्धथ्थय अणुजाणावणिअं करेमि काउस्सग्गं अन्नथ्थ उससिएणं—यावत्—अप्पाणं वोसिरामि" कहके चतुर्विंशतिस्तव चिंतन करे, पारके प्रकट चतुर्विंशतिस्तव पढे. । गुरु तीनवार परमेष्ठिमंत्र पढके आसन ऊपर बैठ जावे, संघ और परिजनसहित श्राद्धको भो भो देवाणुपिया, संपाविअ निययजम्मसाफल्लं ॥ तुमए अजप्पभिई, तिक्कालं जावजीवाए ॥ १ ॥

वंदे अवाइं चेइआइं, एगग्गसुथिरचित्तेणं ॥
खणभंगुराओ मणुअ, त्तणाउ इणमेव सारंति ॥ २ ॥
तथ्थ तुमे पुवण्हे, पाणंपि न चेव ताव पायवं ॥
नो जाव चेइआइं, साहूविअ वंदिआ विहिणा ॥ ३ ॥
मझ्झण्हे पूणरवि, वंदिऊण निअमेण कप्पए भुत्तुं ॥
अवरण्हे पुणरवि, वंदिऊण निअमण सुअणंति॥४॥

इत्यादि महानिशीथमध्यगत वीस गाथामें कही हुई देशना देके, तीन संध्यामें चैत्यवंदन साधुवंदन करनेके अभिग्रह विशेषोंको देवे. पीछे वासमंत्रके सात गंधकी मुष्ठी " निथ्थारगपारगो होहि " ऐसें कहता हुआ गुरु, तिसके शिरमें प्रक्षेप करे. । पीछे अक्षतसहित वासक्षेपको मंत्रे । तिस समयमे सुर स्निगध अम्लान श्वेत पुष्पोंके समूहसें ग्रंथन करी हुई मालाको जिनप्रतिमाके पगोंऊपर स्थापन करे। सूरि खडा होके अभिमंत्रित वासको जिनचरणोंके ऊपर क्षेप करे, पास रहे साधु साध्वी श्रावक श्रावि का सबको गंधाक्षत देवे । श्राद्ध नमस्कारअनुज्ञा केवास्ते तीन प्रदक्षिणा देवे । तब गुरु ' निछारग पारगो होहि गुरुगुणेहिं बुह्वाहि ' ऐसें कहे. और जन (संघ) " पूर्णमनोरथवाला तूं हुआ है, तूं धन्य है, तूं पुण्यवान् है " ऐसें कहते हुए उनके उपर गुरुसंघादि वासक्षेप करे। पीछे फिर श्राद्ध समवसरणको तीन प्रदक्षिणा देवे। पीछे गुरु और

सम वसरणको तीन प्रदक्षणा देवे, पीछे गुरुसंघसहित समवसरणको तीन प्रदक्षिणा देवे, पीछे नमस्कारादिश्रुतस्कंधअनुज्ञापनार्थ कायोत्सर्ग करे, एकलोगसकाकाउसग करें, पारके प्रगट लोगस्स कहे. पीछे माला धारण करनेवाला तिसके स्वजनोंकेसाथ प्रतिमाके आगे जाके शक्रस्तव पढके "आणुजाणउ मे जयवं अरिहा" ऐसें कहके जिनपादऊपरि पूर्व स्थापित मालाको लेके निजबंधुके हाथमें स्थापन करके नंदिके समिप आय कर, श्राद्ध, मालाको गुरुसें मंत्रित करावे, । पीछे गुरु खमा होकर उपधानविधिका व्याख्यान करे. सो श्राद्ध जी, खमा होके श्रवण करे. "परमपयपुरिपहि" इत्यादि मालाकी गाथा महिमां दर्शकसें गुरु देशना करे. ।

तत्तो जिणपडिमाए, पूआदेसाओ सुरनिगंबद्धं ॥
अमिलाण सिअदामं, गिएिहअ गुरुणा सहत्थेणं॥१॥
तस्सोजयखंधेसु, आरोवंतेण सुद्धचित्तेण ॥
निसंदेहं गुरुणा,वत्तवं एरिसं वयणं ॥ २ ॥
जो जो सुलद्धनिअजम्म, निचिअअइगरुअपुन्नपप्भार॥
नारयतिरिअगईओ, तुझावस्सं निरुद्धाओ ॥ ३ ॥
नो बंधगोसि सुंदर, तुममित्तो अकयनीअगुत्ताणं ॥
नो डुल्लहो तुह जम्मं, तरेवि एसो नमुक्कारो ॥ ४ ॥
पंचनमुक्कारजावओ अ जम्मंतरेवि किर तुझ ॥
जाईकुलरूवग्ग, संपयाओ पहाणाओ ॥ ५ ॥

अन्न च इमाओ च्चिअ,न हुंति मणुआ कयावि जीअलोए
दासा पेसा डुजगा, नीआ विगलिंदिआ चेव ॥ ६ ॥
किं बहुणा जे इमिणा, विहिणा एअं सुअं अहिजित्ता॥
सुअनणिअ विहाणेणं, सुद्धे सीले अभिरमिज्जा॥७॥
नो ते जइ तेणंचिअ. नवेण निव्वाणमुत्तमं पत्ता ॥
तोणुत्तर गेविज्जाइएसु सुइरं अभिरमेउं ॥ ८ ॥
उत्तमकुलम्मि उक्किठ,लठसवंगसुदरापयरूा ॥
सव्वकलापतठा, जणमणआणंदणा होउं ॥ ९ ॥
देविंदोवमरिद्धी, दयावरा दाणविणयसंपन्ना ॥
निव्विणकामजोगा, धम्मं सयलं अणुठेउं ॥ १० ॥
सुहझाणानलनिदड्ढ, घाइकम्मिधणा महासत्ता ॥
उप्पन्नविमलनाणा, विहुयमला झत्ति सिझंति ॥११॥

यह गाथा तीनवार गुरु कहे । इन गाथायोका जावार्थ उपधानप्रकरणजावार्थमे लिख दिया है. ॥

पीछे तिसके स्कंधमें मालाप्रक्षेप करनी ॥ पीछे श्राद्धवर्ग आरात्रिक (आरती) गीननृत्यादि बहुत करे । उपधानवाही श्रावकने तिस दिनमे आचाम्लादि तप करना, यदि पोपधशालामें मालारोपण होवे, तदा संघसहित जिनमंदिरमे जावे, चैत्यवंदना करके फिर पोपधागामें आयकर मंगलीपूजादि करे ॥ इस उपधानविधिको निशीथ, महानिशीथ, सिद्धांतके पढनेवालोनेश्रुतसामायिकसमान माना है. और निशीथ महानिशथके तिरस्कार

करनेवालोंने नही अंगीकार करा है. तिनोंने तो प्रतिमोद्वहनविधिकोही श्रुतसामायिक कथन करा है. ॥ माला भी कितनेक कौशेय पट्टसुत्रमयी (रेशमी) स्वर्ण, पुष्प, मोति, माणिक्य गर्भित, आरोपते हैं. और कितनेक श्वेत पुष्पमयी आरोपते हैं. तिसमें तो, अपनी संपत्तिही प्रमाण है.

॥ इति श्रुतसामायिक विधिः ॥

॥ अथ श्रावक दिन चर्या ॥

दो मुहुर्त्त शेष रात्रि रहे श्रावक सूता उठे, मल मूत्रकी शंका दूर करे, और शुचि होकर पवित्र आसनऊपर स्थित हुआ यथाविधिसें परमेष्टि महामंत्रका जाप करे. पीछे कुल, धर्म, व्रत, श्रद्धाका, विचार करके, और स्तोत्रपाठसंयुक्त चैत्यवंदन करके, अपने घरमें, वा पौषधशालादि में स्थित होकर, प्रतिक्रमणादि करे. । पीछे प्रत्युष कालमें अपने घरमें स्नान करके, शुचि होके, शुचि वस्त्र पहिरके, संसारिक सुख, और मोक्ष देनेवाले, अरिहंतकी पूजा करे. । तिसवास्ते जिनार्चनविधि, अर्हत्कल्पके कथनानुसारें कहते हैं ॥

॥ अर्हत् कल्पोक्त जिनपूजा विधि ॥

श्राद्ध प्राप्तगुरुउपदेश, जिनघरमें, वा वडे मंदिरमें, शिखा बांधी, शुचि वस्त्र पहरि, उत्तरासंग

करी, स्ववर्णानुसार जिनोपवीत उत्तरीय उत्तरासंग धारी, मुखकोश बांधी, एकाग्रचित्त, एकांतमें जिन पूजन, करे. । प्रथम जल, पत्र, पुष्प, अक्षत, फल, धूप, अग्नि, दीपक, गंधादिकोंको निःपापता करे. ॥

॥ जलादिकोकी शुद्धीके मंत्र ॥

"॥ ॐ आपोऽप्काया एकेंद्रिया जीवा निरवद्यार्हत्पूजायां निर्व्यथाः संतु, निरपायाः संतु, सद्गतयः संतु, न मेस्तु संघट्टनहिंसापापमर्हदर्चने ॥" इति जलाभिमंत्रणम् ॥

"॥ ॐ वनस्पतयो, वनस्पतिकाया जीवा, एकेंद्रिया, निरवद्यार्हत्पूजायां, निर्व्यथाः संतु, निरपाया. संतु, सद्गतयः संतु, न मेस्तु संघट्टनहिंसापापमर्हदर्चने ॥" इतिपत्रपुष्पफलधूपचदनाद्यभिमंत्रणम् ॥

"॥ ॐ अग्नयोऽग्निकायाजीवा, एकेंद्रिया, निरवद्यार्हत्पूजायां निर्व्यथाःसंतु, निरपाया संतु, सद्गतय. सतु, नमेस्तु संघट्टनहिंसा पापमर्हदर्चने ॥" इति वन्हिदीपाद्यभिमंत्रणम्॥सर्वका अभिमंत्रण वासक्षेपसें तीनवार करना ॥ पीछे । पुष्पगंधादि हाथमें लेके ॥

"॥ ॐ त्रसरूपोहं, संसारिजीव., सुवासन., सुमेध एकचित्तो, निरवद्यार्हदर्चने निर्व्यथो भूयासं, नि.पापो भुयासं, निरुपद्रवो भुयासं, मत्सं श्रिता अन्येपि संसारिजीवा निरवद्यार्हदर्चने निर्व्यथा भूयासुः, नि.पापाभूयासुः ॥"

ऐसें कहके अपने आपको तिलक करना, पुष्पादिकरके अपना शिर अर्चन करना. ॥ फिर पुष्प अक्षतादि हाथमें लेके ॥

" ॐ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतित्रसकाया एकद्वित्रिचतुः पंचेंद्रियास्तिर्यङ्मनुष्यनारकदेवगतिगताश्चतुर्द्दशरज्ज्वात्मकलोकाकाशनिवासिनः इह जिनार्चने, कृतानुमोदना; संतु, निःपापाः संतु, निरपायाः संतु, सुखिनः संतु प्राप्तकामाः संतु, मुक्ताः संतु, बोधमाप्नुवंतुः ॥ "

ऐसें पढके दशों दिशाओंमें गंध, जल, अक्षतादि क्षेप करना. पीछे ।

शिवमस्तु सर्वजगतः, परहितनिरता भवंतु भूतगणाः॥
दोषा प्रयांतु नाशं, सर्वत्र सुखीभवंतु लोकाः ॥ १ ॥
सर्वेंपि संतु सुखिनः, सर्वे संतु निरामंयाः ॥
सर्वे भद्राणि पश्यंतु, मा कश्चिद्दुःखभाग् भवेत् ॥२॥

यह आर्या और अनुष्टुप् छंद पढने. ॥ पीछे ॥

" ॐ भूतधात्री पवित्रास्तु अधिवासितास्तु सुप्रोषितास्तु ॥ " ऐसें पढके प्रथम लीपी हुई भूमिमें जलसें सेचन करे. ॥ पीछें ॥

" ॐ स्थिराय शाश्वताय निश्चलाय पीठाय नमः॥ "

ऐसें पढके धोयके चंदनसें लेपन करके स्वस्तिकसें अंकित ऐसा पूजापट्ट (स्थालादि) स्थापन करे, और चैत्यमें तो स्थिरबिंब होनेसें इन दोनों

मंत्रोंसें नूमिजलपट्टादि अधिवासन करने. पीछे. ॥

"॥ ॐ अत्र क्षेत्रे, अत्र काले, नामार्हतो, रूपार्हतो, द्रव्यार्हतो, नावार्हतः समागताः, सुस्थिता., सुनिष्ठिताः, सुप्रतिष्ठिताः संतु ॥"

ऐसें पढके अर्हत् प्रतिमाको स्थापन करे निश्चलबिंबके हुए, चरण अधिवासन करे ॥ पीछे अंजलि में पुष्प लेके ॥

"॥ ॐ नमोर्हद्भ्यः सिद्धेन्यस्तीर्थेन्यस्तारकेन्यो बुद्धेन्यो बोधकेन्यः सर्वजंतुहितेन्यः इह कल्पन बिंबे नगवंतोर्हतः सुप्रतिष्ठिता. संतु ॥"

ऐसें मौन करके कहके नगवत्के चरणोपरि पुष्प स्थापन करे । फिर नी जलाद्य फलोसें पूजापूर्वक कहे ॥ यथा ॥

"॥ स्वागतमस्तु सुस्थितमस्तु सुप्रतिष्ठास्तु ॥"
पीछे फिर पुष्पानिषेक करके ॥

"॥ अर्घ्यमस्तु, पाद्यमस्तु आचमनीय मस्तु, सर्वोपचारे पूजास्तु ॥" इन वचनोंकरके वारवार जिनप्रतिमाके ऊपर जलाद्य पुष्पारोपण करे ॥ पीछे जल लेके ।

ॐ अर्हं वं । जीवनं तर्पणं हृद्यं, प्राणदं मलनाशनं ॥
जलं जिनार्चनेत्रैव, जायतां सुखहेतवे ॥ १ ॥

यह मंत्र पढके जलसें प्रतिमाको अनिषेक करे

पीछे चंदन कुंकुम कर्पूर कस्तूरी आदि सुगंध हाथमें लेके ॥

ॐ अर्हं लं। इदं गंधं महामोदं, बृहणं प्रीणनं सदा ॥ जिनार्चने च सत्कर्म्म, संसिद्ध्यै जायतां मम ॥ १ ॥

यह मंत्र पढके विविध गंध जिनप्रतिमाको विलेपन करे. ॥ पीछे पुष्पपत्रादि हाथमें लेके ॥

ॐ अर्हं ङं। नानावर्णं महामोदं, सर्वत्रिदशवल्लभं जिनार्चनेत्र संसिद्ध्यै, पुष्पं भवतु मे सदा ॥ १ ॥

यह मंत्र पढके जिनप्रतिमाके ऊपर सुगंधमय विविध वर्णके पुष्प चढावे. ॥

ॐ अर्हं तं। प्रीणनं निर्मलं बल्यं, मांगल्यं सर्वसिद्धिदं॥ जीवनं कार्यसंसिद्ध्यै, भूयान्मे जिनपूजने ॥ १ ॥

यह मंत्र पढके जिनप्रतिमाके ऊपर अक्षत आरोपण करे. ॥ सुपारी प्रमुख फल हाथमें लेके

जायफलं स्वर्गफलं, पुण्यमोक्षफलं फलं ॥ दद्याज्जिनार्च्चनेत्रैव, जिनपादाग्रसंस्थितम् ॥ १ ॥

यह मंत्र पढके जिनपादाग्रे फल ढोवे. ॥ पीछे धूप लेके ॥

ॐ अर्हं रं। श्रीखंडागरुकस्तूरी, द्रुमनिर्याससंभवः ॥ प्रीणनः सर्व देवानां, धूपोस्तु जिनपूजने ॥ १ ॥

यह पढके अग्निमें धूपक्षेप करे. ॥ पीछे फूल लेके।

"॥ ॐ अर्हं भगवद्भ्योर्हद्भ्यो जलगंधपुष्पाक्षत फलधूपदीपैः संप्रदानमस्तु ॐ पुण्याहं प्रीयंतां भग

वंतोर्हतस्त्रिलोकस्थिताः नामाकृतिद्रव्यभावयुताःस्वा हा ॥ ' यह पढके फिर जिनपूजन करे ॥ पीछे वासक्षेप लेके ॥

" ॥ ॐ सूर्यसोमांगारकबुधगुरुशुक्रशनैश्चरराहुकेतु मुखाग्रहाः इह जिनपादाग्रे समायांतु पूजां प्रतीछं तु ॥ " ऐसें पढके जिनपादसें नीचे स्थापित ग्रहोंके ऊपर, वा स्नानपट्टके ऊपर वासक्षेप करे. ॥ पीछे ॥

" ॥ आचमनमस्तु गंधमस्तु पुष्पमस्तु अक्षत मस्तु फलमस्तु धुपोस्तु दीपोस्तु ॥ " ऐसें पढके क्रमसें जल, गंध, पुष्प, अक्षत, फल, धूप, दीपसें ग्रहोंका पूजन करे ॥ पीछे अंजलिमे फूल लेके ।

" ॥ ॐ सूर्यसोमांगारकबुधगुरुशुक्रशनैश्चरराहुके तुमुखाग्रहा. सुपूजिता' संतु, सानुग्रहा. संतुं, तुष्टिदा संतु, पुष्टिदा. संतु, मांगल्यदा. संतु, महोत्सवदा' संतु ॥ " ऐसें कहके ग्रहोके ऊपर पुष्पारोपण करे. ॥ फिर इसी रीतिकरके ।

" ॥ ॐ इन्द्राग्नियमनिर्ऋतिवरुणवायुकुबेरेशानना गब्रह्मणो लोकपाला' सविनायका. सक्षेत्रपालाः इह जिनपादाग्रे समागछंतु पुजा प्रतिछंतु ॥ " ऐसें कहके पूजापट्टो परि लोकपालोंको वासक्षेप करे. ॥ पीछे ॥

" ॥ आचामनमस्तु गधमस्तु पुष्पमस्तु अक्षत मस्तु फलमस्तु धुपोस्तु दीपोस्तु ॥ ' ऐसें पढके

क्रमसें जल, गंध, पुष्प, अक्षत, फल, धूप, दीपसें लोकपालोंका पूजन करे. ॥ पीछे अंजलिमें पुष्प लेके।

"॥ ॐ इंद्राग्नियमनिर्ऋतिवरुणवायुकुबेरेशाननाग ब्रह्मणो लोकपालाः सविनायकाः सक्षेत्रपालाः सुपूजिताः संतु, सानुग्रहाः संतु, तुष्टिदाः संतु, पुष्टिदाः संतु, मांगल्यदाः संतु, महोत्सवदाः संतु ॥" यह पढके लोकपालोपरि पुष्पारोहण करे. ॥ पीछे पुष्पांजलि लेके ॥

"॥ अस्मत्पूर्वजा गोत्रसंभवा देवगतिगताः सुपूजिताः संतु, सानुग्रहाः संतु, तुष्टिदाः संतु, पुष्टिदाः संतु, मांगल्यदाः संतु, महोत्सवदाः संतु ॥" ऐसें कहके जिनपादाग्रे पुष्पांजलिक्षेप करे. ॥ पीछे फिर भी पुष्पांजलि लेके ॥

"॥ ॐ अर्हं अर्हद्भक्ताष्टनवत्युत्तरशतदेवजातयः सदेव्यःपूजां प्रतिछंतु सुपूजिताः संतु, सानुग्रहाः संतु तुष्टिदाः संतु, पुष्टिदाः संतु, मांगल्यदाः संतु, महोत्सवदाः संतु ॥" ऐसें कहके जिनपादाग्रे अंजलिक्षेप करे. ॥

पीछे अंजलिके अग्रभागमें पुष्प धारण करके अर्हन्मंत्र स्मरण करके तिस फूलसें जिनप्रतिमाको पूजे ॥ अर्हन्मंत्रो यथा ॥

"॥ ॐ अर्हं नमो अरहंताणं, ॐ अर्हं नमो सयं संबुद्धाणं, ॐ अर्हं नमो पारगयाणं ॥"

यह त्रिपद मंत्र श्रीमत् अर्हन् जगवंतोंके आगे नित्य स्मरण करे कैसा हे मंत्र ? देवलोकादि सुख और मोक्षका, देनेवाला, सर्व पापोंका नाश करने वाला हे । विशेष इतना है कि, यह मंत्र अपवित्र पुरुषोंने, उपयोगरहित पुरुषोंने, नही स्मरण करना. तथा उच्चशब्दसें नही स्मरण करना, नास्तिकोंको और मिथ्यादृष्टियोंको नही सुनाना. । यह पूर्वोक्त अर्हन्मंत्र एकसौआठ (१०८) वार, वा तदर्द्ध ५४ वार जपना ॥ पीछे दो पात्रोमे नैवेद्य धरे पीछे एक पात्रमे जल लेके ।

' ॐ अर्हं । नानापड्रससपूर्णं, नैवेद्यं सर्वमुत्तमं।
जिनाग्रे ढौकितं सर्व, संपदे मम जायतां ॥ १ ॥

यह पढके जलढोकना ॥ फिर दूसरा जल लेके।

"॥ ॐ सर्वेगणेशक्षेत्रपालाद्याः सर्वेग्रहाः सर्वे दिक्पालाः सर्वेऽस्मत्पूर्वजोद्भवादेवाः सर्वे अष्टनवत्युत्तरशतं देवजातय· सदेव्योऽर्हद्भक्ता. अनेन नैवेद्येन संतर्पिता· संतु, सानुग्रहा· संतु, तुष्टिदा· संतु, पुष्टिदा· संतु, मांगल्यदाः संतु, महोत्सवदा. संतु ॥ "

ऐसे कहके दूसरे नैवद्यके पास जल ढोकन करे ॥

यो जन्मकाले पुरुपोत्तमस्य, सुमेरुश्रृंगे कृतमज्जनैश्च ॥
देवै प्रदत्त·कुसुमाजलिस्स,ददातुसर्वाणिसमीहितानि
राज्याभिपेकसमये त्रिदशाधिपेन ।
छत्रध्वजांक तलयो· पदयोर्जिनस्य ॥

क्षिप्तोतिभक्तिभरतः कुसुमांजलिर्यः ।
स प्रीणयत्वनुदिनं सुधियां मनांसि ॥ २ ॥
देवेंद्रैः कृतकेवले जिनपतौ सानंदभक्त्यागतैः ।
संदेहव्यपरोपणक्रमशुभव्याख्यानबुद्ध्याशयैः ॥
आमोदान्वितपारिजातकुसुमैर्यः स्वामिपादाग्रतो ।
मुक्तस्स प्रतनोतु चिन्मयहृदां भद्राणि पुष्पांजलिः॥३।

इन तीनों वृत्तोंकरके तीन वार पुष्पांजलि क्षेप करे.॥

लावण्यपुण्यांगभृतोर्हतोय,स्तद्वृष्टिभावं सहसैव धत्ते।
सविश्वभर्तुर्लवणावतारो, गर्भावतारं सुधियां विहंतु॥१।
लावण्यैकनिधेर्विश्व, भर्तुस्तद्वृद्धिहेतुकृत् ॥
लवणोत्तारणं कुर्या, भवसागरतारणम् ॥ २ ॥

इन दो वृत्तोंकरके दो वार लवण उत्तारना. ॥

साक्षारतां सदासक्तां, निहंतुमिव सोद्यमः ॥
लवणाब्धिर्लवणांबु, मिषात्ते सेवते पदौ ॥१॥

यह पढके लवणमिश्र जल उत्तारना. ॥

भुवनजनपवित्रिताप्रमोदप्रणयनजीवनकारणं गरीयः॥ जलमविकलमस्तु तीर्थनाथक्रमसंस्पर्शिसुखावहं जनानाम् ॥ १ ॥

यह पढके केवल जलक्षेप करे. ॥

सप्तभीतिविघातार्हं सप्तव्यसननाशकृत् ॥
यत् सप्तनरकद्वारसप्तारिरितुलां गतम् ॥ १ ॥
सप्तांगराज्यफलदानकृतप्रमोदं ।
सत्सप्ततत्त्वविदनंतकृतप्रबोधम् ॥

तच्चकहस्तधृतसंगतसप्तदीप, ।
मारात्रिकं भवतु सप्तमसद्गुणाय ॥ २ ॥
यह पढके आरात्रिकावतारण करे ॥
विश्वत्रयभवैर्जीवैः, सदेवासुरमानवैः ॥
चिन्मंगलं श्रीजिनेंद्रात्, प्रार्थनीयं दिने दिने ॥ १ ॥
यन्मंगलं भगवत. प्रथमार्हतः श्री,
संयोजनैः प्रतिबभूव विवाहकाले ॥
सर्वासुरासुरवधूमुखगीयमानं ।
सर्वर्षिभिश्च सुमनोभिरुदीर्यमाणम् ॥ २ ॥
दास्यंगतेपु सकलेपु सुरासुरेपु ।
राज्येर्हतः प्रथमसृष्टिकृतो यदासीत् ॥
सन्मंगलं मिथुनपाणिगतीर्थवारि ।
पादाभिषेक विधिनात्युपचीयमानम् ॥ ३ ॥
यद्विश्वाधिपतेः समस्ततनुभृत्संसारनिस्तारणे ।
तीर्थे पुष्टिमुपेयुपि प्रतिदिनं वृधिं गतं मंगलम् ॥
तत् संप्रत्युपनीतपूजनविधौ विश्वात्मनामर्हतां ।
भूयान्मंगलमक्षय च जगते स्वस्त्यस्तु सघाय च ॥४॥
इन चारों वृत्तोंकरके मंगल प्रदीप करे । पीछे शक्रस्तव पढे ॥ इति कल्पोक्त जिनपूजन विधि

॥ अथ स्नात्र विधि ॥

अथ अतिशय अर्हद्भक्तिवाला श्रावक, नित्य, वा पर्वदिनमे, वा कीसी कार्यातरमें, जिनस्नात्र करनेकी इछा करे, तिसका विधि यह है ।

प्रथम स्नात्रपीठके ऊपर, दिक्पालग्रह अन्य देवतपूजन वर्जके, पूर्वोक्त प्रकारकरके जिनप्रतिमा को पूजके, मंगलदीप वर्जित आरात्रिक करके, पूर्वोपचारयुक्त श्रावक, गुरुसमक्ष संघके मिले हुए, चार प्रकारके गीतवाद्यादि उत्सवके हुए पुष्पांजलि हाथमें लेके।

"॥ नमो अरहंताणं नमोर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यः ॥" यह पढके दो छंद पढे. ।

कल्याणं कुलवृद्धिकारि कुशलं श्लाघार्हमत्यद्भुतं ।
सर्वाघप्रतिघातनं गुणगणालंकारविभ्राजितम् ॥
कांतिश्रीपरिरंजणं प्रतिनिधिप्रख्यं जयत्यर्हतां ।
ध्यानं दानवमानवैर्विरचितं सर्वार्थसंसिद्धये ॥ १ ॥

भुवनभविकपापध्वांतदीपायमानं ।
परमतपरिघातप्रत्यनीकायमानम्
धृतिकुवलयनेत्रावश्यमंत्रायमानं ।
जयति जिनपतीनां धाममत्युत्तमानाम् ॥ २ ॥

यह पढके पुष्पांजलिक्षेपण करे. ॥ इतिपुष्पांजलिक्षेपः ॥

कर्प्पूरसिल्हाधिककाकतुरू,कस्तुरिकाचंदनवंदनीयः॥
धूपो जिनाधीश्वरपूजनेऽत्र, सर्वाणि पापानि दहत्वजस्रम् ॥ १ ॥

यह पढके सर्वपुष्पांजलियोंके बीचमें धूपोत्

क्षेप करे ॥ और शक्रस्तव पढे. ॥ पीछे जलपूर्ण कलश लेके, दो श्लोक पढे. ॥

केवली जगवानेक', स्नाह्राद्दी मंकनैर्विना ॥
विनापि परिवारेण, वंदितः प्रजुतोञ्जितः ॥ १ ॥
तस्येशितुः प्रतिनिधि' सहजश्रियाढ्यः ।
पुष्पैर्विनापि हि विना वसनप्रतानैः ॥
गंधैर्विना मणिमयाजरणैर्विनापि ।
लोकोत्तरं किमपि दृष्टिसुखं ददाति ॥ २ ॥

यह पढके प्रतिमाको कलशाजिपेक करे ॥ इति प्रतिमायाः कलशाजिपेकः ॥ पुष्प अलंकारादि उत्तारके, कलशाजिपेक करके, पीछे फिर पुष्पांजलि लेके, दो काव्य पढे ।

विश्वानंदकरी जवांबुधितरी सर्वापदां कर्तरी ।
मोक्षाध्वैकविलंघनाय विमला विद्या परा खेचरी ॥
दृष्टया जावितकल्मपापनयने बद्धाप्रतिज्ञा दृढा ।
रम्यार्हत्प्रतिमा तनोतु जविनां सर्वं मनोवांछितम्॥१॥
परमतररमासमागमोत्थप्रसृमरहर्षविजासिसन्निकर्षा
जयति जगति जिनेशस्य दीप्ति. प्रतिमा कामितदायिनी जनानाम् ॥ २ ॥

यह पढके फिर पुष्पांजलिक्षेप करे पीछे पूर्वोक्त 'कर्पूरसिद्धा' वृत्तकरके धूपोत्क्षेप करे, और शक्रस्तव पढे. । पीछे फिर पुष्पांजलि हाथमे लेके, दो काव्य पढे ॥ यथा ॥

न दुःखमतिमात्रकं न विपदां परिस्फूर्जितं ।
न चापि यशसां क्षितिर्न विषमा नृणां दुस्थता ॥
न चापि गुणहीनता न परमप्रमोद क्षयो ।
जिनार्च्चनकृतां भवे भवति चैव निःसंशयम् ॥ १ ॥
एतत्कृत्यं परमसमानंदसंपन्निदानं ।
पातालोकः सुरनरहितं साधुभिः प्रार्थनीयम् ॥
सर्वारंभापचयकरणं श्रेयकां सं निधानं ।
साध्यं सर्वैर्विमलमनसा पूजनं विश्वभर्तुः ॥ २ ॥

यह पढके फिर पुष्पांजलिक्षेप करे. । पीछे धूप हाथमें लेके पढे. ।

कर्प्पूरागरुसिल्हचंदनबलामांसीशशैलेयक ।
श्रीवासद्रुमधूपरालघुसृणैरत्यंतमामोदितः ॥
व्योमस्थप्रसरच्छशांककिरणज्योतिःप्रतिछादको ।
धूपोत् क्षेपकृतो जगत्रयगुरोस्सौभाग्यमुत्तंसतु ॥ १ ॥
सिद्धाचार्यप्रभृतीन्, पंच गुरून् सर्वदेवगणमधिकम् ॥
क्षेत्रे काले धूपः प्रीणयतु जिनार्च्चने रचितः ॥ २ ॥

यह पढके धूपोत्क्षेप करे. । शक्रस्तव पढे. ॥ पीछे फिर पुष्पांजलि लेके ॥

जन्मन्यनंतसुखदे भुवनेश्वरस्य ।
सुत्रामभिः कनकशैलशिरःशिलायाम् ॥
स्नात्रं व्यधायि विविधांबुधिकूपवापी ।
कासारपल्वलसरित्सलिलैः सुगंधैः ॥ १ ॥

तां बुद्धिमाधाय हृदीहकाले, स्नात्रं जिनेंद्रप्रतिमागणस्य ॥ कुर्वंति लोकाः शुभभावभाजो, महाजनो येन गतः स पंथाः ॥ १ ॥ यह पढके पुष्पांजलिक्षेप करे ॥ १ ॥

परिमलगुणसारसद्गुणाढ्या, बहुसंसक्तपरिस्फुरद्द्विरेफा ॥ बहुविधबहुवर्णपुष्पमाला, वपुषि जिनस्य भवत्वमोघयोगा ॥ १ ॥

यहवृत्त पढके पगोंसें लेके मस्तकपर्यंत जिनप्रतिमाको पुष्पारोपण करे। पीछे 'कर्पूरसिद्दाधि०' इसकरके धूपोत्क्षेप करे. । पीछे शक्रस्तव पढे. । पीछे फिर पुष्पांजलि हाथमें लेके ।

साम्राज्यस्य पदोन्मुखे भगवति स्वर्गाधिपैर्गुंफितो । मंत्रित्वं बलनाथतामधिकृतिं स्वर्णस्य कोशस्य च ॥ बिभ्रद्भिः कुसुमांजलिर्विनिहितो भक्त्या प्रभोः पादयोर्दुःखौघस्य जलांजलि सतनुतादालोकनादेव हि॥१॥ चेतः समाधातुमनिंद्रियार्थं, पुण्यं विधातुं गणनाद्यतीतम् ॥ निक्षिप्यतेर्हत्प्रतिमापदाग्रे, पुष्पांजलिः प्रोज्ञतभक्तिभावैः ॥ २ ॥

यह पढके पुष्पांजलिक्षेप करे । सर्व पुष्पांजलियोके अंतमें धूपोत्क्षेप, और शक्रस्तवपाठ अवश्य करना ॥ तदनंतर पुष्पादिकरके प्रतिमा पूजे. । पीछे मणि, स्वर्ण, ताम्र, मिश्रधातु. माटीमय, कलशे स्नात्रकी चौकीऊपरि स्थापन करना. तिनमें गंगो

दकमिश्रित सर्व जलाशयोंके पानी स्थापन करे. चंदन केसर कर्पूरादि सुगंधी द्रव्य करके वासित करे. चंदनादि और पुष्पमालासें, कलशोंको पूजे. जल पुष्पादिअभिमंत्रणकेमंत्र पूर्वे कहे हैं सो जानने.। पीछे एक श्रावक, अथवा बहुत श्रावक, पूर्वोक्त वेष शौचवाले गंधसें हस्तको लेपन करके, मालाभूषित कंठवाले तिन कलशोंको हाथऊपरि रखके पीछे स्वस्वबुद्धिअनुसारसें जिनजन्माभिषेकचिन्हित स्तोत्रों को जिनस्तुतिगर्भित षट्पदादि (छप्पयआदि) को पढे । पीछे शार्दूलवृत्त पढे ।

जाते जन्मनि सर्वविष्टपपतेरिंद्रादयो निर्जरा ।
नीत्वा तं करसंपुटेन बहुभिः सार्द्धं विशिष्टोत्सवैः ॥
शृंगे मेरुमहीधरस्य मिलिते सानंददेवीगणे ।
स्नात्रारंभमुपानयंति बहुधा कुंभांबुगंधादिकम् ॥ १ ॥
योजनमुखान् रजतनिष्कमयान् मिश्रधातुमृद्रचितान्
दधते कलशान् संख्या तेषां युगषट्खदंतिमिता ॥ २ ॥
वापीकूपह्रदांबुधितडागपल्वलनदनिर्झरादिभ्यः ॥
आनीतैर्विमलजलैः स्नानाधिकं पूरयंति च ते ॥ ३ ॥
कस्तूरीघनसारकुंकुममुराश्रीखंडकंक्कोल्लकै ।
र्ह्रीबेरादिसुगंधवस्तुभिरलंकुर्वंति तत्संवरम् ॥
देवेंद्रा वरपारिजातबकुलश्रीपुष्पजातीजपा ।
मालाभिः कलशाननानि दधते संप्राप्तहारस्रजः ॥ ४ ॥
ईशानाधिपतेर्निजांककुहरे संस्थापितं स्वामिनं ।

सौधर्माधिपतिर्म्मिताकृतचतुःप्रांशुंकुशृंगोन्नतैः ॥
धारावारिभरैःशशांकविमलैः सिंचत्यनन्याशयः ।
शेषाश्चैव सुराप्सरस्समुदयाः कुर्वंतिकौतूहलम् ॥ ५ ॥

वीणांमृदंगतिमिलाझ्ङकटाऊनूर ।
ढक्कहुडुक्कपणवस्फुटकाहलाभिः ॥
सढेणुझर्झरकडुंडुभिपुपुणीभि-
र्वाद्यैः सृजंति सकलाप्सरसो विनोदनू ॥ ६ ॥

शेषाः सुरेश्वरास्तत्र, गृहीत्वा करसंपुटे ॥
कलशांस्त्रिजगन्नाथं, स्नपयंति महामुदः ॥ ७ ॥

तस्मिंस्तादृशउत्सवे वयमपि स्वर्लोकसंवासिनो ।
भ्रांता जन्मविवर्त्तनेन विहितश्रीतीर्थसेवाधियः ॥
जातास्तेन विशुद्धबोधमधुना संप्राप्य तत्पूजनं ।
स्मृत्वैतत्करवाम विष्टपविभोः स्नात्र मुदामास्पदम्॥८॥

वालत्तणम्मि सामिश्र, सुमेरुसिहरम्मि कणयकल सेहिं ॥ तियसासुरेहिं एहविश्रो, ते धन्ना जेहिं दिठोसि ॥ ए ॥

यह पढके कलशोंकरके जिनप्रतिमाको अभि षेक करे । पीछे वडे छोटेके क्रमकरके सर्व पुरुष स्त्रि भी गंधोदकोंसें स्नात्र करे. । पीछे अभिषेकके अंतमें गधोदकपूर्ण कलश लेके वसततिलकावृत्त पढे. ।

संघे चतुर्विध इह प्रतिभासमाने, श्रीतीर्थपूजनकृत प्रतिभासमाने ॥ गंधोदकैः पुनरपि प्रभवत्वजस्त्र, स्नात्रं जगत्रयगुरोरतिपूतधारैः ॥ १ ॥

यह पढके जिनपादोपरि कलशाभिषेक करके स्नात्रनिवृत्ति करे पीछे पुष्पांजलि लेके पढे।

इंद्राग्नि यम निर्ऋते जलेश वायो
वित्तेशेश्वर भुजगा विरंचिनाथ ॥
संघट्टाधिकतमभक्तिभारभाजः
स्नात्रोस्मिन् भुवनविभोः श्रीयं कुरुध्वम् ॥ १ ॥

यह पढके स्नात्रपीठके पास रहे कल्पित दिक्पालपीठऊपरि, पुष्पांजलिक्षेप करे. । पीछे प्रत्येक दिशामें यथाक्रमकरके दिकपालोंको स्थापन करे. ।

पीछे एकैक दिक्पालका पूजन करे।
सुराधीश श्रीमन् सुदृढतरसम्यक्त्ववसते ।
शचीकांतोपातस्थितविबुधकोट्यानतपद ॥
ज्वलद्वज्राघातक्षपितदनुजाधीशकटक ।
प्रभोः स्नात्रे विघ्नं हर हर हरे पुण्यजयिनाम् ॥ १ ॥

"ॐ शक्र इह जिनस्नात्रमहोत्सवे आगच्छ २ । इदं जलं गृहाण २ । गंधं गृहाण २ । पुष्पं गृहाण २। धूपं गृहाण २ । दिपं गृहण २ । नैवेद्यं गृहाण २ । विघ्नं हर २ । डुरितं हर २ । शांतिं कुरु २ । तुष्टिं कुरु २ । पुष्टिं कुरु २ । ऋद्धिं कुरु २ । वृद्धिं कुरु २ । स्वाहा ॥" इति पुष्पगंधादिभिरिंद्रपूजनम् ॥ १ ॥
बहिरंतरनंततेजसा विदधत्कारणकार्यसंगतिः ॥
जिनपूजनआशुशुक्षणे, करु विघ्नप्रतिघातमंजसा॥१॥

"॥ ॐ अग्ने इह० शेषं पूर्ववत् ॥ ' इत्यग्निपूजनम् ॥ २ ॥

दीप्तांजनप्रजतनो तनुसंनिकर्षे ।
वाहारिवाहनसमुकुरदंडपाणे ॥
सर्वत्र तुल्यकरणीयकरस्थधर्मे ॥
कीनाश नाशय विपद्विसरं क्षणेत्र ॥ १ ॥

"ॐ यम इह० शेष पूर्ववत् ॥" इति यमपूजनम् ॥ ३ ॥

राक्षसगणपरिवेष्टितचेष्टितमात्रप्रकाशहतशत्रो ॥
स्नात्रोत्सवेत्र निर्ऋते, नाशय सर्वाणि दुःखनि ॥ १ ॥

"॥ ॐ निर्ऋते इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति नैर्ऋतपूजनम् ॥ ४ ॥

कल्लोलानीतलोलाधिककिरणगणस्फीतरत्नप्रपंच ।
प्रोद्भूतौर्वाग्निशोचं वरमकरमहापृष्ठदेशोक्तमानम् ॥
चंचच्चीरिल्लिशृंगिप्रभृतिझषगणैरंचितं वारुणं नो ।
वर्ष्मैछिंद्यादपायं त्रिजगदधिपतेः स्नात्रसत्रे पवित्रे॥१॥

"॥ ॐ वरुण इह० शेष पूर्ववत् ॥" इति वरुणपूजनम् ॥ ५ ॥

ध्वजपटकृतकीर्त्तिस्फूर्त्तिदीप्यद्विमान ।
प्रसृमरबहुवेगत्यक्तसर्वोपमान ॥
इह जिनपतिपूजासंनिधौ मातरिश्व–
न्नपनयसमुदायं मध्यवाद्यातपानाम् ॥ १ ॥

"॥ ॐ वायो इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति वायु पूजनम् ॥ ६ ॥

कैलासवास विलसत्कमलाविलास ।
संशुरूहासकृतदौस्थ्यकथानिरास ॥
श्रीमत्कुबेरजगत्स्नपनेत्र सर्वं ।
विघ्नं विनाशय शुनाशय शीघ्रमेव ॥ १ ॥

"॥ ॐ कुबेर इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति कुबेर पूजनम् ॥ ७ ॥

गंगातरंगपरिखेलनकीर्णवारि, प्रोद्यत्कपर्दपरिमंकित पार्श्वदेशम् ॥ नित्यं जिनस्नपनहृष्टहृदः स्मरारे, विघ्नं निहंतु सकलस्यजगत्त्रयस्य ॥ १ ॥

"ॐ ईशान इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इतीशान पूजनम् ॥ ७ ॥

फणमणिमहसा विज्ञासमानाः । कृतयमुनाजलसं श्रयोपमानाः ॥ फणिन इह जिनाभिषेककाले । बलि भवनादमृतंसमानयंतु ॥ १ ॥

"ॐ नागा इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति नाग पूजनम् ॥ ९ ॥

विशदपुस्तकशस्तकरद्वयः। प्रथितवेदतया प्रमदप्रदः॥ जगवतः स्नपनावसरे चिरं । हरतु विघ्नजरं डुहिणो विज्रुः ॥ १ ॥

"॥ ॐ ब्रह्मन् इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति ब्रह्मणः पूजनम् ॥ १० ॥

ऐसें क्रमसें दिकपालपूजन करे। पीछे फिर ज्ञी हाथमें पुष्पांजलि लेकर आर्या पढे ॥

दिनकरहिमकरज्ञूसुत, शशिसुतवृहतीशकाव्यरवित नयाः ॥ राहो केतो क्षेत्रप, जिनार्च्चने ज्ञवत सन्नि हिताः ॥ १ ॥

यह पढके ग्रहपीठोपरि पुष्पांजलिक्षेप करे। पीछे पूर्वादिक्रमसें सूर्य, शुक्र, मंगल, राहु, शनि, चंद्र, बुध, वृहस्पति, इनको स्थापन करे हेठ केतु को, और उपर क्षेत्रपालकों स्थापन करे. पीछे प्रत्येक ग्रहकका पूजन करे।

विश्वप्रकाशकृतज्ञव्यशुज्ञावकाश।
ध्वांतप्रतानपरिपालनसद्विकाश॥
आदित्य नित्यमिह तीर्थकराज्ञिषेके।
कल्याणपल्लवनमाकलय प्रयत्नात् ॥ १ ॥

"॥ ॐ सूर्य इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति सूर्य पूजनम् ॥ १ ॥

स्फटिकधवलशुक्लध्यानविध्वस्तपाप।
प्रमुदितदितिपुत्रोपास्यपादारविंद ॥
त्रिभुवनजनशश्वज्ञालुजीवानुविद्य।
प्रथय ज्ञगवतोर्चां शुक्र हे वीतविघ्नाम् ॥ १ ॥

"॥ ॐ शुक्र इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति शुक्र पूजनम् ॥ २ ॥

प्रबलचलमिलितबहुकुशल, लालनाललितकलित

विघ्नहृते । जौमजिनस्नपनेऽस्मिन् विघटय विघ्नागमं सर्वम् ॥ १ ॥

"॥ ॐ मंगल इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति मंगलपूजनम् ॥ ३ ॥

अस्तांहः सिंहसंयुक्त, रथ विक्रममंदिर ॥
सिंहिकासुत पूजाया, मत्र संनिहितो नव ॥ १ ॥

"ॐ राहो इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति राहुपूजनम् ॥ ४ ॥

फलिनीदल लीलयांतः, स्थगितसमस्तवरिष्ठविघ्नजात । रवितनय प्रबोधमेतात् जिनपूजाकरणैकसावधानान् ॥ १ ॥

"ॐ शने इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति शनिपूजनम् ॥ ५ ॥

अमृतवृष्टिविनाशितसर्वदो, पचितविघ्नविषः शशलांछनः ॥ वितनुतात्तनुतामिह देहिनां, प्रसृततापजरस्य जिनार्चने ॥ १ ॥

"॥ ॐ चंद्र इह० शेषं पूर्ववत् ॥" चंद्रपूजनम् ॥ ६ ॥

बुधविबुधगणार्च्चितांघ्रियुग्म, प्रमथितदैत्य विनीतदुष्टशास्त्र ॥ जिनचरणसमीपगोधुनात्वं, रचय मतिं नवघातनप्रकृष्टाम् ॥ १ ॥

"॥ ॐ बुध इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति बुधपूजनम् ॥ ७ ॥

सुरपतिहृदयावतीर्णमंत्रप्रचुर, कलाविकलप्रकाश भास्वन् ॥ जिनपतिचरणाभिषेककाले, कुरु बृहती वर विघ्नविप्रणाशम् ॥ १ ॥

"॥ ॐ गुरो इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति गुरु पूजनम् ॥ ८ ॥

निजनिजोदययोगजगत्त्रयी, कुशलविस्तरकारणतां गत. ॥ भवतुकेतुरनश्वरसंपदां, सततहेतुरवारितविक्रमः ॥ १ ॥

"॥ ॐ केतो इह० शेषं पूर्ववत् ॥" इति केतु पूजनम् ॥ ९ ॥

कृष्णसितकपिलवर्ण, प्रकीर्णकोपासितांघ्रियुग्मसदा ॥ श्रीक्षेत्रपाल पालय, भविकजनं विघ्नहरणेन॥१॥

"॥ ॐ क्षेत्रपाल इह० शेषं पूर्ववत् ॥' इति क्षेत्रपालपूजनम् ॥ १० ॥

पीछे गध, पुष्प, अक्षत, धूप, दीपसे पूर्व कहे मंत्रोसेंही जिनप्रतिमाकी पूजा करे पीछे हाथमे वस्त्र लेके वसंततिलकावृत्तपाठ पढे ।

त्यक्त्वाखिलार्थवनितादिकभूरिराज्यं
नि.संगतामुपगतो जगतामधीश. ॥
भिक्षुर्भवन्नपि स वर्ष्मणि देवदूष्य-
मेकं दधाति वचनेन सुरेश्वराणाम् ॥ १ ॥

यह पढके वस्त्र चढावे इति वस्त्रपूजा ॥

पीछे नानाविध खाद्य, पेय, भक्ष्य, लेह्यसंयुक्त

नैवेद्य. दो स्थानमें करके तिनमेंसें एक पात्र जिनके आगे स्थापके, श्लोक पढे. ।

सर्वप्रधानसद्भूतं, देहिदेहिसुपुष्टिदम् ॥
अन्नं जिनाग्रे रचितं, दुःखं हरतु नः सदा ॥ १ ॥

यह पढके जलचुलुककरके जिनप्रतिमाको नैवेद्य देवे. पीछे दूसरे पात्रमें चुलुककरकेही, ग्रहदिक्पाला दिकोंको श्लोक पढके नैवेद्य देवे. ।

नोनो सर्वे ग्रहालोक, पालाः सम्यग्दृशः सुराः ।
नैवेद्यमेतद्गृह्णन्तु, नवंतो नयहारिणः ॥ १ ॥

स्नात्र करायाविना नी पूजामें जिनप्रतिमाको इसही मंत्रकरके नैवेद्य देना. ॥ पीछे आरात्रिक मंगलदीपक पूर्ववत् । और शक्रस्तव नी पढना. ॥ जिस प्रतिमाका स्थानस्थितहीका स्नपन कराया जावे, तिसके वास्ते सर्वकुछ तहांही करना. ॥

श्रीखंडकर्पूरकूरंगनाभि, प्रियंगुमांसीनखकाकतुंडैः ॥ जगत्त्रयस्याधिपतेः सपर्या, विधौ विदध्यात्कुशलानि धूपः ॥ १ ॥

इस वृत्तकरके सर्वपुष्पांजलियोंके बिचाले धूपोत्क्षेप करना, और शक्रस्तवपाठ पढना. ॥

प्रतिमा विसर्जनं यथा ॥

"॥ ॐ अर्हं नमो नगवतेर्हते समये पुनःपूजां प्रतीछ स्वाहा ॥' इति पुष्पन्यासेन प्रतिमाविसर्जनं ॥

"॥ ॐ ह्रः इंद्रादयोलोकपालाः सूर्यादयो ग्रहा

सद्दोत्रपालाः सर्वदेवाः सर्वदेव्यः पुनरागमनाय स्वा
हा ॥" इति पूज्यादिभिर्दिक्पाल ग्रहविसर्जनम् ॥
आज्ञाहीनं क्रियाहीनं, मंत्रहीनं च यत्कृतम् ॥
त्तसर्वं कृपया देवाः, क्षमंतु परमेश्वराः ॥ १ ॥
आव्हाहनं न जानामि, न जानामि विसर्जनम् ॥
पूजां चैव न जानामि त्वमेव शरणंमम ॥ २ ॥
कीर्त्तिः श्रियो राज्यपदं सुरत्वं, न प्रार्थये किंचन देव
देव ॥ मत्प्रार्थनीयं भगवत्प्रदेयं स्वदासतां मां नय
सर्वदापि ॥ ३ ॥

इति सर्वकरणीयांते जिनप्रतिमादेवादिविसर्जनविधि
अर्हत् अर्चनविधिमे भी ऐसेंही विसर्जन
जानना. ॥ इति लघुस्नात्रविधिः ॥

पीछे (गृहचैत्यपूजानंतर) बडे देवमंदिरमें जाक
र, शक्रस्तवादिस्तोत्रोंकरके जिनराजकी स्तवना कर
के, और जिनराजका पूजन करके, प्रत्याख्यान चिंत
वन करे । पीछे चैत्यको प्रदक्षिणा करके, पौषधशा
ला (उपाश्रय) में जाकर, देवकीतरें बडे आनंदसें
साधुर्उको वंदन करे. सुंदरबुद्धिवाला होकर, पूजा
सत्कार करे । पीछे एकाग्रचित्त होकर साधुके मुख
से धर्मदेशना श्रवण करे. पीछे मनमें धारा हुआ
प्रत्याख्यान करे. पीछे गुरुको नमस्कार करके कर्मा
दानको अच्छीतरें त्यागके, धन उपार्जन करे. यथा
योग्य स्थानमे व्यापार समाचरे कुत्सित बुरा कर्म

प्राणोंके नाश हुए भी न करे. । पीछे अपने घरदेह रामें अर्हत्की मध्यान्हपूजा करके, अन्नपानी समाचरे. भक्तिसें साधुओंको दान देके, अतिथीयोंकी पूजा आदरसत्कार करके, और दीन अनाथ मार्गणगणको संतोषके, अपने व्रतऔर कुलके उचित भोज्य वस्तुका भोजन करे. ॥ साधुको आमंत्रण ऐसें करे. ॥ क्षमाश्रमण पूर्वक गृहस्थ कहें ।

"॥ हे भगवन् फासुएणं एसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वथ्थकंबलपायपुछणपडिग्गहेणं ओसहभेसज्जेणं पाडिहेररूवेणं सिज्जासंथारएणं भयवं मम गेहे अणुग्गहो कायव्वो ॥"

भोजनानंतर गुरुके पास शास्त्रका विचार करे, पढे, सुने. । पीछे धन उपर्जन करके घरको जाकर संध्यापूजा करके सूर्यके अस्त होनेसें दो घडी पहिले, निजवांछित भोजन करे. सायंकालमें धर्मागारमें सामायिककरके षडावश्यक प्रतिक्रमण करे. पीछे अपने घरमें आके शांतबुद्धिवाला हुआ, जब एक पहर रात्रि जावे तब अर्हत्स्तवादिक पढके प्रायः ब्रह्मचर्यव्रतधारी होके सुखसें निद्रा लेवे. जब निद्राका अंत आवे तब परमेष्टिमंत्रस्मरणपूर्वक जिन, चक्री, आदिके चरित्रोंको चिंतन करे. और व्रतादिकोंके मनोरथ अपनी इछासें करे, ऐसें अहोरात्रिकी चर्या अप्रमत्त, होके समाचरता हुआ, और

यथावत् कहे व्रतमें रहा हुआ, गृहस्थ नी कल्याण नागी होता है. । इति व्रतारोपसंस्कारे गृहिणां दिनरात्रिचर्या ॥

वासनागुरुसामग्री, विनवो देहपाटवम् ॥
संघश्चतुर्विधो हर्षो, व्रतारोपे गवेष्यते ॥ १ ॥
वरकुसुमगंधअरकय, फलजलनेवज्जधूवदीवेहिं ॥
अठविहकम्ममहणी, जिणपूआ अठाहा होई ॥२॥

इति व्रतारोप संस्कार

॥ अथ अंत्य संस्कार विधिः ॥

श्रावक यथावत् व्रतोंकरके निज नवको पालके कालधर्मके प्राप्त हुए, उत्कृष्ट आराधना करे, तिस का विधि यह है । जिन अरिहंतोंके कल्याणक स्थानोंमें, निर्जीव शुचि पवित्र स्थण्डिल–जगामे, वा अरण्यमें, वा अपने घरमें, विधिसे अनशन करना. । तहां शुनस्थानमें ग्लानको पर्यंत आराधना करावनी । तथा अवश्यमेव अमुकवेला निकट मरण होवेगा ऐसें ज्ञानके हुए, तिथिवारनक्षत्रचंद्रबलादि न देखना । तहां संघका मीलना करना । गुरु, ग्लानको जैसें सम्यक्त्वारोपणमें तैसेंही नंदि करे । नवरं इतना विशेष है सर्व नंदि देववंदन कायोत्सर्गादि पूर्वोक्त विधि ‘ संलेहणा आराहणा ’ इस नाम करके करावणा. और वैयावृत्य कर कायोत्सर्गानंतर।

“ ॥ आराधना देवता आराधनार्थं करेमि काउ

स्सग्गं अन्नत्थऊससिएणं० जाव–अप्पाणं वोसिरामि ॥" कहके कायोत्सर्ग करना. कायोंत्सर्गमें चार लोगस्स चिंतवन करना, पारके आराधना स्तुति कहनी. ॥ सा यथा ॥

यस्याः सान्निध्यतो नव्या, वांछितार्थप्रसाधकाः श्रीमदाराधना देवी, विघ्नव्रातापहास्तु वः ॥ १ ॥ शेषं पूर्ववत् ॥

पीछे तिसही पूर्वोक्तविधिसें सम्यक्त्वदंमकका उच्चारण, द्वादशव्रतोंका उच्चारण करावणा. । वासक्षेपकायोत्सर्गादि नी, 'संलेखना आराधना' के आलापककरके तैसेंही जाणना. । प्रदक्षिणा करनी, ग्लानकी शक्तिके अनुसार होवे नी, और नही नी होंवे. । दंमकादिमें 'जावनियमंपज्जुवासामि' के स्थानमें 'जावज्जीवाए' ऐसें कहना. । पीछे सर्व जीवों केसाथ अपराधकी क्षामणा करनी । पीछे श्रावक परमेष्ठिमंत्रोच्चारपूर्वक गुरुके सन्मुख हाथ जोडके कहें

खामेमि सव्वजीवे सव्वे जीवा खमंतु मे ॥
मित्ती मे सव्वनूएसु वेरं मज्झ न केणइ ॥ १ ॥ गुरु कहें

"॥ खामेह जो खमइ तस्स अत्थी आराहणा जो न खमइ तस्स नत्थि आराहणा ॥" पीछे श्रावक क्षमाश्रमणपूर्वक कहें । "नयवं अणुजाणह ।" गुरु कहें "। अणुजाणामि ।" श्रावक परमेष्ठिमंत्र पाठपूर्वक कहें ।

"॥ जे मए अणंतेणं नवभ्रमणेणं पुढविकाइआ आउकाइआ तेउकाइआ वाउकाइआ वणस्सइकाइआ एगिंदिआ सुहमा वा, बायरा वा, पज्जत्ता वा, अपज्जत्ता वा, कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण पंचिंदिअट्टेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, घाइआ वा, पीडिआ वा, मणेणं वायाए काएण, तस्स मिच्छामि डुक्कडं ॥ जो मेरे जीवने अनंत भव भमते थके पृथिवी अप तेउ वायु वणस्पतीके एकेंद्रिय जीव, सुक्ष्महो बादरहो पर्याप्तेहो अपर्याप्तेहो क्रोधसें, मानसे, मायासें, लोभसें, पंचेंद्रियपणे, राग सें, द्वेषसें, घातित किएहों, पीडित किएहों, तिसका मन वचन काया करके मिच्छामि डुक्कड हो ॥" फिर परमेष्ठिमंत्र पढके।

"॥ जे मए अणंतेणं नवभ्रमणेणं बेइंदिआ वा सुहमा वा बायरा वा० शेष पूर्ववत् ॥" जो मेरे जीवनें अनंत भव भमते थके बेरिंद्रिय जीव, सुक्ष्म मबादर क्रोधादिकसें घातित पीडित कीए होय तिनका त्रिकोटी मि०" फिर परमेष्ठिमंत्र पढके।

"॥ जे मए अणंतेणं नवभ्रमणेणं तेइंदिया सुहमा वा, बायरा वा,० शेषं पूर्ववत् ॥" जो मेनें अनंत भव भमते थके तेंरिंद्रि जीव सुक्ष्म वा बादर क्रोधादिकसें घातित वा पीडित किए होय सो त्रिकोटी मि० ॥ फिर परमेष्ठिमंत्र पाठपूर्वक कहें

जे मए अणंत नवन्नमणेण चउरिंदिया जीवा, सुहमा वा वायरावा, शेषं पूर्ववत् । जो मेनें अनंत नव नमते थके चउरिंदिय जीव, क्रोधादिकसें, घातित पीमित किए होय तिनका त्रिकोटी मिछा मि डुक्क़ड हो. "॥ जे मए अणंतेणंनवन्नमणेणं पंचिंदिआ देवावा मणुआ वा, नेरइआ वा, तिर खजोणिआ वा, जलयरा वा, थवलयरा वा, खयरा वा, सन्निआ वा, असन्निआ वा, सुहमा वा, बायरा वा०शेषं पूर्ववत् ॥ जो मेनें अनंत नव नमते थके पंचेंद्रिय जीव, देव, मनुष्य, नारकी, तिर्यंच, जलच र थलचर, खेचर, संज्ञी,असंज्ञी, सुक्ष्म बादर, क्रोधा, दिकसें घातित पीमित किए होय सो त्रिकोटी मिथ्या डुष्कृत हो. ॥ फिर परमेष्ठिमंत्र पाठपूर्वक श्रावक कहे ।

"॥ जं मए अणंतेणं नवन्नमणेणं अलिअं नणि अं कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, पंचिंदिअटेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, मणेणं वायाए काएणं तस्स मिछामि डुक्कडं ॥ जो मेंने अनं त नव नमते थके असत्य नाषण कियाहो, क्रोधा दिक करकें सो त्रिकोटी मिथ्याडुष्कृतहो. ॥" फिर परमेष्ठिमंत्र पढके कहे ।

"॥ जं मए अणंतेणं नवन्नमणेणं अदिन्नं गहि अं कोहेण वा, माणेण वा० शेषं पूर्ववत् ॥ जो मेनें

अनंत नव नमते थके अदत्त ग्रहण कियाहो क्रोधा दि करके सो त्रिकोटीसें मिथ्याडुष्कृतहो ॥" फिर परमेष्ठिमंत्र पढके ।

"॥ जं मए अणंतेणं नवप्नमणेणं दिवं माणुस्सं तिरिछं मेहुणं सेविश्रं कोहेण वा माणेण वा० शेषं पूर्ववत् ॥ जो मैंने अनंत नव नमते थके देव संबंधी, मनुष्य संबंधी, तिर्यंच संबंधी, क्रोधादि कसें मैथुन सेवन किया हो सो त्रिकोटी मिथ्या डुष्कृतहो. ॥' फिर परमेष्ठिमंत्र पढके ।

"॥ जं मए अणंतेणं नवप्नमणेणं अठारस्स पावठाणाइं कयाइं कोहेण वा, माणेण वा,० शेष पूर्ववत् जो मेंनें अनंत नव नमते थके अठारह पापस्थानक सेवन किए हो. सो त्रिकोटी मिथ्याडु ष्कृत हो ॥ " फिर परमेष्ठिमंत्र पढके ।

"॥ ज मे पुढविकायगयस्स सिलालेठुसक्करास न्हावालुआगेरिअसुवन्नाइमहाधाउरूवं सरीरं पाणि वहे पाणिसंघट्टणे पाणिपीमणे पाववट्टणे मिछत्तपो सणे गणे संलग्ग तं निंदामि गरिहामि वोसिरामि॥" जो मेराजीव पृथवी कायगत होके शिला पत्थर कांक रे रेती वालुका मट्टी सुवर्णादि सप्त धातु रूप शरी र वान् होके, प्राणिवध, प्राणि संघात, प्राणि पीमन, पाप वर्धक, मिथ्यात्व पोपक स्थानमें लगा होय

तिनकों निंदताहुं गर्हा करताहुं और तिन पापोंकों त्याग करताहुं "

" ॥ जं मे पुढविकायगयस्स सिलालेढुसक्करासन्हा वालुआगेरिअसुवन्नाईमहाधाउरूवंसरीरं अरिहंत चेइएसु अरिहंतबिंबेसु धम्मट्ठाणेसु जंतुरक्कणठाणेसु धम्मो वगर णेसु संलग्गं तं अणुमोआमि कल्लाणेणं अभिनंदेमि ॥ जो मे पृथ्वीकायगत शिल्ला पथर कांकरे वालुकारेती माटी सुवर्णादि सप्तधातु रूप शरीर हो के अरिहंत चैत्यमें अरिहंत बिंबमें, धर्म स्थानमें, जीव रक्षण स्थानमें, धर्मोपकरणमें, लगा होवे तो तिनकों अनुमोद ताहुं कल्याण कारक जाणके आ नंदित होता हुं ॥" फिर परमेष्टिमंत्र पढके ।

" ॥ जं मे आउकायगयस्स जलकरगमहिआ ओस्साहिमहरतणुरूवं सरीरं पाणिवहे पाणिसंघ ट्टणे पाणिपीरूणे पाववड्ढणे मिछत्तपोसणे ठाणे संल ग्गं तं निंदामि गरिहामि वोसिरामि ॥ "

जो मे अपकायगत पानी करा हिम ठार औस हेम हर तनुरूप शरीर होके प्राणि वध, प्राणि संघा त, प्राणि पीरूक, पाप वर्धक, मिथ्यात्व पोषक स्थान में, लगा होवे तो तिनपापकों निंदा गर्हा करके त्यागताहुं '

" ॥ जं मे आउकायगयस्स जलकरगमहिआओ स्साहिमहरतणुरूवं सरीरं अरिहंतचेइएसु अरिहं

तविंबेसु धम्मठाणेसु जतुरक्कणठाणेसु धम्मोवगर णेसु जिणन्हाणेसु तन्हदाहावहरणेसु संलग्गं तं अणु मोआमि कल्लाणेणं अजिनंदेमि ॥ जो में उपरोक्त अप्काय होके अर्हत् चैत्यमे, अर्हत् विंबमे, धर्म स्थानमें, जीव रक्षाकाममें, धर्मोप करण कार्यमें, स्नात्राजिपे कमें, तृषादाह शमनमे, लगा होउ तो तिनको अनुमोदताहुं ॥ " फिर परमेष्ठिमंत्र पढके।

"॥ जं मे तेउकायगयस्स अगणिइंगालमम्मुर जालाअलायविज्जुउक्कातेअरूवं सरीरं पाणिवहे पाणि संघट्टणे पाणिपीडणे पाववट्टणे मिछत्तपोसणे ठाणे संसग्गं तं निंदामि गरिहामि वोसिरामि ॥ ' " जो में अग्नी कायगत अग्नि इंगाला मुर्मुर ज्वाला धूम्र सहित विद्युत् उल्का रूप शरीर होके प्राणिवधमे, प्राणि संघातनमे, प्राणि पीडनमे, पाप वर्द्धनमे, मिथ्यात्व पोषकके स्थानमें, लगा होउं तिनको, निंदा गर्हासें त्यागताहुं "

"॥ जं मे तेउकायगयस्स अगणिइंगालमम्मुर जाला अलायविज्जुउक्कातेअरूवं सरीरं सीआवहारे जिणपूआधूवकरणे नेवेज्जपाए दुहाहरणाहारपाए संलग्ग तं अणुमोएमि कल्लाणेणं अजिनंदेमि ॥ ' " जो मे अग्नीकाय गत अग्नि इंगाला मुर्मुर ज्वाला धूम्रसहित विद्युत् उल्का रूप शरीर होके, ठंडी दूर करनेमें, जिनराजके आगे धूप करनेमे, पूजाके उप

योगमें, नैवेद्य काममें, क्षुधाहरण आहार पाणिके उपयोगमें, लगा होउं तिनकों अनु मोदताहुं कल्याण कारक जाणके आनंदित होताहुं " फिर परमेष्ठि मंत्र पढके ।

"॥ जं मे वाउकायगयस्स वाउझंझासासरूवं सरीरं पाणिवहे पाणिसंघट्टणे पावबद्धणे मिछत्तपोसणे ठाणे संलग्गं तं निंदामि गरिहामि वोसिरामि

" जो में वायु कायगत शुद्धवायु झंझावायु श्वास रूप वायु शरीर होके प्राणि वधमें, प्राणि संघातनमें, पापवर्द्धनमें, मिथ्यात्व पोषणके कारणमें, लगा होउं तिनकों निंदा गर्हा करके त्यागताहुं ॥ "

"॥ जं मे वाउकायगयस्स वाउझंझासासरूवं सरीरं पाणिरक्खणे पाणिजीवणे साहूण वेयावच्चे धम्मावहारे संलग्गं तं अणुमोएमि कल्लाणेणं अभिनंदेमि ॥ जो में वायुकायगत, शुद्धवायु झंझावायु श्वास वायुरूप शरीर होके प्राणि रक्षणके कार्यमे, प्राणि जीवनके कारणमें, साधुओंकी वैय्यावच्चके काममें, गर्मीकी शांतिके कारणमें, लगाहोउं तिनकों अनु मोदताहुं, कल्याण कारक जाणके आनंदित होता हुं " फिर परमेष्ठिमंत्र पढके ।

"॥ जं मे वणस्सइकायगयस्स मूलकठवल्लिपत्त पुप्फफलवीअरसनिज्जासरूवं सरीरं पाणिवहे पाणिसंघट्टणे पाणिपीडणे पाववद्धणे मिछत्तपोसणे ठाणे

संलग्गं तं निंदामि गरिहामि वोसिरामि ॥ जो में वनस्पती कायगत मूल छाल काष्ट पत्र पुष्प फल बीज रस थम्म रूप शरीर होके प्राणि वधमे, प्राणि संघातनमें, पाणि पीडनमे, पाप वर्द्धनमें, मिथ्यात्व पोषक स्थानोमें, लगा होउं तिनको निंदा गर्हा करके त्याग करता हुं"

"॥ जं मे वणस्सइकायगयस्स मूलकट्ठछल्लिपत्त पुप्फफलबीअरसनिज्जासरूवं सरीरं बुहाहरणेसु अरिहंतचेइअपूयणेसु धम्मट्ठाणेसु नेवज्जकरणेसु जंतुरक्खणट्ठाणेसु संलग्गं तं अणुमोएमि कल्लाणेणं अभिनंदेमि॥ जो में वनस्पती कायगत मूल काष्ट छाल पत्र पुष्प फल बीज रस थम्म रूप शरीर होके क्षुधादूर करनेंमे, अर्हत् प्रतिमाके पूजनमें, धर्म स्थानमें, नैवद्य करनेमे, जीव रक्षाके कारणमें, लगा होउ तिन को अनु मोदताहुं कल्याण कारक जाणके आनंदित होता हुं" फिर परमेष्टिमंत्र पढके।

"जं मे तसकायगयस्स रसरत्तमंसमेअअट्ठिमज्जा सुक्कचम्मरोमनहनसारूवं सरीरं पाणिवहे पाणिसंघट्टणे पाणिपीडणे पाववद्धणे मिच्छत्तपोसणे ठाणे संलग्गं तनिंदामि गरिहामि वोसिरामि ॥ जो में त्रस काय गत रस रुधीर मांस मज्जा मेद शुक्र चर्म, रोम नख नसा रूप शरीर होके प्राणि वधमें, प्राणि संघातनमें, प्राणि पीडनमे, पाप वर्द्धनमे, मिथ्यात्व

पोषणमे लगा होउं तिनकों निंदापूर्वक त्यागताहुं "

" जं मे तसकायगयस्स रसरत्तमंसमेअअट्ठि मज्जासुक्कचम्मरोमनहनसारूवं सरीरं अरिहंतचेइएसु अरिहंतबिंबेसु धम्मठाणेसु जंतुरक्खणठाणेसु धम्मोवगरणेसु संलग्गं तं अणुमोएमि कल्लाणेणं अभिनंदेमि ॥ जो में त्रस काय गत रस रुधीर मांस हाड चरबी शुक्र चर्म रोम नखरूप शरीर होके अर्हच्चैत्यमें, अर्हत् बिंबमें, धर्म स्थानमे, जंतु रक्षामे, धर्मो पकरणमें लगा होउं तिनकों अनु मोदके आनंदित होता हुं ॥ " फिरपरमेष्ठिमंत्र पढके ।

" ॥ जं मए इह भवे, मणेणं वायाए काएणं दुट्ठं चिंतिअं, दुट्ठं भासिअं, दुट्ठं कयं, तं निंदामि गरिहामि वोसिरामि ॥ जो मेनें इह भवमें अनंत भव भ्रमणमें मन वचन काया करके दुष्ट विचार कियाहो दुर्वचन बोलेहो, दुष्ट प्रवृत्ति करीहो तिन कों निंदा पूर्वक त्याग करताहुं "

" ॥ जं मए इह भवे, मणेणं वायाए काएणं सुट्ठु चिंतिअं, सुट्ठु भासिअं, सुट्ठु कयं, तं अणुमोणुमोएमि कल्लाणेणं अभिनंदेमि ॥ जो मेने इह भवमें, अनंत भव भ्रमणमें, मन वचन काया करके श्रेष्ट विचार कियाहो, श्रेष्ट भाषा बोली हो, श्रेष्ट प्रवृत्ति करीहो तिनकी अनु मोदना करताहुं, कल्याण कारक जानके आनंदित होताहुं ॥ "

यहां पहिलां समारोपितसम्यक्त्व व्रतको भी फिर सम्यक्त्व व्रतारोप करना. और जिसको पहिलें सम्यक्त्व व्रतारोप न करा होवे, तिसको भी अंतकालमें सम्यत्व व्रतारोप करना योग्य है । जिसको पहिलां व्रतारोप करा होवे, तिसको इस अंत समयमें एकशोचौवीस अतिचारोंकी आलोचना करानी. । वे अतिचार आवश्यकादि सूत्रोंसें जान लेने ' पीछेआलोचनाविधि करना, सो प्रायश्चित्तविधिसें जानना. । पीछे गुरु सर्व संघसहित वासअक्षतादि ग्लानके शिरमें निक्षेप करे ॥

॥ इति अंत्य संस्कारे आराधना विधिः ॥

पीछे ग्लान (रोगी–बीमार) क्षमाश्रमण परमेष्टिमंत्र पाठपूर्वक कहे ॥

आयरियउवज्झाए, सीसे साहिम्मिए कुलगणे अ ॥
जे मे कया कसाया, सव्वे तिविहेण खामेमि ॥ १ ॥
सव्वस्स समणसघस्स, भगवओ अजलि करियसीसे॥
सव्वं खमावइत्ता, खमामि सव्वस्स अहयंपि ॥ २ ॥
सव्वस्स जीवरासिस्स,भावउ धम्म निहियनियचित्तो॥
सव खमावइत्ता, खमामि सव्वस्सअहयंपि ॥ ३ ॥

" ॥ भयवं जं मए चउगइगएणं देवा तिरिआ मणुस्सा नेरइआ चउकसाओवगएण पंचिंदिअवसट्टेणं इहम्मि भवे अन्नेसु वा भवग्गहणेसु मणेणं वायाए काएणं दूमिआ संताविआ अजिताइया तस्स

मिछामि डुक्कडं जेहिं अहं अप्तिदूमिओ संताविओ अप्तिहओ तमहंपि खमामि ॥"

पीछे गुरु दंडकसहित इन तीनों गाथाका विस्तारसें व्याख्यान करे। पीछे ग्लान, गुरु साधु साध्वी श्रावक श्राविकाओंको प्रत्येकक्षामणां करे. । यहां गुरुओंको वस्त्रादि दान, और संघको पूजासत्कार जानना. ॥ इत्यंतसंस्कारे क्षामणाविधिः ॥

अथ मृत्युकालके निकट हुए, ग्लान, पुत्रादिकोंसें जिनचैत्योंमें महापूजा स्नात्रमहोत्सव ध्वजारोपादि करावे, चैत्यधर्मस्थानादिमें धन लगावे. । पीछे परमेष्ठिमंत्रोच्चारपूर्वक पढे. ।

जे मे जाणंतु जिणा, अवराहा जेसु २ ठाणेसु ॥
तेहं आलोएमि, उवठिओ सव्वकालंपि ॥ १ ॥
छउमत्थो मूढमणो, कित्तियमित्तंपि संभरइ जीवो ॥
जं च न सुमरामि अहं, मिछामि डुक्कडं तस्स ॥२॥
जं जं मणेण बद्धं, जं जं वायाइ भासिअं किंचि ॥
जं जं काएण कयं, मिछामि दुक्कडं तस्स ॥ ३ ॥
खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे ॥
मित्ती मे सव्वभूएसु वेरं मज्झ न केणइ ॥ ४ ॥

पीछे तीन नमस्कार पाठपूर्वक कहें ।

"॥ चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपन्नत्तो धम्मो, मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगु

त्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपन्नत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पवज्जामि, अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि, केवलिपन्नत्तं धम्मं, सरणं, पवज्जामि ॥"

यह पाठ तीन चार पढे। पीछे गुरुके वचनसें अष्टादश (१८) पापस्थानकोंको वोसरावे यथा.

"॥ सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि। सव्वं मुसावायं पच्चक्खामि। सव्वं अदिन्नादाणं प०। सव्वं मेहुणं प०। सव्वं परिग्गहं प०। सव्वं राईभोअणं प०। सव्वं कोहं प०। सव्वं माणं प०। सव्वं मायं प०। सव्वं लोहं प०। पिज्जं प०। सव्वं दोसं कलहं अब्भक्खाणं अरईरईपेसुन्नं परपरिवायं मिच्छादंसणसल्लं इच्चेइआइं अठारस पावठाणाइं डुविहं तिविहेणं वोसिरामि अपच्छिमम्मि ऊसासे तिविहं तिविहेण वोसिरामि॥"

पीछे गीतार्थगुरु, श्रीयोगशास्त्रके पांचमे प्रकाशके कथनसें, श्रोर कालप्रदीपादिशास्त्रके कथनसें, ग्लानके आयुका क्षय जानके* (जक्तप्रत्याख्यानप्रकीर्णक शास्त्रमें लिखा है कि, यदि कोइ तथ्यज्ञानी कहे, अथवा कोइ सम्यग्दृष्टी देवता कहे कि, अमुकदिन तेरा अवश्य मरण है, तबतो अपना संहननधृतिबल जानके यावत् जीवका अनशन करना. परंतु, जो कोइ मरणदिनके निश्चयविना यावत् जीवका अनशन करे, करावे, सो आत्मघाती साधुश्रावक

ग्लान, शक्रस्तव पढके तीनवार परमेष्टिमंत्रको पढके गुरुके मुखसें उच्चरे. । यथा.

" ॥ जवचरिमं पच्चरकामि तिविहंपि आहारं असणं खाइमं साइमं अन्नझणाजोगेणं सहसागारेणं महत्तरागारेणं सवसमाहिवत्तियागारेणं वोसिरामि॥"

इति सागारानशनम् ॥

अंतर्मुहूर्त्त शेप रहे हूए, निरागार अनशन कराना॥ यथा ॥

" ॥ जवचरिमं निरागारं पच्चरकामि, सवं असणं, सवं पाणं, सवं खाइमं, सवं साइमं, अन्नाझणाजोगेणं, सहसागारेणं, अईयं निंदामि, पक्रिपुन्नं संवरेमि, अणागयं पच्चरकामि, अरिहंतसरिकयं, सिद्धसरिकयं, साहुसरिकयं देवसरिकयं, अप्पसरिकयं, वोसिरामि ॥"

जइ मे हुज्ज पमाउं, इमस्स देहस्स इमाइ वेलाए ॥ आहारमुवहिदेहं, तिविहं तिविहेण वोसिरिअं ॥१॥

तब गुरु "निझारगपारगो होहि" ऐसें कहता हुआ संघसहित वासअक्षतादि ग्लानके सन्मुख क्षेप करे. । शांतिके वास्ते 'अझावयंमि उसहो' इत्यादि स्तुति पढे. और, 'चवणं जम्मणजूमी' इत्यादि स्तव पढे. । गुरु निरंतर ग्लानके आगे तीनजुवनके चैत्योंका व्याख्यान करे, अनित्यतादि वारां जावनाका व्याख्यान करे, अनादिजवस्थितिका व्याख्यान करे, अनशनके फलका व्याख्यान करे. । और

संघ गीतनृत्यादि उत्सव करे. । ग्लान जीवितमरण की इछाको त्यागके समाधिसहित रहे. । पीछे अंतर्मुहूर्तके आयां, ग्लान "सवं आहारं, सवं देहं, सवं उवहिं, वोसिरामि" ऐसें कहें । पीछे ग्लान पंचपरमेष्टिस्मरणश्रवणयुक्त शरीरको त्यागे ॥

॥ इति अनशनविधिः ॥

॥ अग्निसंस्कार विधि. ॥

मरणकालमें ग्लानको कुशकी शय्याऊपर स्थापन करना । " । जन्ममरणे जूमावेव इति व्यवहारः । "

अथ सर्वजावके जोक्ता कर्मके जोकनेवाले चेतनारूप जीवके गये हुए, अजीव पुफलरूप तिसके शरीरको सनाथता ख्यापनार्थ, तिसके पुत्रादिकोंके वास्ते, तीर्थसंस्कारविधि कहते हैं । सर्व ब्राह्मणको शिखा वर्जके शिर दाढी मूछ मुंमन कराना चाहिये, कितनेक क्षत्रियवैश्यको जी कहते हैं. । तथा शवका संस्कार सर्व स्ववर्ण ज्ञातियोंने करना, अन्यवर्ण ज्ञातिवालोंने तिसका स्पर्श नही करना । पीछे गंध तैलादिसें और जले गंधोदकसें शवको स्नान करना, गंधकुंकुमादिसें विलेपन कराना, मालापहिराना स्वस्वकुलोचित वस्त्राजरणासें विजूपित करना शूद्र जातिकों सर्वथा मुंमन नही. । पीछे नवीन काष्टकी पगविनाकी कुश संथरी जले वस्त्रसें ढांकी

हुई शय्याके ऊपर, शय्याके उपकरणसहित, शवको स्थापन करना। यहांगृहस्थके मृत्युनक्षत्रके नक्षत्रपूतलेका विधान, कुशपुत्रादिविधि यतिकीतरें जानना. नवरं कुशपुत्रक गृहस्थवेषधारी करणे * वर्णानुसार तिसके ऊपर नानाविध वस्त्र सुवर्ण मणि विचित्र वस्त्रका करा प्रासाद (मांडवी) स्थापन करना। पीछे स्वज्ञातीय चारजणे परिजनके साथ स्कंधऊपर उठाए शवको, स्मशानमें ले जावे.। तहां उत्तरभागमें शवका शिर रखके चितामें स्थापन करके, पुत्रादि अग्निसें संस्कार करे.। अन्न नही खानेवाले बालकोंको भूमिसंस्कार करना। तहां प्रेतप्रतिग्राहियोंको दान देना। पीछे सर्व स्नान करके, अन्यमार्ग होकर अपने घरको आवे. तीसरे दिनमें चिताभस्मका, पुत्रादि नदीमें प्रवाह करावे.। तिसके हाड तीर्थोंमें स्थापन करे.। तिसके अगले दिनमें स्नान करके शोक दूर करे.। जिनचैत्योंमे जाके, परिजनसहित जिनबिंबको विना स्पर्शे, चैत्यवंदन करे.। पीछे उपाश्रयमें आके गुरुको नमस्कार करे. गुरु भी संसारकी अनित्यतारूप

---

* रोहिणी, विशाखा, पुनर्वसु, उत्तराषाढा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तरा भाद्रपद, ए छ नक्षत्रमेंसें कोइभी एक नक्षत्र मरण समय होय तो दर्भके दो पुतले बनाके नीनामीके साथ रखणा. जेष्टा, आर्द्रा, स्वाती, शतभिषा, भरणी, अश्लेषा ए छ नक्षत्रमेंसें कोइभी होय तो पुतले न करना. और दुसरे १९ नक्षत्रमेंसें कोइ नक्षत्र होय तो एक पुतला करना.

धर्मदेशना करे. । पीछे स्वस्वकार्यमें सर्व तत्पर होवे. । अंत्य आराधनासें लेके, शोक, दूर करनेतक मुहूर्त्तादि न देखना, अवश्य कर्त्तव्य होनेसें । यमलयोगमें, त्रिपुष्करयोगमें, मृगशिर । चित्रा । धनिष्ठा । मंगल । गुरु । शनि । २ । १२ । ७ । इतित्रयाणां योगे यमलयोगः ॥ कृत्तिका । पूर्वाफाल्गुनी । विशाखा । उत्तराषाढा । पूर्वाभाद्रपदा । पुनर्वसु । मंगल । गुरु । शनि २ । १२ । ७ । इति त्रिपुष्करयोगः ॥ कृत्तिका । विशाखा । भरणी । इति मिश्रनक्षत्राणि ॥ भरणी । मघा । पूर्वाफाल्गुनी पूर्वाषाढा । पूर्वाभाद्रपदा इति क्रूरनक्षत्राणि ॥ रोहिणी । उत्तराफा० । उत्तराषा० । इति ध्रुवनक्षत्राणि ॥ आर्द्रा, मूल, अनुराधा, मिश्र, क्रूर और ध्रुव, इन नक्षत्रोमें प्रेतक्रिया नही करनी' । धनिष्ठासें लेके पांच नक्षत्रोंमें तृणकाष्ठादि संग्रह नही करना । शय्या, दक्षिणदिशकी यात्रा, मृतक कार्य, गृहोद्यम, (घर बनाना) आदि नही करना. । रेवती, श्रवण, अश्लेषा, अश्विनी, पुष्प, हस्त, स्वाति मृगशिर, इन नक्षत्रोंमें, और सोम, गुरु, शनी, इन वारोंमें प्रेतकर्म करना बुद्धिमान् कहते है. । स्वस्व वर्णके अनुसार जन्ममरणका सूतक एकसदश होता हैं ब्राह्मण,क्षत्रीय,वैश्यकों पुरुषोका दश और स्त्रीका एकादश दिन सूतक होता हे. परदेशका जन्म मरण सूतक धार्मिक